संयुक्तांक

ISSN 2231-1351

PADCHINHA

पीअर रिव्यूड एंड रेफरीड जर्नल

पदचिन्ह

वर्ष -10 अंक-2 जुलाई-दिसंबर, 2021

Multidisciplinary Peer Reviewed
& Refereed Journal

R.N.I. UPHIN/2011/37086 ISSN 2231-1351

संयुक्तांक **पीअर रिव्यूड एंड रेफेरीड जर्नल**

पदचिन्ह

जुलाई-दिसंबर, 2021 वर्ष - 10 अंक - 2

संपादक

डॉ. अजय परमार

B-30/239 नगवां, लंका, वाराणसी-221005

padchinhahindi@gmail.com

सह-संपादक

डॉ. पंकज कुमार सिंह

पचपोखरी, रोहतास (सासाराम)

पिन- 802217 मो. 9823696685

gandhikhadi@gmail.com

© पदचिन्ह में व्यक्त विचार और सर्वाधिकार लेखकों के अपने हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक व संपादक-मंडल की सहमति अनिवार्य नहीं है। उक्त सभी पद अवैतनिक हैं। किसी भी वाद-विवाद का न्याय क्षेत्र वाराणसी होगा।

संपादक-मंडल/ रेफेरीड बोर्ड

प्रो. प्रेमनारायण सिंह
शिक्षाशास्त्र विभाग
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी (उ. प्र.) पिन-221002

प्रो. नृपेन्द्र प्रसाद मोदी
अधिष्ठाता, संस्कृति विद्यापीठ
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा (महाराष्ट्र). पिन-442001

डॉ. मनोज कुमार राय
अध्यक्ष, गांधी एवं शांति अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा (महाराष्ट्र). पिन-442001

डॉ. गोविन्द प्रसाद वर्मा
सहायक प्रोफेसर, मानविकी और भाषा संकाय
महात्मा गाँधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी
बिहार पिन-845401

डॉ. उमेश कुमार सिंह
म. गां. फ्यूजी गुरुजी सामाजिक विज्ञान अध्ययन केंद्र
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा (महाराष्ट्र). पिन-442001

डॉ. रणजीत कुमार
सहायक प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग
अपेक्स विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान) पिन - 302018

डॉ. प्रदीप त्रिपाठी
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक.
(सिक्किम) पिन-737102

डॉ. अमरेन्द्र त्रिपाठी
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
उत्तर प्रदेश, पिन-211002

डॉ. परिमल प्रियदर्शी
अनुसंधान अधिकारी, शोध सहायता प्रकोष्ठ
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा (महाराष्ट्र). पिन-442001

डॉ. धीरेन्द्र कुमार राय
पत्रकारिता एवं जनसंप्रेषण विभाग
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005

डॉ. अशीष कुमार
संपादक, सृजन समय
बहुद्देशीय सामाजिक संस्था, वर्धा - 442001

डॉ. श्रीकांत जायसवाल
समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा (महाराष्ट्र). पिन-442001

सलाहकार समिति

डॉ. राजीव रंजन गिरि
हिंदी विभाग, राजधानी कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली 110015

डॉ. निशीथ राय
मानवविज्ञान विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा (महाराष्ट्र). पिन-442001

पदचिन्ह के लिए प्रकाशक अजय परमार, बी.- 30/239, नगवां, लंका वाराणसी द्वारा प्रकाशित और सूर्या आफसेट, 30, विवेकानंद कालोनी, मलदहिया, वाराणसी में मुद्रित। संपादक : अजय परमार

पदचिन्ह

जुलाई-दिसंबर, 2021 वर्ष - 10 अंक - 2

अनुक्रम

	गांधी जी का जंतर		पृष्ठ सं.
1.	बुंदेली और हिंदी क्रिया पदबंधों एवं घटकों का व्यतिरेकी विश्लेषण	**_धर्मेन्द्र पटेल**	05-13
2.	गाँधी विनोबा और भारत की आत्मनिर्भरता का स्वप्न	**_डॉ. शंभू जोशी**	14-23
3.	ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं का शिल्पगत मूल्यांकन	**_प्रिया सिंह**	24-29
4.	खेल केंद्रित फ़िल्मों का प्रभाव	**_सचिन प्रताप सिंह**	30-40
5.	आखिरी कलाम : भारतीय राजनीति और समाज का सच	**_शिव कुमार मेहता**	41-43
6.	स्वछन्दतन्त्र के चतुर्थ पटल में वर्णित नादसाधना की दार्शनिक मीमांसा	**_डॉ. प्रदीप**	44-51
7.	कुबेरनाथ राय के ललित निबन्धों में महर्षि वाल्मीकि का जीवन-दर्शन…	**_डॉ. वेदवती राठी**	52-56
8.	Critical Analysis on Laws Relating to Insider Trading	**_Adv. Ashish Jayprakash Anand**	57-62
9.	Corporate Social Responsibility	**_Mr. Prakash Sharma**	63-76
10.	W.B. YEATS A VISIONARY	**_Dr. Vidyawati Yadav**	77-81
11.	बहमनी नगर कला शैली का विकास	**_लुसी कुमारी**	82-86
12.	संस्कृतसाहित्ये नाट्यस्योद्भवो विकासक्रमश्च	**_डॉ. जगदीश नारायण तिवारी**	87-91
13.	भोजपुरी में संज्ञाओं के रूपसाधक प्रत्यय	**_धनन्जय सिंह**	92-100
14.	20 वीं सदी का महाठग: नटवर लाल	**_ डॉ. मन्नू राय**	101-105
15.	महादेवी वर्मा के काव्य की भाषा प्रतीक	**_डॉ. मंजु लाल**	106-111
16.	गांधी विचार का प्रकाश	**_प्रो. (डॉ.). नृपेन्द प्रसाद मोदी**	112-115
17.	महात्मा गांधी जी के स्वच्छता संबंधित विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन	**_रवि कुमार एवं इमरान शाह**	116-124
18.	घरेलू हिंसा और लैंगिक भेदभाव को खत्म करने के लिए समुदाय	**_डॉ. प्रशांत एन. शंभरकर**	125-130
19.	भारतीय ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता के बाधक कारकों…	**_प्रेरित बाथरी**	131-136
20.	वैश्विक न्याय एवं नैतिक अभिप्रेरणा	**_अंजु**	137-141

Notes for Authors

गांधीजी का जंतर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तब तो यह कसौटी आजमाओ:

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू पा सकेगा? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

- महात्मा गांधी

बुंदेली और हिंदी क्रिया पदबंधों एवं घटकों का व्यतिरेकी विश्लेषण

धर्मेन्द्र पटेल*

dp24757@gmail.com

सारांश (Abstract)

प्रस्तुत शोध-पत्र के माध्यम से बुंदेली एवं हिंदी भाषा में प्रयुक्त वाक्य संरचना के क्रिया पदबंधों का व्यतिरेकी विश्लेषण किया गया है। दोनों भाषाओं की क्रिया पदबंधों की संरचना में कहीं समानता है तो कहीं विसमता की स्थिति देखने को मिलती है, जिसके आधार पर दोनों भाषाओं के बीच व्यतिरेक का अध्ययन किया जाएगा। भाषा परिवार की दृष्टि से दोनों ही भाषाएँ एक ही भाषा परिवार की हैं। किंतु दोनों भाषाओं के शब्दभेद एवं व्याकरणिक संरचना में भी भिन्नता पाई गई है। व्यतिरेकी विश्लेषण की प्रक्रिया को तुलनात्मक अध्ययन के अंतर्गत किया जाता है, इसलिए यहां पर बुंदेली एवं हिंदी भाषा की वाक्य संरचना में प्रयुक्त क्रिया पदंबधों के घटकों के बीच तुलना करते हुए विभिन्न व्यतिरेक को रेखांकित भी किया गया है, जिनका विस्तृत विश्लेषण इस शोध-पत्र के माध्यम से किया गया है।

मुख्यशब्द (Keywords): *बुंदेली-हिंदी क्रिया, पदबंध, क्रियापदबंध, वाक्य संरचना, व्यतिरेकी विश्लेषण।*

प्रस्तावना (Introduction)

हिंदी और बुंदेली एक ही भाषा परिवार की भाषाएं हैं। इसलिए दोनों भाषाओं की क्रिया पदबंधों की संरचना लगभग एक समान है, लेकिन इनके रूप अलग-अलग हैं। इन दोनों भाषाओं की लिपि देवनागरी है। बुंदेली और हिंदी वाक्य संरचना में प्रयुक्त क्रिया पदबंधों में समानताएं और असमानताएं दोनों देखने को मिलती हैं, जिसके आधार पर दोनों भाषाओं के बीच व्यतिरेकी अध्ययन किया जा सकता है। यहां पर बुंदेली और हिंदी भाषा में प्रयुक्त क्रिया पदबंध का विश्लेषण कर उनके बीच व्यतिरेक को इस शोधपत्र के माध्यम से रेखांकित किया जाएगा। बुंदेली बुंदेलखंड की मूल भाषा है, इसके अलावा यहाँ हिंदी, अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, बघेली आदि भाषाएँ भी प्रयोग की जाती हैं। विदिसा, झांसी, जालौन, ग्वालियर, सागर, नरसिंहपुर, दमोह, सिवनी एवं होशंगाबाद आदि क्षेत्रों में यह व्याप्त है। अधिकांश क्रिया रूपों में हिंदी और बुंदेली में मात्राओं का

* **डॉक्टरल फेलोशिप, भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के सौजन्य से**
पी-एच.डी शोधार्थी (भाषा प्रौद्योगिकी), महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

रूपांतरण देखने को मिलता है, जिससे उन शब्दों का रूप परिवर्तन हो जाता है, जैसे- करना-करनै/ करबौ, उठना- उठनै, सोना–सोनै, बैठना-बैठनै आदि। बुंदेली बोलने वाले लोगों पर हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी व अन्य भारतीय भाषाओं का प्रभाव तेजी से बढ़ रहा हैं, जिसके कारण वहां की भाषा मिश्रित हो गई है।

क्रिया पदबंध

किसी भी भाषा की वाक्य संरचना में क्रिया पदबंधों का केंद्रीय स्थान होता है। वाक्य में क्रिया ही वह भाग है जो पूरे वाक्य की संरचना को नियंत्रित करती है। किसी वाक्य में क्रिया के साथ जितने भी घटक जुड़कर आते हैं, वे क्रिया पदबंध का निर्माण करते हैं। क्रिया पदबंध में मुख्यतया दो घटक मौजूद होते हैं - मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया। मुख्य क्रिया द्वारा कोशीय अर्थ का बोध होता है तथा सहायक क्रिया से कार्य, व्यापार, काल, वचन, पक्ष, वृत्ति एवं वाच्य आदि से संबंधित व्याकरणिक सूचनाएं मिलती हैं।

वाक्य	बुंदेली वाक्य	हिंदी वाक्य
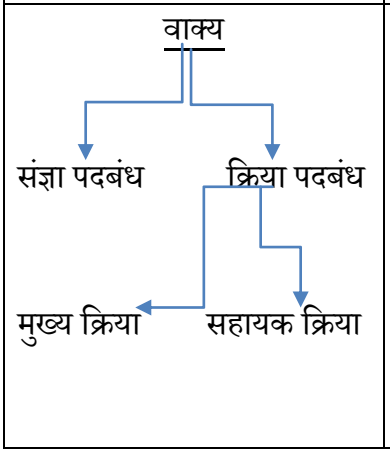	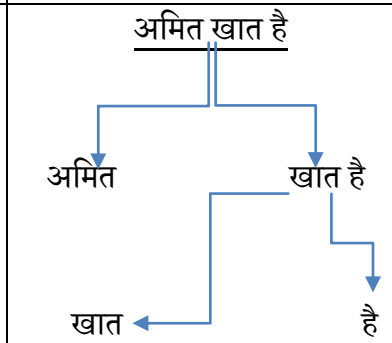	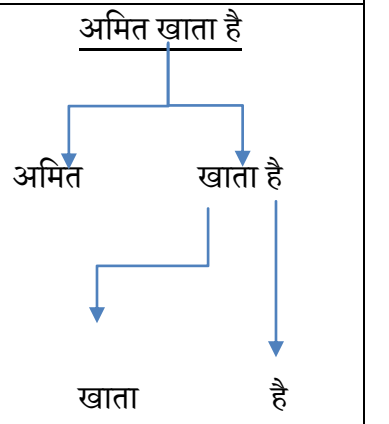

यद्यपि बुंदेली और हिंदी की मुख्य क्रियाओं में कुछ समानताएँ मौजूद है, किन्तु सहायक क्रियाओं में अत्यधिक भिन्नता पाई जाती है-

जैसे- बुंदेली में - **बौआ गऔं। (आ गऔं-** क्रिया पदबंध)

हिंदी में - **वह आ गया। (आ गया** - क्रिया पदबंध)

- उपरोक्त वाक्य में मुख्य क्रिया **'आ'** और सहायक क्रिया **'गया'** है, लेकिन बुंदेली भाषा में मुख्य क्रिया **'आ'** एक समान है और सहायक क्रिया **'गऔं'** है, जो हिंदी की सहायक क्रिया से पूर्णतःभिन्न है।

- दोनों भाषाओं के कुछ क्रियापदबंध रूपों को तुलनात्मक रूप में इस प्रकार से देख सकते हैं-

क्रम सं.	हिंदी क्रिया पदबंध	बुन्देली क्रिया पदबंध - समान /असमान
1.	आ+**गया**	आ +**गओं**
2.	कर+**लेगें**	कर+**लेबी**
3.	पढ़+**ने लगा**	पढ़+**न लगौ**
4.	जा+**ने लगे**	जा+**न लगे**
5.	खा+**ने देंगे**	खा+**न देहे**
6.	दौड़+**ता है**	दौर+**त है**
7.	**देती** है	**देत** है
8.	आ+**या था**	आ+**ओ हतो**
9.	**बुला रहा है**	**टेर रओ है**
10.	सो **गया**	सो +**गओ**

बुंदेली-हिंदी में क्रिया पदबंध

बुंदेली एवं हिंदी दोनों ही भाषाओं में क्रिया पदबंध मुख्य क्रिया एवं सहायक क्रिया के योग से बनती है।

क्रिया पदबंध= मुख्य क्रिया + सहायक क्रिया

मुख्य क्रिया = 1. क्रिया पद का मुख्य अर्थ प्रदान करना

2. मुख्य क्रिया के द्वारा कोशगत एवं कोशीय अर्थ को उद्घाटित करना

3. कर्ता तथा कर्म के मूल कार्य को मुख्य क्रिया प्रकट करती है

- मुख्य क्रियाएँ, जिसके द्वारा कार्य होने का पता चले- **कार्यद्योतक-** (मैं पढ़ रहा हूँ /मों पढ़ रओ हों)
- जिसके द्वारा किसी घटना का बोध हो- **घटनाद्योतक** (बच्चा रो दिया/ मोड़ा रो दओ)

- जिसके द्वारा अस्तित्व का बोध हो- **अस्तित्वद्योतक** (पूरे लोग छत पर बैठे हैं/ सभई जने अटारी पेबिराजे हैं)

बुंदेली एवं हिंदी दोनों ही भाषाओं में क्रिया पदबंध मुख्य क्रिया एवं सहायक क्रिया के योग से बनती है। **जैसे-**

बुंदेली	**हिंदी**
अमित खाना **खात है।**	**अमित खाना खाता है।**
मीना **नाचत है।**	**मीना नाचती है।**
आकाश **पढ़त रहत है।**	**आकाश पढ़ता रहता है।**
रोहन **खेलत है।**	**रोहन खेलता है।**
नीता **दौरत है।**	**नीताता दौड़ती है।**
श्याम **काम करत है।**	**श्याम काम करता है।**
सीता खाना **खात है।**	**सीता खाना खाती है।**

उपर्युक्त दोनों भाषा में मुख्य क्रिया के बाद ही सहायक क्रिया प्रयुक्त होती है। अर्थ एवं रूप के स्तर पर बुंदेली एवं हिंदी क्रिया पदबंध की संपूर्ण संरचना को हम निम्न प्रकार से समझ सकते हैं:

मुख्य क्रिया : बुंदेली एवं हिंदी भाषा की मुख्य क्रिया की मूल धातुएं लगभग एक समान रूप में ही प्रयुक्त होती हैं, लेकिन इनमें प्रत्यय भिन्न-भिन्न रूप में प्रयुक्त होते हैं- **जैसे-**

बुंदेली मूल धातु	प्रत्यय	हिंदी मूल धातु	प्रत्यय
कट	बौ	कट	ना
खा	बौ	खा	ना
सो	बौ	सो	ना
खेल	बौ	खेल	ना
पीट	बौ	पीट	ना

इस प्रकार मुख्य क्रिया को संरचना के आधार पर निम्न भागों में वर्गीकृत किया गया है-

1. **सरल क्रिया : एक मुख्य तथा एक समापिका क्रिया/ सहायक क्रिया के द्वारा बना रूप सरल क्रिया कहलाती है।** हिंदी की तरह बुंदेली भाषा में क्रिया की मूल धातु से बनने वाली अधिकांश क्रियाएं एक ही शब्द में प्रयुक्त होती हैं, जिन्हें सरल क्रिया कहा जाता है- जैसे :

बुंदेली सरल क्रिया	हिंदी सरल क्रिया
पढ़बौ	पढ़ना
पढाबौ	पढ़ाना
खाबौ	खाना
देबौ	देना

2. मिश्र क्रिया:- इस क्रिया का निर्माण संज्ञा/सर्वनाम /विशेषण/क्रियांगी+ क्रिया कर या क्रिया हो से होता है

बुंदेली तथा हिंदी दोनों भाषाओं में मिश्र क्रिया देखने को मिलती है। मिश्र क्रिया का निर्माण संज्ञा/ विशेषण/ क्रियांगी शब्दों के बाद 'करना' और 'होना' के योग से ही बनती हैं, लेकिन बुंदेली भाषा में कभी-कभी हिंदी के समानांतर शब्द नहीं होने के कारण मिश्र क्रिया के रूप में बदलाव देखने को पर्याप्त मात्रा में मिलता है जैसे :

बुंदेली मिश्र क्रिया	हिंदी मिश्र क्रिया
नाई करबौ	मना करना
पता होबौ	पता होना
ब्याह करबौ	शादी करना
इजहार करबौ	इजहार करना
सजा दिज्जो	तैयारकरना
राह देखियो	इंतजार करना

3. यौगिक क्रिया : वाक्य में जब क्रिया संरचना के द्वारा दो कोशीय अर्थ का बोध हो तब इस प्रकार की क्रिया संरचना यौगिक क्रिया होती है- जैसे:

बुंदेली यौगिक क्रिया	हिंदी यौगिक क्रिया
खा आऔ	खा आया
ले लई	खरीद दी
ले गऔ	ले गया

4. संयुक्त क्रिया : संयुक्त क्रिया की रचना दो क्रियाओं के योग से होती है, जिनमें से पहली क्रिया हमेशा धातु रूप में होती है और दूसरी क्रिया में काल-पक्ष आदि के रूप-प्रत्यय जुड़ते हैं। बुंदेली भाषा में भी हिंदी की तरह ही संयुक्त क्रिया प्रयुक्त होती है। हिंदी की तुलना में बुंदेली भाषा की संयुक्त क्रिया के दूसरी क्रिया में अंतर देखने को मिलता है- जैसे:

बुंदेलीसंयुक्त क्रिया	**हिंदी संयुक्त क्रिया**
फेकदई	फेक दी
रोन लगी	रोने लगी
खा लई	खा ली
आ गऔ	आ गया
फटामटाद-औ	चीर चार दिया-
मार लई	मार ली

सहायक क्रिया- क्रिया पदबंध के अंर्तगत क्रिया पद में मुख्या क्रिया के अतिरिक्त जो कुछ बचा या शेष हो सहायक क्रिया कहालती है। वाक्य में सहायक क्रिया व्याकरणिक अर्थ जैसे- लिंग वचन काल पक्ष वृत्ति वाच्य की सूचनाएं देती हैं। यहाँ पर मुख्य रूप से काल, पक्ष वृत्ति की चर्चा की गई-

- **बुंदेली एवं हिंदी में काल संरचना व्यवस्था :**

काल				
बुंदेली			**हिंदी**	
वर्तमानकाल	है	राम जात है	है	राम जाता है
भूतकाल	तो	राम पढ़त तो	था	राम पढ़ता था
भविष्यतकाल	जैहे	राम अपन घरे जैहे	एगा	राम अपने घर जाएगा

➢ **बुंदेली एवं हिंदी में पक्ष संरचना व्यवस्था :**

पक्ष				
बुंदेली			**हिंदी**	
अभ्यासद्योतक	त+रत	बौ सोत रत है	ता +रह	वह सोता रहता है
	ऊत +रत	बौ सोऊत रत है	या +रह	वह सोया रहता है
	ऊत +कर	बौ सोऊत करत है	या+कर	वह सोया करता है
वर्धमानद्योतक	त+चल	बौ लिखत चल है	ता +चल	वह लिखता चलेगा
	त+जै	बौ लिखत जैहे	ता +जा	वह लिखता जाएगा
	त+आ+रऔ	बौ लिखत चलो आ रऔ है	ता+आ+रहा	वह लिखता चला आ रहा है
समाप्तिबोधक	+चुक	बौखा चुकौ है	+ चुक	वह खा चुका है
	+रख	ऊने खा रखौ है	+ रख	उसने खा रखा है
आरंभद्योतक	न+लग	बौ जान लगौ	ने+लग	वह जाने लगा
आरंभपूर्वद्योतक	बे +वारा	बौ जाबे वारो है	ने+वाला	वह जाने वाला है

➢ **बुंदेली एवं हिंदी में वृत्ति संरचना व्यवस्था :**

वृत्ति				
बुंदेली			**हिंदी**	
आज्ञार्थक	(0)	मोहन इते से जा	(0)	मोहन यहाँ से जा
	औ	गोयल पानी लाऔ	ओ	गोयल पानी लाओ
	औ	रवि इतेआऔ	इए	रवि इधर आइए
	व	रमेश पोथी देव	ना	रमेश पुस्तक देना
सम्भावनार्थक	रबै	श्यादमोय जाने परबै	ए	शायद मुझे जाना पड़े
	ऐ	हम भीतर आ जाऐ	एँ	हम अंदर आ जाएँ
हेतुहेतुमदभाव	तो	अगर मैं केतो तो बो गऔहोतो	ता	यदि मैं कहता तो वह गया होता
		अगर पानी गिरतो तो खेती अच्छी /नोनी हुज्जै	ती	यदि वर्षा होती तो फशल अच्छी होती
सामर्थ्यसूचक	सक	बौ निंग सकत है	सक	वह चल सकता है
	ले	कोहली खेल लेत है	ले	कोहली खेल लेता है
	बन	मोसै मोरातो नई बनत	बन	मुझसे चबाते नहीं बनता
	पा	बुमराह खेल नई पात	पा	बुमराह खेल नहीं पाता
बाध्यतासूचक	नै- पर	रोहित खोंआजई इंदौर जानै परवै	ना-पड़	रोहित को आज ही इंदौर जाना पड़ा
	नै-हुज्ज	गोशाल को रात में नागपुर जानै हुज्जै	ना- हो	गोशाल को रात में नागपुर जाना होगा
	त- बन	ऊसे समय पर दिल्ली जात नई बनत	ते- बन	उसे समय पर दिल्ली जाते नहीं बनता
	नै/ बैचाइये	सुरेश खों खाना खाबे जानै/जाबै चाइये	ना - चाहिए	सुरेश को खाना खाने चले जाना चाहिए
भविष्यत्	ऐहे	रवि घर जैहे	एगा	रवि घर जाएगा
	ऐगी	रीना महेंद्र सें बतियान लगी	एगी	रीना महेंद्र से बात करने लगी

निष्कर्ष :

प्रस्तुत शोध-पत्र के अंतर्गत बुंदेली-हिंदी भाषा की वाक्य संरचना के अंतर्गत क्रिया पदबंधों के बीच प्रयुक्त घटकों का व्यतिरेकी विश्लेषण किया गया है। अध्ययन के दौरान बुंदेली और हिंदी क्रिया पदबंध के स्तर पर अनेक समानताएँ और विषमताएँ देखने को मिली हैं। फिर भी इन दोनों भाषाओं में अत्यधिक समानता दिखाई देती है। दोनों ही भाषाओं में मूल धातुएं लगभग समान ही प्रयुक्त होती हैं, जबकि प्रत्यय एवं सहायक क्रिया भिन्न-भिन्न रूप में प्रयुक्त की जाती है, जो दोनों भाषाओं के बीच व्यतिरेक पैदा करती है। दोनों भाषाओं में क्रिया रूप एवं संरचना के स्तर पर अत्यधिक विषमता दिखाई देती है।

संदर्भ :

1. सिंह, सूरजभान. (2015). *अंग्रेजी-हिंदी अनुवाद व्याकरण.* दिल्ली: प्रभात प्रकाशन

2. बासुतकर, म. मा. (1985). *हिंदी-मराठी क्रिया पदबंध (व्यतिरेकी विश्लेषण).* आगरा: केंद्रीय हिंदी संस्थान

3. सक्सेना, रामप्रकाश एवं सपना तिवारी. (2016). *हिंदी तथा मराठी का व्यतिरेकी विश्लेषण.* रायपुर: वैभव प्रकाशन

4. पांडेय, अनिल कुमार. (2010). *हिंदी संरचना के विविध पक्ष.* नई दिल्ली: प्रकाशन संस्थान

5. हँस, कृष्णलाल. (1976). *बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप.* प्रयाग. हिंदी साहित्य सम्मेलन

6 . गुप्ता, सरोज. (2016). *प्रामाणिक वृहद बुन्देली शब्दकोश.* लखनऊ. उत्तर प्रदेश भाषा संस्थान.

7. पारधी, सिंह तुफान. (2018). पवारी-हिंदी क्रिया पदबंधों के घटकों का व्यतिरेकी विश्लेषण. वर्धा. 12 वाँ भारतीय भाषा सम्मलेन.

गाँधी विनोबा और भारत की आत्मनिर्भरता का स्वप्न

डॉ. शंभू जोशी*

shambhujoshi@gmail.com

हर साल आने वाली धन कुबेरों की सूची, हमारे लिए एक परिपाटी बन चुकी है। जिस भारत में हम लोग रह रहे हैं वहां इस तरह के आंकड़े हमें उनके जैसे बनाए जाने या बनने की ओर प्रेरित करते हैं, वहीं दूसरी ओर मार्च 2020 के बाद कोरोनावायरस के चलते मानवीय करुणा से ओतप्रोत कई ऐसी तस्वीरें हमने देखी जो मजदूरों के पलायन से जुड़ी हुई थी और कहीं-न-कहीं हमारी विफलता का सबूत भी।

क्या इन दोनों ही बातों में कोई संबंध है या फिर हम इस संबंध को जानबूझकर नजरअंदाज कर रहे हैं।

आज जिस भारत में हम लोग रह रहे हैं, वह कम-से-कम आजादी की लड़ाई लड़ने वाले लोगों का भारत नहीं है। गाँधी और विनोबा के लिए भारत का अर्थ केवल कुछ मुट्ठी भर पूंजीपतियों की प्रगति नहीं बल्कि 7 लाख गांव में निवास करने वाले लोगों के जीवन की बेहतरी से जुड़ा हुआ था। भारत का अर्थ उन सात लाख गांवों की प्रगति से था। वह कहते हैं-

'सच्चा भारत उसके 7 लाख गांवों में बसता है। यदि भारतीय सभ्यता को एक स्थायी विश्व व्यवस्था के निर्माण में अपना पूरा-पूरा योगदान करना है तो गांवों में बसने वाली इस विशाल जनसंख्या को...फिर से जीना सीखना होगा।'[1]

स्वयं भारत की उनकी कल्पना पश्चिमी दृष्टि से परिभाषित किए हुए भारत की नहीं थी बल्कि अपने जीवन स्रोतों और जीवन अनुभवों से प्राप्त एक सनातन और अडिग भारत की कल्पना थी। उन्होंने अंग्रेजों के द्वारा बताए गए भारत और उसकी छवि को भारत मानने से इनकार करने का साहस किया और ऐसे भारत की छवि सामने रखी जो सनातन मूल्य और विचारों का प्रतिनिधित्व करता था और जिस में गरीब से गरीब व्यक्ति भी अपनी भागीदारी रखता था।

आत्मनिर्भरता की संकल्पना का सबसे पहला सवाल यही है कि हम अपने को कैसे परिभाषित करें। जिस भारत को अंग्रेजों ने सपेरों का देश कहकर हाशिए पर ढकेल दिया उसका शोषण किया और श्वेत व्यक्ति के भार के सांस्कृतिक धर्म को भारत के विनाश का कारण बताया इसी के बरक्स गाँधी और विनोबा भारत का एक नया आत्म गढ़ते हैं। वे बताते हैं कि जिस समय यूरोप सभ्यता का क ख ग सीख रहा था उस समय भारत सभ्यता और सांस्कृतिक दृष्टि से कहीं अच्छी स्थिति में था। एक गौरवशाली सभ्यता और संस्कृति का वाहक

* **एसोसिएट प्रोफेसर, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

होने के नाते भारत को अपनी सशक्त परंपराओं से सीखना चाहिए और समय विशेष में उत्पन्न हुई विसंगतियों को छोड़कर आगे बढ़ना चाहिए। वह संकेत करते हैं-

'मैं केवल आशा लगाए हूँ और प्रार्थना कर रहा हूँ... कि एक नये और स्वस्थ भारत का उदय होगा जो पश्चिम की सभी वीभत्स बातों की घटिया नकल करने वाला एक युद्धप्रिय राष्ट्र नहीं होगा, अपितु ऐसा नया भारत होगा जो पश्चिम की उत्कृष्ट बातों को सीखेगा और केवल एशिया तथा अफ्रीका ही नहीं बल्कि सारी दुनिया के लिए आशा की किरण बनेगा।'[2]

गाँधी और विनोबा बार-बार यह संकेत करते हैं कि मूल सवाल तो मानवीय सभ्यता का है और मानव होने का अर्थ एक उत्तरदायित्व पूर्ण व्यक्तित्व का होना है और यह उत्तरदायित्व केवल व्यक्तियों के प्रति ही नहीं अपितु अपितु प्रकृति के प्रति भी है इसलिए उनकी आत्मा निर्भरता का केंद्र बिंदु एक उत्तरदायित्व पूर्ण व्यक्ति है जो समाज और प्रकृति के प्रति परस्पर स्वावलंबी जीवन जीने के लिए तत्पर है।

आत्मनिर्भरता की यही संकल्पना ही उनके समस्त विचारों का आधार है जब वह भारत के आत्मनिर्भर होने की बात कह रहे होते हैं तो ऐसे राजनीति, अर्थव्यवस्था, शिक्षा और सांस्कृतिक पहलुओं की बात करते हैं जो आत्मनिर्भरता की उनकी कसौटी को प्राप्त कर सके। दोनों ही विचारक पश्चिमी जीवन शैली और जीवन दृष्टि को संपूर्ण मानव सभ्यता के लिए घातक मानते हैं। व्यक्ति को मात्र उपभोक्ता में तब्दील करने की और उसी उपभोक्ता जीवन को जीवन के केंद्र बिंदु एवं नीति निर्माण का आधार मानने के प्रस्ताव को खारिज करते हैं। यही कारण है कि पश्चिमी आत्मनिर्भरता में उपनिवेशवाद एक अनिवार्य तत्त्व हो जाता है।

अहिंसक पर्यावरणीयदृष्टि के कारण गाँधीजी जिस जीवन शैली और विचार सरणी को स्वीकार करते हैं उसमें भी एकत्व मौजूद है। यही एकत्व स्वदेशी, विकेंद्रीकरण, सर्वोदय, गांवों को प्राथमिक इकाई मानने, लघु प्रौद्योगिकी अपनाने, ऊर्जा स्रोतों के संयत प्रयोगों इत्यादि के जरिए अभिव्यक्त होता है।

गाँधीजी ने उपनिवेशवाद और औद्योगीकरण के कारण होने वाले संसाधनों के शोषण के लिए चेतावनी के स्वर में कहा कि -

''ईश्वर न करे कि भारत कभी पश्चिमी ढ़ंग के उद्योगवाद को अपनाए। अगर तीस करोड़ की आबादी वाला समूचा राष्ट्र पश्चिमी ढ़ंग के आर्थिक शोषण पर उतर आए तो वह टिड्डी दल की तरह सारी दुनिया को चट कर जाएगा।''[3]

गाँधीजी की दूरदर्शिता का ही यह प्रमाण है कि उन्होंने देख लिया था कि यदि भारत भी पश्चिम की अर्थव्यवस्था को अपनाएगा तो आगे चलकर आंतरिक उपनिवेशवाद की स्थिति उत्पन्न होगी। आज भारत में जिस तरह के औद्योगिक असंतुलन, आंतरिक प्रवासन और पिछड़ेपन के शिकार हैं,वह आंतरिक उपनिवेशवाद का ही द्योतक है। पर्यावरण संरक्षण की लड़ाई केवल पर्यावरण संरक्षण की ही नहीं बल्कि उन पर समान अधिकारों की भी लड़ाई है। यह विडम्बनापूर्ण है कि हमारी अर्थव्यवस्था में प्रगति के दावों के बीच हजारों वर्षों से जंगलों को संरक्षित करने वाला आदिवासी समाज के विस्थापित होने के मामले लगातार बढ़ते जा रहे है।

उनके आजीविका के संसाधनों (जल, जंगल और जमीन) पर सुनियोजित हमला किया जा रहा है। इसलिए यह लड़ाई सामाजिक न्याय की लड़ाई भी हो जाती है।

गाँधी द्वारा प्रतिपादित चरखा और स्वदेशी ने (मशीनों द्वारा संसाधनों के अंधाधुध दोहन पर आधारित) व्यापक उत्पादन (मॉस- प्रोडक्शन) के स्थान पर लोगों के द्वारा लघु स्तर पर व्यापक उत्पादन (प्रोडक्शन बाय मासेज) को तरजीह दी, इसका एक सशक्त पर्यावरणीय पक्ष भी है। यह केवल उत्पादन की प्रक्रिया का ही नहीं बल्कि स्वामित्व का विकेंद्रीकरण भी है जो सामाजिक न्याय को पुष्ट करता है।औद्योगीकरण के कारण शहरों के विस्तार को उन्होंने शंका के साथ देखा। उनके लिए भारत का अर्थ सात लाख गाँवों से था। गाँवों के आत्मनिर्भर एवं विकेंद्रीकृत उत्पादन को आधार बना कर ग्राम स्वराज की अवधारणा प्रस्तुत की। उनके दृष्टिकोण में केंद्रीकरण सीधी हिंसा थी।

गाँधी और विनोबा के लिए आत्मनिर्भरता का तत्त्व एक पिरामिड आकार का और दूसरों के शोषण पर आधारित व्यवस्था नहीं है बल्कि उनके लिए आत्मनिर्भरता एक महासागरीय वाले यानी ओशनिक सर्कल की अवधारणा है जहां एक लहर दूसरे लहर का शोषण नहीं अपितु सहयोग करती है।

गाँधी और विनोबा के लिए आत्मनिर्भर भारत का स्वप्न गांव की बेहतरी से होता हुआ शहरों की बेहतरी की ओर जाता है। जीवन का केंद्र शहर नहीं अपितु गांव है लेकिन दोनों विचारक गांव को यथा स्थिति वाद बनाए रखने के पक्षधर नहीं है बल्कि उसमें समय अनुकूल बदलाव लाने के पक्षधर है। एकादश व्रत न केवल व्यक्तिगत आचरण के गुण हैं बल्कि वह उनकी सामाजिक आचार संहिता भी कही जा सकती है उनके द्वारा बताए गए सात सामाजिक पातक हमारे सामाजिक जीवन की दिशा निर्धारित करने वाले दिशानिर्देश कहे जा सकते हैं। गांवों और शहरों के बीच संबंध को उजागर करते हुए कहते हैं-

'मैं नगरों की बढ़वार को एक बुराई मानता हूँ; यह मानव जाति और दुनिया के लिए दुर्भाग्य का विषय है; यह इंग्लैंड और, निश्चित रूप से, भारत के लिए दुर्भाग्य का विषय है। अंग्रेजों ने शहरों के माध्यम से भारत का शोषण किया है। शहरों ने पलट कर गॉवों का शोषण किया है। शहरों का भवन- निर्माण गांवों की रक्तरूपी सीमेंट से हुआ है। मैं चाहता हूँ कि जो रक्त आज नगरों की धमनियों में बह रहा है, वह फिर एक बार गांवों की रक्तवाहिकाओं में बहने लगे।'[4]

वर्तमान संदर्भ में जिस आत्मनिर्भरता की बात कही जा रही है वह बहुत हद तक आर्थिक संदर्भों को ग्रहण किए हुए हैं। गाँधी और विनोबा अर्थशास्त्र और नैतिकता में अंतर नहीं करते हैं इसलिए वे उस अर्थदृष्टि और तत्प्रसूत अर्थव्यवस्था को भी अस्वीकार करते हैं जो व्यक्ति को नैतिक व्यक्तित्व से अवनत कर मात्र उपभोक्ता में तब्दील कर देती है। गाँधी स्पष्ट करते हैं कि –

'मैं मानता हूँ कि मैं अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र के बीच कोई सुस्पष्ट या किसी अन्य प्रकार का भेद नहीं करता। वह अर्थशास्त्र अनैतिक और इसलिए पापयुक्त है जो किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र के नैतिक कल्याण को क्षति पहुँचाता हो।'(यंग इंडिया, 13-10-1921, पृ. 325)

भारतीय परिदृश्य में श्रम की बहुलता ही उसका सबसे सशक्त पहलू है। यह बात गौरतलब है कि अंग्रेजों के आने से पहले वैश्विक अर्थव्यवस्था में भारत की भागीदारी लगभग 30 प्रतिशत तक थी। आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (OECD) नामक अंतरराष्ट्रीय संस्था के अध्ययन के मुताबिक वर्ष 1700 में भारत विश्व के समूचे सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 24.44, चीन 22.30, पश्चिमी यूरोप 22.46, ब्रिटेन 2.88 प्रतिशत था।[5] यह विकेंद्रीकरण और श्रम बहुल तकनीक का ही परिणाम था। वहीं अंग्रेजों के अधीन उपनिवेशवादी नीतियों का नतीजा था कि वर्ष 1952 में यह हिस्सा घटकर लगभग 3 से 4 प्रतिशत रह गया था। औद्योगिक क्रांति के परिणामों को साक्षात गाँधीजी ने अपने लंदन प्रवास में देखा था। श्रम को विस्थापित करने वाली तकनीक भारत के लिए तब भी घातक थी और आज भी घातक है। यह हमारे लिए आश्चर्यजनक नहीं है कि पश्चिमी तकनीक और विकास के मानकों को अपनाने के इतने वर्ष बाद भी विश्व व्यापार में हमारा योगदान 5 प्रतिशत तक भी नहीं पहुँच सका है।

पश्चिमी दृष्टि शहरों को अपने विकास का केंद्र मान कर चलती है और गांवों के विस्थापन को अनिवार्य लागत मानती है। उनके लिए विस्थापन विकास का अनिवार्य अंग है। जितना अधिक विस्थापन, उतना अधिक विकास, उतना अधिक श्रम संसाधन जिसे कौड़ी के दाम खरीदा जा सकता है। यह अनैतिक आर्थिक दृष्टि आजाद भारत में भी हमारी अर्थव्यवस्था की धुरी बनी हुई है। हम देख सकते हैं कि भारत में इसी कारण विस्थापन बढ़ा है, असंगठित कामगारों की स्थिति पहले से बदतर हुई है। यह सब सुविचारित है। सरकारें कोई भी हो परंतु आर्थिक नीतियां तो अंतरराष्ट्रीय वित्त संस्थाओं द्वारा पहले ही तय की जा चुकी होती हैं। यही हमारे आत्मनिर्भर भारत के विचार की विडम्बना है। हम क्या होना चाहते है, इसे तय करने की आजादी भी हमारे पास नहीं है। गाँधी-विनोबा इसलिए प्रासंगिक हो जाते हैं कि उन्होंने अपने समय में इसी विचार के विरूद्ध लड़ाई लड़ी और बताया कि हम अपने सपने देख सकते हैं और अपने निर्णय खुद ले कर आम जनता के जीवन में सुधार ला सकते हैं।

आज की अर्थव्यवस्था का खोखलापन उजागर हो चुका है। यह न मानव संसाधनों का सदुपयोग कर पा रही है बल्कि प्राकृतिक वातावरण के प्रति भी खतरा बन चुकी है। केंद्रीकरण की इसकी प्रवृत्ति ने अमीर-गरीब के बीच की खाई को लगातार चौड़ा ही किया है। इसके बरक्स गाँधी-विनोबा की ग्राम स्वराज की अवधारणा ही भारतीय दृष्टि से उपर्युक्त प्रतीत होती है। हमारे गांवों में यह सामर्थ्य है कि वह उपस्थित श्रम शक्ति को रोजगार दे सके और स्थानीय स्तर पर प्रगति के नये आयाम रच सके। हमारे सामने चुनौती गांवों को बदलना भी है। मानवीय चेतना के विकास में जिन मानवाधिकारों, शैक्षिक उपलब्धियों और सामाजिक आदर्शों को हमने प्राप्त किया है, उन्हें गांवों में लागू करते हुए उन्हें आदर्श गांव भी बनाना है। जो आलोचक

इसे निरी कपोल कल्पना कह कर हवा में उड़ाने का दावा करते हैं उन्हें जरा अन्ना हजारे के गांव रालेगांव सिद्धी, पोपटराव पवार के हिवरे बाजार और गढ़चिरोली के मेंढ़ा लेखा गांव को देखना चाहिए।इन उदाहरणों ने यह साबित किया है कि स्वदेशी तकनीक, विकेंद्रीकरण और खुद पर विश्वास करके असंभव भी संभव करके दिखाया जा सकता है। जिन आर्थिक तर्कों और मानकों पर प्रगति के दावे किए जाते हैं उन सभी मानकों पर यह उदाहरण पूरे खरे उतरते हैं। इसके बावजूद भी इनकी सोच, कार्यप्रणाली और संस्कृति बिल्कुल अलग है। गाँधी-विनोबा ने यह बताया कि आर्थिक प्रगति को पाने का एक मात्र तरीका पश्चिमी अर्थव्यवस्था का अंधानुकरण नहीं है बल्कि भारतीय दृष्टि से विकेंद्रीकृत और ग्रामस्वराज की अवधारणा हमें ज्यादा अनुकूल परिणाम दे सकती है।

गाँधी और विनोबा जब आत्मनिर्भर व्यवस्था की बात कर रहे होते हैं तो जिस आर्थिक ढांचे को वह प्रस्तुत करते हैं उसमें विकेंद्रीकरण ग्रामोद्योग और स्थानीय अर्थव्यवस्था की पोषण की बात है इसका आर्थिक तर्क यह भी है कि लोगों की उत्पादन प्रक्रिया में जितनी भागीदारी होगी उतना ही आय का समान वितरण होगा जो न केवल उत्पादन प्रक्रिया को बनाए रखेगा बल्कि संपूर्ण अर्थव्यवस्था में लगे हुए लोगों के आर्थिक कल्याण को भी सुनिश्चित करेगा। कृषि और ग्रामोद्योग को बढ़ावा देना, बाजार में शोषण से मुक्ति, पंचायतों को वास्तविक अधिकार प्रदान करना और प्राकृतिक संसाधनों तक सबकी पहुँच में सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करना ऐसे मार्गनिर्देशक है जों हमें आत्मनिर्भर समाज की ओर तथा ग्राम स्वराज की प्राप्ति में मदद कर सकते हैं।

विनोबा ने बहुत महत्वपूर्ण बात कही थी कि अंग्रेजों के जमाने में भारत आजाद गांवों को गुलाम देश था पंरतु आजादी के बाद यह गुलाम गांवों का आजाद देश हो गया है। विनोबा द्वारा कही बात बहुत गूढ़ अर्थ लिए हुए है जो स्पष्ट करती है कि हमने अपने गांवों के साथ कैसा सौतेला व्यवहार किया है। उन्हें विकास का केंद्र बनाने के स्थान पर शोषण का केंद्र बना दिया है। उनकी भूमिका येन-केन-प्रकारेण शहरों का पेट भरना ही हो गया है। शहरी जीवन-शैली का अविचारित अनुगमन ही विकसित मानने की कसौटी बन गया है।

गाँधी जी के जाने के बाद भी विनोबा ने ग्राम स्वराज्य के विचार को चर्चा में बनाए रखा। विनोबा ने देश में बननी वाली 'नेशनल प्लानिंग'(राष्ट्रीय योजना) के स्थान पर 'विलेज प्लानिंग'(गांव योजना) का प्रस्ताव किया था। विनोबा ने ग्राम स्वावलम्बन के बारे में स्पष्ट कहा कि-

'कोई भी गांव तभी आदर्श माना जा सकेगा, जब अपने दैनिक निर्वाह की चीजों में स्वावलम्बी होगा। गांव को चाहिए कि वह अपने नित्य के उपयोग की अधिक से अधिक चीजें गांव में ही बना लें। उनमें अनाज तो प्रमुख चीज है ही। गांव चाहे तो आसानी से और समझदारी से उस क्षेत्र में आत्मनिर्भर रह सकता है।' [6]

विनोबा का विचार था कि गांवों को हर मामले और घरेलू चीजों के बारे में स्वावलम्बी होना चाहिए। स्थानीय स्तर पर ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन का परिणाम स्थानीय श्रम का वास्तविक उपयोग हो सकेगा। रोजगार निर्माण और आय सृजन स्थानीय स्तर पर हो सकेगा। यह विनिवेश का कार्य करेगा और आर्थिक

गतिविधियों का चक्र लगातार चलता रहेगा। स्थानीय आधार पर किए गए आय सृजन से ने केवल सबको रोजगार मिलेगा बल्कि आय वितरण भी समान होगा। गांव के नौजवान युवक –युवतियां गांव में ही रोजगार प्राप्त कर सकेगें। गांव के टूटने से बेकारी बढ़ेगी और शहरों की ओर पलायन होगा। यह दुष्चक्र विभिन्न सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को उत्पन्न करेगा। अतएव ग्राम स्वराज ही बेहतर सामाजिक आदर्श है। हम देख सकते हैं कि ग्राम स्वराज का आदर्श एक सामाजिक ही नहीं बल्कि वर्तमान संदर्भो में सामाजिक न्याय एवं आर्थिक समानता के विचार को प्राप्त करने हेतु एक प्रासंगिक आर्थिक तर्क भी है। वह लगातार कृषि एवं ग्रामोद्योगों को बढ़ावा देने की बात कहते हैं-

'जैसे इस देश में और दुनिया में भी खेती टल नहीं सकती, वैसे ही कम से कम हिन्दुस्तान में ग्रामोद्योग टल नहीं सकते। बेकारी के असुर के भय से नहीं बल्कि योजना के रूप में लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा मिलना चाहिए।'[7]

आधुनिक उत्पादन प्रणाली अर्थव्यवस्था पर्यावरण जन स्वास्थ्य और मानवीय गरिमा को आघात पहुंचाने वाली है। आधुनिक आर्थिक प्रक्रिया का उद्देश्य उत्पादन में वृद्धि है और उससे प्राप्त अधिक अधिक लाभ प्राप्त करना है।अर्थशास्त्र की दृष्टि में केवल उपभोक्ता बना दिए जाने के कारण मनुष्य के सर्वांगीण विकास में बाधा उत्पन्न होती है।किसी भी आर्थिक प्रक्रिया का उद्देश्य यह होना चाहिए कि वह व्यक्ति और समाज के आर्थिक जीवन को इस तरह बनाएं कि न केवल उसमें मानवीय दृष्टि रहे बल्कि जीवन के गुणात्मक उत्कर्ष में भी वह योगदान दे सकें।

केंद्रीकृत स्वामित्व पर आधारित आज की उपभोक्तावादी, मुनाफे के लिए प्रेरित जटिल प्रौद्योगिकी आर्थिक प्रक्रिया समस्त मानवीय कल्याण के लिए हानिकारक है। एक विकेंद्रीकृत और श्रममूलक तकनीक पर आधारित एवं सर्वप्रथम मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने को केंद्र में मानने वाली आर्थिक प्रक्रिया ही इसका विकल्प है।वही उत्पादन प्रक्रिया और प्रौद्योगिकी स्वीकार्य हो सकती है जो रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध करवाएं।

असंगठित क्षेत्र में रोजगार की स्थिति एवं अन्य आयामों को लेकर बनाए गए राष्ट्रीय आयोग के अध्यक्ष अर्जुन सेनगुप्ता ने अपनी रिपोर्ट में क्षेत्र की गंभीर समस्याओं की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया था उन्होंने अपनी रिपोर्ट में गंभीर स्थिति का आकलन करते हुए कुछ सुझावों को भी प्रस्तुत किया था उन्होंने कहा ग्रामीण क्षेत्रों में कारीगरों और दस्तकारों के लिए संकुल इकाइयां गठित की जानी चाहिए उनके लिए विशेष आर्थिक क्षेत्र स्पेशल इकोनामिक जोन बनाने चाहिए। स्थानीय लोगों के कौशल और तकनीक का इस्तेमाल होना चाहिए।[8]

गाँधी जी और विनोबा की चिंता देश को आजाद कराने तक ही सीमित नहीं थी बल्कि देश का पुनर्गठन सत्य,अहिंसा और साम्य के आधार पर हो, ऐसा उनका मत था। उनके लिए नैतिकता और आर्थिकता

में कोई भेद नहीं था अपितु दोनों एक-दूसरे के पूरक थे। दोनों विद्वानों द्वारा आधुनिकता की आलोचना का सार उनकी देशज तत्त्वमीमांसा और सभ्यता के सही अर्थ की व्याख्या में है। उनके द्वारा आधुनिकता की आलोचना किसी देश, धर्म,सम्प्रदाय या मत की आलोचना नहीं है बल्कि उस प्रवृति की है जो मनुष्य को दोयम दर्जे का बना कर उसे यांत्रिकता और उपभोक्तावादी बाजार में ढ़केलने को आतुर है। इसमें कोई दोराय नहीं है कि आधुनिकता का सार जोर गाँवों के विस्थापन से जुड़ा हुआ है। विस्थापन हिंसा का स्रोत है। अतएव आधुनिकता स्वयं में एक प्रकार से हिंसा की स्रोत हो जाती है। गाँधी और विनोबा ने आधुनिकता व हिंसा के इस गठजोड़ को बारीकी से देखा और समझा था। अतएव जब वह स्वदेशी और स्थानीय अर्थव्यवस्था की चिंता करने की बात कहते हैं तो उनका उद्देश्य अर्थव्यवस्था को बचाने के साथ देश-हित चिंतन भी हो जाता है।

विदेशी सामानों का आयात और उपभोग इसलिए अनैतिक है क्योंकि यह स्थानीय रोजगार का विध्वंस करता है और स्थानीय कला को पनपने का अवसर प्रदान नहीं करता है। एक तरह से यह सामाजिक न्याय से वंचित करना है। अतएव दोनों विचारक स्वेदशी के पक्ष में अपना मत प्रकट कर रहे होते हैं तब आर्थिक व्यवहार से आगे जाकर सामाजिक न्याय, अहिंसा, प्रेम और समानता जैसे मूल्यों को आर्थिक व्यवहारके दायरे में लाकर उसकी धुरी बनाने का प्रयास कर रहे होते हैं। दूसरे शब्दों में वह हिंसक अर्थव्यवस्था के प्रति सत्याग्रह कर उसे सत्याग्रही अर्थव्यवस्था बनाने का आह्वान कर रहे होते हैं।

आधुनिकता की पाश्चात्य अवधारणा को अस्वीकार कर ये विचारक उसकी वैचारिक अधीनता को भी नामंजूर करते हैं। इस अवधारणा के कारण वे न केवल वैचारिक अधीनता की आलोचना करते हैं बल्कि उसके बरक्स वैकल्पिक विचार भी प्रस्तुत करते हैं। विकास, सभ्यता, प्रगति जैसे विचारों की पाश्चात्य/आधुनिक अवधारणों को दोनों विचारक चुनौती देते हैं और इनकी मानवपरक व्याख्या करते हैं। इसलिए सहयोगमूलक एवं मानव के सर्वांगीण कल्याण पर आधारित विकास, सभ्यता और प्रगति जैसे विचारों को पुनर्व्याख्यायित करते हैं। पश्चिमी उपभोक्तावाद नैतिक पतन का मार्ग प्रशस्त करता है। इसके बचने का तरीका जीवन दृष्टि में बदलाव और आत्म-संयम, त्याग से ही आता है।

हम देख सकते हैं कि पाश्चात्य उपभोक्तावाद ने मनुष्य को एक उपभोक्ता मात्र में तब्दील कर दिया है जिससे प्राकृतिक संसाधनों और सम्पूर्ण पारिस्थितिकी पर आज संकट के बादल छाए हुए हैं। मनुष्य के मूल नैतिक स्वभाव को आधार बना कर दोनों विचारक सम्पूर्ण आर्थिक गतिविधियों को नैतिकता के दायरे में ले आते हैं। वस्तुत: इन दोनों विचारकों का मूल मन्तव्य यह था कि आर्थिक गतिविधियों का लक्ष्य केवल आर्थिक जीवन में ही खुशहाली नहीं बल्कि जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति में भी उसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। इन्होंने बताया कि पूँजीवाद प्रकट रूप में लोभ, शोषण और हिंसा की ओर ले जाता है। साम्यवाद व्यक्ति की भूमिका को राज्य के अधीन करता है। अत: सहयोगमूलक और अहिंसक अर्थव्यवस्था ही वह रास्ता है जो एक ओर व्यक्ति के भौतिक कल्याण को सुनिश्चित कर सकता है और सामाजिक न्याय व पारिस्थितिकी संरक्षण का मार्गप्रशस्त करता है।

प्रसिद्ध रचनाकार एल्डस हक्सले ने गाँधीजी के क्रांतिकारी एवं सबके कल्याण की भावना वाले आर्थिक विचारों के बारे में लिखा कि:

"गाँधीजी के आर्थिक विचार मनुष्य एवं ब्रह्मांड की प्रकृति की वास्तविक स्वीकृति पर आधारित है। वह अर्थव्यवस्था को व्यक्ति के भौतिक जीवन स्तर के रूप में नहीं बल्कि उच्चतर सामाजिक मूल्यों की स्थापना के माध्यम के रूप में देखते हैं। ऐसी आर्थिक व्यवस्था किसी भी व्यक्ति के हित के विरोध में नहीं जा सकती।"[9]

यह उद्धरण एक अहिंसक अर्थव्यवस्था की विशिष्टता को प्रकट करता है जो गाँधीजी के विचारों का परिणाम है।

आत्मनिर्भरता में तकनीक की भूमिका निर्विवाद है। दोनों विचारक मशीनीकरण के अमानवीयकरण की ओर ध्यान आकृष्ट करते हैं और तकनीक की मानवीय भूमिका पर जोर देते हैं। मशीन को मालिक न मान कर उसे सेवक का स्थान देते हैं। दोनों विचारक तकनीक में नवाचार का स्वागत करते हैं परंतु तकनीकी नवाचार ऐसा होना चाहिए जिससे समाज के हर तबके तक इसकी पहुँच हो सके। यदि तकनीक ऐसी है जो कुछ लोगों तक सीमित है और उसके जरिए अकूत लाभ जमा किया जा रहा है तो दोनों ही विचारक उन्नत होने के बाद भी उस तकनीक को इसलिए स्वीकार नहीं करतेहैं क्योंकि यह सामाजिक न्याय के नियम के विपरीत है। हम यह नहीं भूलना चाहिए कि एक अहिंसक एवं न्यायपूर्ण तकनीक की आधारशिला पर ही अहिंसक एवं न्यायपूर्ण समाज की स्थापना हो सकती है क्योंकि साध्य एवं साधन एक-दूसरे के पूरक हैं। यह अनायास नहीं है कि आत्मनिर्भरता के लिए चरखा, खादी, ग्रामोद्योग इस अहिंसक और न्यायपूर्ण अर्थव्यवस्था को पाने का ही प्रयोग थे जो विकेंद्रीकरण और समतामूलक वितरण एवं स्वामित्व को सुनिश्चित करते थे। उत्पादन, उपभोग और स्वामित्व का विकेंद्रीकरण और स्थानीय बना दिया जाना न केवल आर्थिक व्यवस्था का नैतिकीकरण करते हैं बल्कि मानवीय अस्तित्व के सम्मुख प्रस्तुत पारिस्थितिकीय संकट से बचने का रास्ता भी प्रदान करते हैं। डेविड हार्डीमैन गाँधी, सभ्यता, विज्ञान और तकनीक पर बातचीत करते हुए इशारा करते हैं कि गाँधीजी की यह धारणा थी कि वैज्ञानिक शोध अपने चरित्र में अभिजात्य वर्ग को लाभ पहुँचाते हैं और यह वर्ग शरीर-श्रम से दूर रहता है। शरीर-श्रम से इस दूरी और व्यावहारिक अनुभव के कारण शोध का परिणाम ऐसा नहीं होता है जो वृहद जनता को लाभ पहुँचा सके। इसे इस उदाहरण से समझा जा सकता है कि वैज्ञानिक शोध चरखे में तकनीकी नवाचार या उसे उन्नत करने की बजाय श्रम प्रतिस्थापित करने वाली वृहद मशीन को प्राथमिकता देता है जो अमीर वर्ग के उपयोग की है।[10]

गाँधी और विनोबा ने सीमित औद्योगीकरण का समर्थन किया। इसके लिए वह उत्पादन और वितरण में जनता की भागीदारी भी सुनिश्चित करते हैं। समाज को उसके दायित्व से विमुख करने की नहीं बल्कि सक्रिय भूमिका निभाने का प्रस्ताव करते हैं। यदि औद्योगीकरण सृजनात्मकता और मानवीय स्वतंत्रता का हनन करता

है तो उससे मुक्ति आवश्यक है। पाश्चात्य औद्योगीकरण का विरोध भी इसे मुद्दे पर था। तकनीक के सामाजिक स्वरूप की जितनी चिंता इन दोनों विचारकों ने की उतनी शायद समकालीन विचारकों में से किसी से नहीं की। अर्थव्यवस्था के समस्त आयामों का सामाजिकीकरण उनका महत्वपूर्ण योगदान है और यह साम्यवाद से बिल्कुल अलग है। गाँधी और विनोबा के यहां पर समाज निष्क्रिय समाज नहीं बल्कि अपने अधिकार और कर्तव्य के प्रति सचेत समाज है।

आजादी के बाद हमने ग्राम स्वराज के विचार को विस्मृत कर औद्योगीकरण और शहरीकरण के रास्ते पर चले। इसका परिणाम हुआ कि भारत के गांवों और खेती को दरकिनार करने का सुविचारित प्रयास हुआ। गांवों के उजड़ने का सीधा फायदा शहरों के पूंजीपतियों को हुआ जिन्हें सस्ती दर पर मजदूर मिलने लगे। ऐसा नहीं है कि शहरों ने केवल फायदा ही देखा बल्कि इस अनियंत्रित और अविचारित पलायन ने स्वयं शहरों के लिए भी संकट खड़े किए। बाजार के भरोसे छोड़ी गई अर्थव्यवस्था ने जिस लोभ, लालच और उपभोक्तावाद को बढ़ाया उसका परिणाम आर्थिक व सामाजिक अव्यवस्था और पारिस्थितिकी संकट के रूप में सामने आया। विदेशी निर्भरता ने उदारीकरण,निजीकरण और वैश्वीकरण के झुमलों के बीच अपनी गहरी पैठ बनाई और आत्मनिर्भरता तथा स्वावलंबन जैसे शब्द बोझ बनते गए। कोरोना काल में आज हम पुन: आत्मनिर्भरता और स्वावलंबन के आदर्श की ओर जाने के रास्ते तलाश रहे है। हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि इन आदर्शों को प्राप्ति का तरीका हमारी जीवन-दृष्टि में बदलाव और मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा से ही संभव हो सकेगा। केवल अर्थव्यवस्था ही नहीं बल्कि समस्त जीवन के क्रियाकलापों का आधार मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा एवं प्राप्ति होना चाहिए।

दोनों ही विचारक अर्थव्यवस्था में उत्पादन की प्रक्रिया की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते हुए उसे कुछ हाथों में संकेंद्रण करने के साथ पर समाज के हाथों में देने के पक्षधर है जो आत्मनिर्भरता का ही प्रयास है। उनकी दृष्टि में कृत्रिम जरूरतों को पूरा करने से पहले मूलभूत आवश्यकताओं (रोटी,कपड़ा,मकान और शिक्षा आदि) को पूरा किया जाना चाहिए। कृत्रिम जरूरतों को पूरा करने का प्रयास करने से आज हमारे शहर कूड़े के ढ़ेर में तब्दील होते जा रहे हैं साथ ही पर्यावरण प्रदूषण और पारिस्थितिकी असंतुलन से जूझ रहे हैं। तत्कालीन अर्थव्यवस्था के उद्देश्यों और प्रक्रियाओं पर पुनर्विचार का आह्वान कर ये विचारक स्थानीय उत्पादन और विकेंद्रीकरण का सुझाव देते हैं। इसका परिणाम लाभ के समान वितरण से सामाजिक समता के लक्ष्य की प्राप्ति तक ले जाता है। आकंठ उपभोक्तावाद में डूबे, परिग्रही आसक्ति पर मुग्ध और भोगवादी जीवन को आदर्श मानने वाला हमारा शहरी समाज लगातार असंतोष और मानसिक अशांति का सामना कर रहा है। मानसिक शांति से रहित होकर शहरी जीवन आज तनावहीन जीवन जीने के लिए व्याकुल है। वस्तुत: दोनों ही विचारक समाज को उसके मूल स्वभाव के प्रति सचेत करते हैं।

वर्तमान समय में जहां सरकारें पूंजीपतियों के निर्बाध चरणों पूजा में लगी हुई है गाँधी और विनोबा इसीलिए सरकार के साथ-साथ समाज को भी उद्वेलित करते हैं और सचेत करते हैं कि पश्चिमी दृष्टि का निर्बाध

अंधानुकरण हमें आत्मनिर्भर तो दूर स्वयं को समझने लायक भी नहीं रहने देगा। अपने को समझने और व्याख्यायित करने की कोशिश हमारी अपनी लड़ाई है और इसे जीते बिना आत्मनिर्भरता एक कपोल कल्पना ही रहेगी।

संदर्भ :

[1] *हरिजन*, 27-04-1947, पृ.122

[2] *हरिजन*, 7-12-1947, पृ. 453

[3] *यंग इंडिया*, 20-12-1928, पृ. 422

[4] *हरिजन*, 23-06-1946, पृ.198

[5] एग्नस मेडिसन. (2006). *द वर्ल्ड इकॉनामी वाल्यूम 1 : ए मिलिनियल पर्सपेक्टिव वाल्यूम 2 : हिस्टोरिकल स्टेस्टिक्स*. पेरिस:ओईसीडी पब्लिशिंग.

[6] विनोबा. (1997). *ग्राम पंचायत*. वाराणसी: सर्वसेवासंघ. पांचवां संस्करण. पृ.20

[7] *वही*, पृ.22

[8]देखें,https://web.archive.org/web/20110721175552fw_/http://nceuis.nic.in/Skill_Formation_and_Employment_Assurance_in_the_Unorganised_Sector.pdf

[9] उद्धृत, दास, रतन. (2005).*द ग्लोबल विजन ऑफ महात्मा गांधी*. नई दिल्ली: सरूप एण्ड सन्स. पृ. 146

[10] हार्डीमैन, डेविड. (2003). *गांधी इन हिज टाइम एण्ड ऑवर्स: द ग्लोबल लेगेसी ऑफ हिज आइडियाज*. लंदन: सी हर्स्ट एण्ड के. पृ. 72

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं का शिल्पगत मूल्यांकन

प्रिया सिंह*

priyasingh91lko@gmail.com

हिंदी समीक्षक दलित साहित्य पर कई प्रकार के आरोप लगाते रहे हैं। विशेष रूप से गुणवत्ता को लेकर, भाषा और शिल्प को लेकर दलित साहित्य को खारिज करने वाले आलोचक हिंदी में भरे पड़े हैं। इस प्रश्न पर मुद्राराक्षस लिखते हैं : "अक्सर यह प्रश्न भी उठता है कि दलित रचनाएँ गुणवत्ता की दृष्टि से कमजोर हैं। आखिर यह गुणवत्ता है क्या ! और हमेशा उस गुणवत्ता का धार्मिक निष्ठा के साथ पालन किया गया है ? छंद इस गुणवत्ता का अनिवार्य तत्त्व था, पर आधुनिक कविता ने इसे छोड़ दिया। जिस अलंकार निर्भरता ने रीति साहित्य की गुणात्मकता के मानक स्थापित किये थे, अलंकारधर्मिता को वर्तमान साहित्य में कहाँ देखा जाएगा? इस सदी के शुरू में खड़ी बोली को कविता के लिए घोर अनुपयुक्त माना जाता था पर आज कविता खड़ी बोली में ही लिखी जाती है।"[1]

दलित साहित्य ने संस्कृतनिष्ठ परम्परागत साहित्यिक भाषा, काव्यशैली, प्रस्तुतिकरण को नकार कर सर्वग्राही भाषा का प्रयोग किया है। ऐसी भाषा जो दलितों को पीड़ा, अपमान, व्यथा की सही और यथार्थवादी अभिव्यक्ति बन सके। दलित साहित्य की भाषा नकार और विद्रोह की भाषा है, जिसमें युगों की यातनायें साकार हो उठी हैं। मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, श्योराज सिंह बेचैन, जयप्रकाश 'कर्दम' आदि रचनाकारों ने इस भाषा को विस्तार दिया है।

विमल थोरात लिखती हैं: "दलित कविता व्यक्तिगत अनुभवों से संपृक्त होने के साथ ही समूह- मन के अनुभवों की अनुभूति भी है।"[2]

ओमप्रकाश वाल्मीकि वर्तमान दलित साहित्य के प्रतिनिधि रचनाकारों में से एक हैं। उन्होंने हिंदी दलित साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वाल्मीकि का जीवन जिन विषम परिस्थितियों में बीता वहां केवल शोषण, अत्याचार, दमन, अन्याय एवं हिंसा ही व्याप्त थी, किंतु फिर भी उन्होंने उन परिस्थितियों का सामना किया तथा दलित साहित्य को मजबूत आधार दिया। वाल्मीकि जी के काव्य संग्रहों- "सदियों का संताप", "बस्स! बहुत हो चुका", "अब और नहीं", "शब्द झूठ नहीं बोलते" के अध्ययन की पूर्णता के लिए उनके काव्य शिल्प का अध्ययन निम्न बिंदुओं के द्वारा स्पष्ट करेंगे :-

1. काव्य – भाषा, 2. काव्य- प्रतीक, 3. काव्य –बिम्ब, 4. काव्य – मिथक

* **पीएच. डी. शोध छात्रा (हिंदी), डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय**

काव्य भाषा -

वाल्मीकि जी की भाषा सिर्फ नकार और विद्रोह की भाषा नहीं है, अपितु उनकी भाषा में विशेष रूप से दलितों की पीड़ा, अपमान, व्यथा की सही और यथार्थवादी अभीव्यक्ति हुई है। उनकी भाषा में परिवर्तन की छटपटाहट और अंतरसंबंधों की ऊर्जा अपने अंदर समाए हुए है। वह अपनी स्थितियों पर दुख और आक्रोश व्यक्त करता है, लेकिन अतीत के स्याह दिनों में भी अपनी अस्मिता की तलाश करना चाहता है-

"ओ, मेरे अज्ञात अनाम पुरखों
तुम्हारे मूक शब्द जल रहे हैं
दहकती राख की तरह।
राख जो लगातार काँप रही है
रोष से भरी हुई
मैं ये जानना चाहता हूँ
तुम्हारे शब्द.....
तुम्हारा भय....."[3]

शब्द बाण की तरह चुभते हैं। इसलिए साहित्य में शब्द चयन का विशेष महत्त्व है। ओमप्रकाश वाल्मीकि शब्दों के माध्यम से वाणी को तीक्ष्णता प्रदान करते हैं। शब्द ही हैं जो किसी को सम्मान और किसी को असम्मान देते हैं। शब्द चयन के द्वारा बात को असम्मान देते हैं। शब्द चयन के द्वारा बात को ठीक तरह से पुष्ट कर सकते हैं।

काव्य प्रतीक -

साहित्य में प्रतीक की महत्ता सर्वविदित है। प्रतीक द्वारा भावना, विचार, बोध आदि की अभिव्यक्ति जहाँ रचना को प्रभावशाली बनाती हैं, वहीं अर्थपूर्ण भी। प्रतीक द्वारा किसी भी बात को संक्षेप में कहा जा सकता है। दलित साहित्य में समाज की पीड़ा, बेबसी, उत्पीड़न और शोषण से उपजे आक्रोश को सामाजिक यथार्थ को चित्रित करने के लिए प्रतीकों का प्रयोग हुआ है।

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार- "प्रतीक एक प्रकार का अचल बिम्ब है, जिसके आयाम सिमटकर अपने भीतर बन्द हो जाते हैं।"[4]

दलित कवि का स्वर कटु है, क्योंकि अपने समाज के प्रपंच को हजारों सालों से अपनी त्वचा पर सहा है। उसकी तल्खी प्रतीकों में महसूस की जा सकती है। मुक्ति-संघर्ष की छटपटाहट दलित कविता को ध्वनिगत करती है।

"दलित कविता में 'पेड़', 'लोकतंत्र', 'भेड़िये', 'जंगली सूअर', 'कुत्ते', शोषण और दमन, गुलामी के प्रतीक हैं। सामाजिक जीवन की ओर अमानुषिकता को रेखांकित करते हैं।"[5]

वाल्मीकि जी के काव्य-संग्रह 'बस्स! बहुत हो चुका' की कविता 'पेड़' की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य है:-

"पेड़
तुम उसी वक्त तक पेड़ हो,
जब तक ये पत्ते
तुम्हारे साथ है
पत्ते झरते ही
पेड़ नहीं ठूँठ कहलाओगे
जीते जी मर जाओगे।"[6]

वाल्मीकि ने स्वर्ण को 'पेड़' के प्रतीक रूप में चित्रित किया है, क्योंकि ये सवर्ण समाज में तभी तक हैं, जब तक ये हरे-भरे हैं, पत्ते हैं, लेकिन एक निश्चित समय आने पर अर्थात वर्ण-व्यवस्था समाप्त होने पर ये ठूठ कहलायेंगे।

वाल्मीकि जी की कविता 'झाड़ू वाली' उनकी बहुत ही प्रसिद्ध कविता है, जिसके माध्यम से उन्होंने भारत की सम्पूर्ण लोकतांत्रिक व्यवस्था पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिया है:-

"साल-दर-साल गुजरते हैं
दीवारों पर चिपके चुनावी पोस्टर
मुँह चिढ़ाते हैं।
जब तक रामेसरी के हाथ में
खड़ग- खांग घिसटती लौह गाड़ी है
मेरे देश का लोकतंत्र
एक गाली है।"[7]

यहाँ पर 'लोकतंत्र' को लोगों ने उपहासात्मक बना रखा है। लोकतंत्र के वास्तविक स्वरूप को लोग उभरने नहीं देते और येन-केन-प्रकारेण स्वयमेव स्वार्थ सिद्धि हेतु कोई भी हथकण्डा अपनाने से परहेज नहीं करते हैं।

वाल्मीकि के काव्य-संग्रह 'शब्द झूठ नहीं बोलते' की कविता 'लोकतंत्र या....' की कुछ पंक्तियां दर्शनीय हैं-

"इक्कीसवीं सदी में

लौट आती है पेशवाई सदी

जहां इंसान की औकात

जन्मता जाती से तय होती है।"[8]

काव्य-बिम्ब-

काव्य में बिंब का मुख्य काम संप्रेषण का है। बिंब काव्य में प्रयुक्त दृश्य को स्पष्ट करता है तथा कवि की अनुभूति में एक तीव्रता पैदा करता है, "दलित कविता में बिंम्ब दलित जीवन की त्रासदी और उसके यथार्थ को व्यक्त करते हैं कविता में अंधेरा आसपास के परिवेश में गंदगी, सीलन भरे तंग मकानों में सिसकती जिन्दगी दलित जीवन के यथार्थ है जो उनके जीवन का अविभाज्य घटक बन गए है । उन वस्तुओं को दृश्य बिम्ब के स्थान पर रखकर दलित कवि इन्हीं वस्तुओं में अपने जीवन के प्रतिबिम्ब ढूंढता है।"[9]

जिन्हें पेट भरने को भोजन नसीब नहीं, जो बदबूदार गलियों-घरों में रहने को मजबूर हैं वे सौन्दर्यानुभूति, स्वच्छ वातावरण और ऊँची कैसे करेंगे 'अघाने पेट गद्दा मारने वाले लोग' दर्द का अहसास क्या करेंगे।

वाल्मीकि ने अपने काव्य-संग्रहों में यथार्थ में जुड़े काव्य बिम्बों का प्रयोग किया है। उन्होंने दलितों की वेदना, पीड़ा, आक्रोश को यथार्थ रूप में चित्रित किया है:-

"मैंने दुख झेले

सहे कष्ट पीढ़ी-दर-पीढ़ी इतने

फिर भी देख नहीं पाये तुम

मेरे उत्पीड़न को

इसलिए युग समूचा

लगता है पाखंडी मुझको।"[10]

वाल्मीकि जी की कविताओं में आक्रोश एवं विद्रोह स्वतः ही लक्षित हो जाता है। यहां भोगा हुआ यथार्थ है न कि बंद कमरे में बैठकर काल्पनिक उड़ाने भरने की गाथा लिखना, जिनसे सौंदर्य बोध के नये-नये तरीके ईजाद हों।

काव्य-मिथक

मिथक अंग्रेजी के 'मिथ' (Myth) शब्द से बना है। ये मूल रूप से धार्मिक आख्यानों, कर्मकांडों तथा संस्कृति से गहरे अर्थों में जुड़े होते हैं। सभ्यता और संस्कृति के विकास, जीवन और जगत के प्रति आस्था तथा मानव जाति की एकता में मिथकों का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

दलित साहित्य में काव्य-मिथकों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। "दलित कवियों ने अपनी रचनाओं में मिथकों का भरपूर प्रयोग किया है। 'कर्ण', 'एकलव्य', 'शम्बूक' आदि नायक की भूमिका में प्रतिष्ठित हुए हैं।पुरातन और पौराणिक मिथकों के द्वारा विद्रोह और विरोधात्मक स्वर को अभिव्यक्ति मिली है।"

वाल्मीकि जी की रचनाओं में भी मिथक कथाएं जातक कथाएं दलित जीवन की विसंगतियों का चित्रण किया है वाल्मीकि जी की कविता संभोग का कटा सिर की कुछ पंक्तियां दृष्टव्य है:-

शम्बूक, तुम्हारा रक्त जमीन के अंदर
समा गया है,
जो किसी भी दिन
फूटकर बाहर आएगा
ज्वालामुखी बनकर।"[11]

इन पंक्तियों से वाल्मीकि जी का आक्रोश और विद्रोह स्वत: ही लक्षित हो जाता है।

दलित साहित्य में पौराणिक मिथकों का प्रयोग अधिक मात्रा में हुआ। हजारों सालों से शम्बूक और एकलव्य पर किए गए अत्याचार की स्पष्ट झलक आज भी समाज में व्याप्त है। वाल्मीकि जी ने धर्म, दर्शन, पौराणिक मिथकों का प्रयोग अपनी कविताओं में प्रचुर मात्रा में किया है।

'शायद आप जानते हैं' कविता में वाल्मीकि जी ने यह स्पष्ट किया कि हिंदू वर्ण-व्यवस्था समस्त मानव की ही नहीं अपितु जीव मात्र की आत्मा को एक ही ब्रह्म का अंश मानता है। लेकिन दलितों के प्रति उसका दृष्टिकोण इतना अमानवीय क्यों है?-

"तुम्हारे रचे शब्द
तुम्हें ही डसेंगे सांप बनकर
गंगा किनारे कोई वटवृक्ष ढूंढ लो,
कर लो भागवत का पाठ
आत्मसंतुष्टि के लिए
कहीं अकाल मृत्यु के बाद

भयभीत आत्मा
भटकते-भटकते
किसी कुत्ते या सूअर की मृत देह में प्रवेश न कर जाए।"[12]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि वाल्मीकि जी की कविताओं का मूल स्वर आक्रोश है एवं उन्होंने एक ऐसे समाज की कल्पना की है, जिसमें वर्ण व्यवस्था एवं जातीय दंश समाप्त होकर समानता की भावना हो क्योंकि वाल्मीकि जी घृणा में नहीं, प्रेम की पक्षधरता में विश्वास करते थे।

संदर्भ :-

1. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2001). *दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र.* दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन. पृ. 80
2. वही, पृ. 81
3. वही, पृ. 84
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि कृत : 'बस्स! बहुत हो चुका', संवेदना एवं शिल्प का अध्ययन, रमेश कुमार, गौतम बुद्ध सेंटर, पृ. 96
5. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2001). *दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र.* दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन. पृ. 85
6. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. *बस्स! बहुत हो चुका.* दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 11
7. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. *सदियों का संताप*. गौतम बुद्ध सेंटर, पृ. 33
8. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2012). *शब्द झूठ नहीं बोलते.* दिल्ली : अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स. पृ. 32
9. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (2001). *दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र.* दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन. पृ. 85
10. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. *सदियों का संताप*. गौतमबुद्ध सेंटर, पृ. 24
11. वहीं, पृ. 27
12. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. (1997). *बस्स! बहुत हो चुका.* दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृ. 13

खेल केंद्रित फ़िल्मों का प्रभाव

सचिन प्रताप सिंह*

sachin.fps@ramauniversity.ac.in

सारांश:

प्रस्तुत शोध के माध्यम से खेल केंद्रित फ़िल्मों का समाज परक फ़िल्मों के माध्यम से किस प्रकार का बदलाब आता है। आज शिक्षा के क्षेत्र और खेल-कूद में सिनेमा कितना प्रभावी है। हिंदी सिनेप्रेमियों को हमराज, गुमराह, धूल का फूल, बागवान जैसी बेहतरीन फिल्मों से रोमांचित करने वाले बलदेव राज चोपड़ा उन फिल्मकारों में थे जिनका मानना था कि यह माध्यम सामाजिक मुद्दों के प्रति लोगों को जागरूक करने का महत्त्वपूर्ण तरीका है और उन्होंने हमेशा इसी धारणा को ध्यान में रखते हुए मनोरंजक फिल्में बनायीं फिल्मकारों ने सामाजिक समस्याओं पर भी फिल्म बनाई है। अछूत-कन्या, विराजबहू, दो बीघा जमीन इस श्रेणी की कृतियां थी। फिल्म सिर्फ मनोरंजन का ही साधन नहीं है बल्कि एक सशक्त संचार माध्यम भी है। हिंदी फिल्मों की बात करें या भारतीय फिल्मों की, सिर्फ उन्हीं में नहीं दुनिया भर की फिल्मों का खेल हिस्सा रहा है। मानवीय संवेदनाओं की इस सबसे कोमल अनुभूति का तौर-तरीका जरूर समय के साथ साथ बदलता रहा है।

की-वर्ड : *सिनेमा, खेल, समाज, मीडिया, फिल्म*

प्रस्तावना

समाज में मीडिया की भूमिका संवाद-वहन की होती है। वह समाज के विभिन्न वर्गों, सत्ता केन्द्रों, व्यक्तियों और संस्थाओं के बीच पुल का कार्य करता है। आम लोगों तक पहुंचने का एक लोकप्रिय माध्यम फिल्म है। फिल्मों का सबसे अधिक इस्तेमाल मनोरंजन के लिए होता है। हिंदी सिनेप्रेमियों को हमराज, गुमराह, धूल का फूल, बागवान जैसी बेहतरीन फिल्मों से रोमांचित करने वाले बलदेव राज चोपड़ा उन फिल्मकारों में थे जिनका मानना था कि यह माध्यम सामाजिक मुद्दों के प्रति लोगों को जागरूक करने का महत्त्वपूर्ण तरीका है और उन्होंने हमेशा इसी धारणा को ध्यान में रखते हुए मनोरंजक फिल्में बनायीं फिल्मकारों ने सामाजिक समस्याओं पर भी फिल्म बनाई है।अछूत-कन्या, विराजबहू, दो बीघा जमीन इस श्रेणी की कृतियां थी। फिल्म

* **असिस्टेंट प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, रामा विश्वविद्यालय, कानपुर**

सिर्फ मनोरंजन का ही साधन नहीं है बल्कि एक सशक्त संचार माध्यम भी है। हिंदी फिल्मों की बात करें या भारतीय फिल्मों की, सिर्फ उन्हीं में नहीं दुनिया भर की फिल्मों काखेल हिस्सा रहा है। मानवीय संवेदनाओं की इस सबसे कोमल अनुभूति का तौर-तरीका जरूर समय के साथ साथ बदलता रहा है।

इंटरनेट और टेलीविजन के इस युग में सिनेमा आज भी कम लोकप्रिय नहीं है भारत जैसे देश में ही नहीं पश्चिम में भी टेलीविजन के जरिए मनोरंजन प्रदान करने वाले कार्यक्रमों में फिल्मों और फिल्म आधारित कार्यक्रमों की बहुत बड़ी भूमिका है।सिनेमा एक लोकप्रिय जनसंचार माध्यम है जिसका सबसे अधिक उपयोग फीचर फिल्म बनाने के लिए किया जाता है। आज दुनिया की सभी महत्त्वपूर्ण भाषाओं में फिल्म बनती है। भारत में ही लगभग 25 भाषाओं में फिल्म बनती हैं। इनमें हिंदी, तमिल, तेलुगू, मलयालम, कन्नड़, बंगला आदि भाषाओं में सबसे अधिक फिल्में बनती है। टेलीविजन के इस दौर में भी भारत दुनिया में सबसे ज्यादा फिल्म बना रहा है। फिल्मों को आमतौर पर मनोरंजन का माध्यम समझा जाता है अधिकांश फिल्मकार यही दावा करते हैं कि उनका मकसद स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करना है। लेकिन फिल्में एक सामाजिक उत्पाद भी हैं। फिल्मों के माध्यम से जो जीवन प्रस्तुत किया जाता है वह जीवन चाहे जितना काल्पनिक और यह अयथार्थ क्यों ना हो, लेकिन उसका अपने समय और समाज से किसी न किसी तरह का रिश्ता जरूर होता है। फिल्म के द्वारा ऐसी कल्पना और ऐसा अयथार्थ प्रस्तुत करना संभव ही नहीं है। जिसका वास्तव से कोई संबंध न हो फिल्म के बारे में बात करते हुए यह स्वाभाविक है कि उसमें व्यक्त जीवन और समाज के उस परिप्रेक्ष्य को समझा जाए जिससे वह प्रेरित है। वह प्रेरणा चाहें सकारात्मक हो या नकारात्मक।

समूचे विश्व सहित भारत में भी महिलाओं की स्थिति में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिला बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रही हैं और सफल भी हो रही हैं। बात चाहे राजनीति की करें या व्यवसाय की, मीडिया की हो या भारी उद्योग, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, अंतरिक्ष और विज्ञान शोध चाहे खेल के हर क्षेत्र में महिलाओं ने अपनी योग्यता और दक्षता साबित की है। जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जहां महिलाओं की प्रभावी उपस्थिति न हो। प्रस्तुत शोध के लिए अध्ययन हेतु खेल से संबंध रखने वाली चक दे इंडिया, मैरी काँम, दंगल फिल्म का चुनाव किया गया है।

साहित्य पुनरावलोकन

साहित्य पुनरावलोकन का मुख्य उद्देश्य शोध समस्या के सैद्धांतिक पहलुओं को चरणबद्ध तरीके से रेखांकित करना होता है। यहां जिन शोध साहित्य का पुनरावलोकन किया गया है वे शोध समस्या के मूल प्रश्नों यथा सिनेमा, समाज, खेल, मीडिया व सामाजिक बदलाव से संबंधित हैं।

सुमित मोहन (2007) ने अपनी पुस्तक (मीडिया लेखन) में जनसंचार और मीडिया का विस्तृत वर्णन किया है। इन्होंने जनसंचार और मीडिया की परिभाषा को आसान भाषा में परिभाषित किया है जिसके कारण

मीडिया और जनसंचार के बारे में आसानी से समझा जा सकता है। इसमें संचार के कार्य एवं संचार की प्रौधोगिकी एवं चुनौतियों को भी आसान भाषा में समझाया है। संचार माध्यमों के स्वरूप एवं मीडिया के माध्यमों के बारे में बताया गया है। परंपरागत संचार माध्यम तथा आधुनिक संचार माध्यम केबारे में बताया गया है।

प्रसून सिन्हा (2006) ने अपनी पुस्तक (भारतीय सिनेमा) में भारतीय सिनेमा के बारे में समझाया है। इस पुस्तक के अंतर्गत भारतीय सिनेमा की एक अनंत यात्रा है, जिसके अंतर्गत सिनेमा का जन्म, भारतीय संस्कृति और सिनेमा, सिनेमा की भाषा, सिनेमा समाज और बाजार, भारतीय इतिहास और स्वतंत्रता के बाद का हिंदी सिनेमा, भारतीय इतिहास, समांतर कला, फिल्म आंदोलन इत्यादि के बारे में पूर्ण रूप से समझाया गया है। किसी भी देश की कला और साहित्य उस देश की संस्कृति का आईना होता है। इस पुस्तक में भारतीय सिनेमा की यात्रा का वर्णन किया गया है। फिल्म एक साहित्य है। फिल्म अपने आप में सिमटी हुई एक संपूर्ण कला का संसार है। फिल्म का आकर्षण अधिकतर युवाओं को अपनी ओर सहज ही खींच लेता है।

जवरीमल्ल पारख (2006) ने अपनी पुस्तक (हिंदी सिनेमा का समाजशास्त्र) में सिनेमा के समाजशास्त्र बारे में समझाया गया है। इसमें हिंदी सिनेमा और भारतीय समाज, आज का समाज और सिनेमा का यथार्थ, व्यवसायिकता और सामाजिकता का द्वंद, सामाजिकता बनाम प्रतियोगिता, बाजार का दबाव और विस्थापन का दर्द, हिंदी सिनेमा और यौन नैतिकता का प्रश्न, भारतीय सिनेमा में जन प्रतिरोध, सामूहिकता का माध्यम लोकतांत्रिक समाज, सिनेमा में सर्जनशीलता का सामाजिक पक्ष इत्यादि के बारे में समझाया गया है। इस पुस्तक के माध्यम से फिल्मों के कारण समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को समझाया गया है। सिनेमा आज के समय का एक सशक्त माध्यम है और इसे सिर्फ मनोरंजन का माध्यम मानना न पर्याप्त है और नहीं उचित है।

पदमपति शर्मा (2007) ने अपनी पुस्तक (खेल पत्रकारिता) में बताया है भारत जैसे देश में जहां चाहे अनचाहे क्रिकेट के प्रति जादुई आकर्षण एवं लगाव है वहीं इससे जुड़ी पत्रकारिता के लिए असीमित संभावनाओं के द्वार खोल दिए हैं। खेल पत्रकारिता के दिन-ब-दिन विस्तृत होते फलक ने इस क्षेत्र में योग्य एवं दृश्य पत्रकारों की मांग को भी बढ़ा दिया है।

अध्ययन का क्षेत्र

किसी भी शोध कार्य के लिए जब शोध प्रश्न का निर्माण किया जाता है तो अध्ययन क्षेत्र में शोध से संबंधित तथ्यों का संकलन विभिन्न शोधविधियों द्वारा किया जाता है। इसे कुशवाह राजपूत राजा (सवाई जयसिंह, द्वितीय ने 1727 में बसाया था। उस समय का यह प्रथम नगर था जो योजनाबद्ध ढ़ंग से बसाया गया था। इस का ख़ाकातैयार किया था वास्तुशिल्पी विद्याधरभट्टाचार्य ने।

शोध उद्देश्य

- खेल केंद्रित फिल्मों द्वारा समाज की मानसिकता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन
- खेल केंद्रित फिल्मों द्वारा महिलाओं पर पड़ने वाले प्रभाव को जानना
  1. खेलकूद
  2. सामाजिक विकास
  3. मानसिक विकास
- युवा वर्ग पर खेल केंद्रित फिल्मों के प्रभाव का अध्ययन
- खेल के विकास में फिल्मों का योगदान

शोध प्रश्न

- खेलों के विकास में खेल केंद्रित फिल्मों का योगदान किस तरह का है ?
- खेल केंद्रित फिल्मों के प्रति आम जनता की अभिरूचि कैसी है ?
- खेल केंद्रित फिल्मों द्वारा जागरूकता का स्तर किस तरह का है ?
- खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से समाज में महिला खेल के प्रति पड़ने वाले प्रभाव को जानना ?
- खेल केंद्रित सिनेमा समाज को कैसे जागरूक एवं प्रभावित कर रहा है ?

शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक शोध पद्धति द्वारा किया गया है। शोध के उप-प्रकार के रूप में विवरणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है। विवरणात्मक शोध का उद्देश्य चरों के मध्य सम्बन्ध का क्या आधार है।

प्रश्नावली

प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रश्नावली के माध्यम से प्राथमिक आंकड़ों को एकत्र किया गया।

प्रतिदर्श एवं प्रतिदर्श चयन का आधार

- प्रतिदर्श के चयन का प्रकार प्रायिकता और उपप्रकार उद्देश्यात्मक का उपयोग किया गया है।
- प्रस्तुत शोध में अध्ययन के लिए 50 (उद्देश्यात्मक) प्रतिदर्श का चयन किया है।
- 12 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों को शामिल किया गया हैं।
- 25 महिला एवं 25 पुरुषों को शामिल किया गया हैं।

आंकड़ों का विश्लेषण

- शोधार्थी द्वारा संग्रहीत किए गए आकड़ों का विश्लेषण

तथ्य प्रस्तुति एवं विश्लेषण

प्रस्तुत शोध अध्ययन के क्रम में शोधार्थी ने आंकड़ा चयन हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोत का उपयोग किया। प्राथमिक स्रोत के अंतर्गत 50 उत्तरदाताओं से मिश्रित प्रश्नावली की भरवाई गई। उत्तरदाताओं के चयन हेतु 18-62 आयु वर्ग की सीमा रखी गई। उत्तरदाताओं में महिला एवं पुरुष की संख्या समानुपाती थी। गूगल फॉर्म[†] के माध्यम से प्रश्नावली को पूर्ण करवाया गया।

लिंग

उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकड़े खेल संबंधी फिल्मों से पड़ने वाले प्रभाव की स्थिति को स्पष्ट करते हैं। खेल केंद्रित फिल्मों की विवेचना में महिलाओं एवं पुरुषों की मौजूदगी समानुपाती रही। प्रश्नावली की प्रतिपूर्ति हेतु चयनित महिला पुरुष की संख्या समानुपाती है।

आयु

उत्तरदाताओं को आयु वर्ग के अनुसार 10-20,20-30, 30-40,40 से अधिक चार भागों में बाटा गया है आयु वर्ग के अनुसार उत्तरदाताओं से प्रश्नावली की प्रतिपूर्ति करवाई गई है क्योंकि आयु वर्ग के अनुसार उत्तरदाताओं के दृष्टिकोण में भिन्नता पाई जाती है अतः अलग-अलग आयु वर्ग के उत्तरदाताओं से करवाई गई है।

1. आप मानते हैं कि खेल केंद्रित फिल्मों से समाज की मानसिकता पर प्रभाव पड़ता है ?

हाँ- 47 94%	ना- 02 04%	पता नहीं- 01 02%

जब उत्तरदाताओं से खेल केंद्रित फिल्मों से समाज की मानसिकता पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में पूछा गया तो 94 % ने कहा कि खेल केंद्रित फिल्मों से समाज की मानसिकता पर प्रभाव पड़ता है वहीं 4 % ने कहा कि खेल केंद्रित फिल्मों से समाज की मानसिकता पर प्रभाव नहीं पड़ता है और 2% ऐसे थे जिनको इस बारे में जानकारी नहीं थी। उत्तरदाताओं से इस प्रश्न को पूछने का उद्देश्य खेल केंद्रित फिल्मों से समाज की मानसिकता पर पड़ने वाले प्रभाव को जानना था। फिल्म एक सरल माध्यम है और इसकी पहुंच अन्य माध्यमों की अपेक्षा में ज्यादातर लोगों तक है। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर कहा जा सकता है, खेल केंद्रित फिल्मों से समाज की

[†]गूगल https://www.google.com/forms/about/

मानसिकता पर प्रभाव पड़ता है। उत्तरदाताओं को उपयुक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारेआंकड़े चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

2.आप मानते हैं कि खेल केंद्रित फिल्मों से समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है ?

हाँ- 46 92%	ना- 01 02%	पता नहीं- 03 06%

जब उत्तरदाताओं से खेल केंद्रित फिल्मों से समाज पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभाव के बारे में पूछा गया तो 92% ने कहा कि खेल केंद्रित फिल्मों का समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, वहीं 2% उत्तरदाताओं को कहना था खेल केंद्रित फिल्मों से समाज पर सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है और 6% उत्तरदाता ऐसे थे जिन्हें नहीं पता था खेल केंद्रित फिल्मों से समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल केंद्रित फिल्मों से समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

3. खेल केंद्रित फिल्मों का समाज पर कितना प्रभाव पड़ता है ?

थोड़ा बहुत- 23 46%	बहुत- 17 34%	बहुत ज्यादा- 10 20%

जब उत्तरदाताओं से खेल केंद्रित फिल्मों से समाज पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में पूछा गया तो 46 % ने कहा कि खेल केंद्रित फिल्मों का समाज पर थोड़ा बहुत प्रभाव पड़ता हैं, वहीं 34% उत्तरदाताओं को कहना था खेल केंद्रित फिल्मों से समाज बहुत प्रभाव पड़ता हैं और 20%उत्तरदाताओं को कहना था खेल केंद्रित फिल्मों का समाज पर बहुत प्रभाव पड़ता हैं। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल केंद्रित फिल्मों से समाज पर बहुत प्रभाव पड़ता हैं। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

4. इन फिल्मों के माध्यम से क्या महिलाएं खेल के प्रति जागरूक होती है ?

हाँ - 46 92%	ना- 02 04%	पता नहीं - 02 04%

जब उत्तरदाताओं से खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से क्या महिलाएं खेल के प्रति जागरूक होती हैं के बारे में पूछा गया तो 92 % ने कहा कि खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से महिलाएं खेल के प्रति जागरूक होती है,

वहीं 04% उत्तरदाताओं का कहना था कि खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से महिलाएं खेल के प्रति जागरूक नहीं होती है और 04%उत्तरदाताओं को इस बारे मे नहीं पता था। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से महिलाएं खेल के प्रति जागरूक होती हैं। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

5. खेल केंद्रित फिल्में महिलाओं के मानसिक विकास में सहायक होती हैं ?

हाँ - 88%	ना- 04%	पता नहीं - 08%

जब उत्तरदाताओं से खेल केंद्रित फिल्में महिलाओं के मानसिक विकास में सहायक होती हैं के बारे में पूछा गया तो 88% ने कहा कि खेल केंद्रित फिल्में महिलाओं के मानसिक विकास में सहायक होती हैं, वहीं 04% उत्तरदाताओं को कहना था खेल केंद्रित फिल्में महिलाओं के मानसिक विकास में नहीं सहायक होती हैं और 08%उत्तरदाताओं को इस बारे में नहीं पता था। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल केंद्रित फिल्में महिलाओं के मानसिक विकास में सहायक होती हैं। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

6. **खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से युवा वर्ग खेल के प्रति जागरूक हो रहे हैं ?**

हाँ – 46 92%	ना- 02 04%	पता नहीं – 02 04%

जब उत्तरदाताओं से खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से युवा वर्ग खेल के प्रति जागरूक हो रहे हैं के बारे में पूछा गया तो 92 % ने कहा कि खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से युवा वर्ग खेल के प्रति जागरूक हो रहे हैं, वहीं 04% उत्तरदाताओं का कहना था कि खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से युवा वर्ग खेल के प्रति जागरूकनहीं हो रहे हैं और 04%उत्तरदाताओं को इस बारे मे नहीं पता था। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से युवा वर्ग खेल के प्रति जागरूक हो रहे हैं। फिल्म संचार का एक सशक्त माध्यम है। वर्तमान समय में फिल्मों का युवाओं की सोच पर काफी प्रभाव पड़ता है, यह प्रभाव सकारात्मक-नकारात्मक हो सकते हैं। फिल्मों को समाज के आईने के रूप में देखा जाता है अतः फिल्म युवाओं पर ही नहीं बल्कि समाज पर भी अपना प्रभाव डालती हैं। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

7. खेल केंद्रित फिल्में खेल के विकास में सहायक होती हैं ?

हाँ – 43	86%	ना- 03	06%	पता नहीं - 04	08%

जब उत्तरदाताओं से खेल केंद्रित फिल्में खेल के विकास में सहायक होती हैं के बारे में पूछा गया तो 86% ने कहा कि खेल केंद्रित फिल्में खेल के विकास में सहायक होती हैं, वहीं 06% उत्तरदाताओं का कहना था कि खेल केंद्रित फिल्में खेल के विकास में सहायकनहीं होती हैं और 08%उत्तरदाताओं को इस बारे मे नहीं पता था। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल केंद्रित फिल्में खेल के विकास में सहायक होती हैं। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

8. खेल आधारित फिल्म के प्रति सामाजिक जागरुकता का स्तर **कितना है ?**

सामान्य 34	68%	ज्यादा 12	24%	बहुत ज्यादा 04	08%

जब उत्तरदाताओं से खेल आधारित फिल्म के प्रति सामाजिक जागरुकता के स्तरके बारे में पूछा गया तो 68% ने कहा कि खेल आधारित फिल्म के प्रति सामाजिक जागरुकता का स्तर सामान्य है, वहीं 24% उत्तरदाताओं का कहना था कि खेल आधारित फिल्म के प्रति सामाजिक जागरुकता का स्तर ज्यादाहैं और 08%उत्तरदाताओं के अनुसार जागरूकता का स्तर बहुत ज्यादा हैं। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल आधारित फिल्म के प्रति सामाजिक जागरुकता का स्तरसामान्यहैं। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

9. खेल आधारित फिल्मों के कारण समाज की रूढ़िवादी सोच पर प्रभाव पड़ता है?

हाँ 38	76%	ना 06	12%	पता नहीं 06	12%

जब उत्तरदाताओं से खेल आधारित फिल्मों के कारण समाज की रूढ़िवादी सोच पर प्रभाव पड़ता हैके बारे में पूछा गया तो 76% ने कहा कि खेल आधारित फिल्मों के कारण समाज की रूढ़िवादी सोच पर प्रभाव पड़ता है, वहीं 12% उत्तरदाताओं का कहना था कि खेल आधारित फिल्मों के कारण समाज की रूढ़िवादी सोच पर प्रभाव नहीं पड़ता हैऔर 12%उत्तरदाताओं को इस बारे मे नहीं पता था। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल आधारित फिल्मों के कारण समाज की रूढ़िवादी सोच पर प्रभाव पड़ता है। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

10. खेल आधारित फिल्म समाज को जागरुक करती हैं ?

हाँ 48 96%	ना 00 00%	पता नहीं 02 04%

जब उत्तरदाताओं सेखेल आधारित फिल्में समाज को जागरुक करती हैंके बारे में पूछा गया तो 96 % ने कहा कि खेल आधारित फिल्में समाज को जागरुक करती हैं और 4%उत्तरदाताओं को इस बारे मे नहीं पता था। उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है, खेल आधारित फिल्में समाज को जागरुक करती हैं। उत्तरदाताओं को उपरोक्त प्रश्न के लिए एक से अधिक उत्तर चुनने का विकल्प नहीं दिया गया था। उपरोक्त प्रश्न के संदर्भ में उत्तरदाताओं से मिले सारे आंकड़े उनके द्वारा चुने गए विकल्पों पर आधारित हैं।

निष्कर्ष

उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि का उपयोग कर प्रश्नावली द्वारा आंकड़ों का संकलन किया गया है। चक दे इंडिया, मैरी कॉम, दंगल फिल्मों का अंतर्वस्तु विश्लेषण किया गया है। तमाम आंकड़ों के विश्लेषण एवं तथ्यों से जो निष्कर्ष निकले हैं, वे निम्नलिखित है-

- अध्ययन से प्राप्त आंकड़ों एवं तथ्यों के अनुसार खेल केंद्रित फिल्मों से समाज की मानसिकता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। समाज ने अपनी पुरानी सोच को छोड़कर महिलाओं के प्रति संवेदनशील होने लगा हैं तथा महिलाओं को आगे आने के मौके मिलने लगे हैं।
- फिल्में संचार का सशक्त माध्यम होती है और सामाजिक बदलाव में सहायक होती है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार खेल केंद्रीत फिल्मों का समाज की मानसिकता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। फिल्मों के माध्यम से फिल्मकार जो संदेश देना चाहते हैं उस संदेश को समाज ग्रहण करता है तथा उस संदेश का पालन करता है।
- वर्तमान में महिलाएं करियर के हर क्षेत्र में आगे बढ़ रही है, चाहें वह किसी भी क्षेत्र आर्मी, विज्ञान, आईएएस, आईपीएस सरकारी नौकरियों में महिलाएं पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ रही है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार यह निष्कर्ष निकलता है कि खेल केंद्रित फिल्मों का समाज पर ज्यादा प्रभाव पड़ता है।
- प्राप्त आंकड़ों के अनुसार खेल केंद्र फिल्म में महिलाओं के विकास में अपना पूर्ण योगदान निभाती हैं। महिलाओं की सोच में बदलाव आए हैं।
- प्राप्त आंकड़ों के अनुसार यह पता चला की खेल केंद्रित फिल्मों के माध्यम से युवाओं में खेल के प्रति जागरूकता उत्पन्न हो रही है। युवाओं को खेल के बारे में जानकारी प्रदान करने में फिल्मों की एक बड़ी भूमिका होती है। नये-नये खेलों के बारे में ज्यादा से ज्यादा जानकारियां आसानी से प्राप्त होती

हैं,तथा खिलाड़ियों द्वारा किए गए संघर्ष का पता चलता है जिसके कारण युवाओं के अंदर आत्मविश्वास बढ़ता है।

- प्राप्त आंकड़ों से यह ज्ञात होता है कि खेल केंद्रित फिल्में खेल के विकास में सहायक होती हैं। सरकार, खेल अधिकारियों को खिलाड़ियों के समक्ष आने वाली समस्याओं के बारे में पता चलता है। युवा वर्ग इन फिल्मों के माध्यम से खेल के प्रति जागरुक होकर खेलों से अपना जुड़ाव बनाता है।
- आंकड़ों के अनुसार खेल आधारित फिल्मों से समाज जागरूक होता है। समाज की रूढ़िवादी सोच में बदलाव आ रहे हैं। समाज अब महिलाओं को पुरुषों के बराबर मौके देने लगा है जिससे महिलाएं समाज में आगे आ रही हैं और सामाजिक कार्यों में अपना पूर्ण योगदान दे रही हैं। वर्तमान समय में लड़के लड़कियों में होने वाला फर्क भी दिन-ब-दिन कम होता जा रहा है। लड़कियों के खानपान, शिक्षा, पहनावे इत्यादि पर ध्यान दिया जा रहा है जिससे लड़कियों में आत्मविश्वास बढ़ रहा है तथा लड़कियां हर क्षेत्र में आगे आ रही हैं।
- उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकड़ों से यह पता चलता है कि खेल केंद्रित फिल्मों के प्रति उनकी अभिरुचि अन्य फिल्मों से ज्यादा है, क्योंकि इन फिल्मों में अश्लीलता नहीं होती है। इन फिल्मों को परिवार के सभी सदस्यों के साथ आसानी से देखा जाता है। यह फिल्म समाज परक होती है। इन फिल्मों में फिल्मकार द्वारा संदेश दिया जाता है यह संदेश समाज तथा परिवार के लिए महत्त्वपूर्ण होता है।
- उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकड़ों से यह पता चलता है कि खेल केंद्रित फिल्मों में सर्वाधिक दंगल को पसंद किया गया। इस फिल्म में एक पिता समाज तथा गांव वालों से लड़कर अपनी बेटियों को कुश्ती जैसे खेल में आगे बढ़ाता है। गांव के लोगों यह सोचते है कि कुश्ती खेल महिलाओं के लिए नहीं है कुश्ती खेल को पुरुष ही खेल सकता है। महिलाओं में शारीरिक बल कम होता है जिसके कारण यह खेल महिला नहीं खेल सकती हैं।
- प्राप्त आंकड़ों के अनुसार खेल केंद्रित फिल्मों के कारण समाज की रूढ़िवादी सोच पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। समाज अपनी मानसिकता को महिलाओं के प्रति बदल रहा है तथा महिलाओं को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करने लगा है। समाज में आए बदलाव का मुख्य कारण ये फिल्में हैं। फिल्मों के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों से होने वाली समस्याओं के बारे में पता चलता है, तथा समाज को सोचने पर मजबूर करता है समाज अपनी रुढ़िवादी सोच को बदले। इन फिल्मों के कारण समाज, माता-पिता लड़की-लड़कियों में भेदभाव करना कम कर दिया है।

निष्कर्षत: देखा जाए तो कुल मिलाकर यह परिणाम सामने आए हैं कि वर्तमान में फिल्मों का समाज से गहरा नाता है। लोग फिल्मों को मनोरंजन के साधन के रूप में ही नहीं देखते हैं। बल्की फिल्मों से लोगों को विभिन्न प्रकार की जानकारियां भी प्रदान होती हैं। फिल्मों के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों के बारे में पता चलता है तथा उन कुरीतियों को दूर करने के लिए प्रेरणा मिलती है। खेल केंद्रित फिल्में समाज की रूढ़िवादी सोच पर

प्रहार करती हैं तथा लोगों को रूढ़िवादी सोच में बदलाव लाने हेतु प्रेरित करती है। जिससे इस सोच को बदल कर समाज को एक नई दिशा मिलें।

संदर्भ:

आहुजा, राम. (2008). *सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान*,जयपुरःरावत पब्लिकेशनन्स

गोपाल, डॉ उषा. (2006). *खेलकूद और महिलाएं*,नई दिल्लीःस्पोर्टस पब्लिकेशन

डॉ. अग्रवाल,विजय (2001). *आज का सिनेमा,* नई दिल्लीःनीलकंठ प्रकाशन

डॉ.लवानिया, एम. एम. (2008). *समाजशास्त्र के सिद्धन्त*. जयपुरःरिसर्च पब्लिकेशन.

पारख, जवरीमल्ल. (2006). *हिंदी सिनेमा का समाजशास्त्र*. नई दिल्लीः ग्रंथ शिल्पी

पारख, जवरीमल्ल. (2006). *हिंदी सिनेमा का समाजशास्त्र*. नई दिल्लीःग्रंथ शिल्पी

मोहन, सुमित(2007). *मीडिया लेखन*. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन.

राजगढ़िया, विष्णु. (2008). *जनसंचार सिध्दान्त और अनुप्रयोग*. इलाहाबादःराधाकृष्ण प्रकाशन

शर्मा, पदमपति (2007). *खेल पत्रकारिता*. नई दिल्लीः प्रभात प्रकाशन

शर्मा, वीरेन्द प्रकाश. (2015). *रिसर्च मेथडॉलॉजी*,जयपुरःपंचशील प्रकाशन

सिन्हा, प्रसून. (2006). *भारतीय सिनेमा*. नई दिल्लीः श्री नटराज प्रकाशन.

सिन्हा, प्रसून. (2006). *भारतीय सिनेमा*. नई दिल्लीःश्री नटराज प्रकाशन

वेबसाइट-

- https://hi.wikipedia.org/wiki/भारतीय_सिनेमा_का_इतिहास
- dainikbhaskar.com | Sep 05, 2014, 13:14 IST,मैरी कॉम
- dainikbhaskar.com | Dec 23, 2016, 11:33 IST.दंगल फिल्म
- http://www.amarujala.com/photogallery/entertainment/bollywood/aamir-khan-interview-for-dangal
- http://www.amarujala.com/newsarchives/indianewsarchives/interview-of-boxer-mary-kom-hindi-news-rm
- https://www.youtube.com/watch?v=WBx8MqDw3eY

आखिरी कलाम : भारतीय राजनीति और समाज का सच

शिव कुमार मेहता*

shivkumarmehta135@gmail.com

दूधनाथ सिंह का 'आखिरी कलाम' उपन्यास वर्ष 2007 में प्रकाशित हुआ है। यह एक वृहद आकार का उपन्यास है। इसकी कथावस्तु का आधार 1992 में अयोध्या में हिंदुत्ववादी शक्तियों द्वारा ध्वस्त की गयी बाबरी मस्जिद और उससे उत्पन्न राष्ट्रीय स्तर पर फसाद है। सदियों से चली आ रही संस्कृति की विरासत की ट्रेजडी है। वैसे उपन्यास का यह शीर्षक भक्तिकाल के प्रेममार्गी महाकवि जायसी की एक कृत्ति 'आखिरी कलाम' से लिया गया है। 06 दिसम्बर, 1992 को बाबरी मस्जिद को जमीनदोज करना भारतीय समाज, इतिहास एवं संस्कृति के लिए दुखद बताया गया। यह उपन्यास भारतीय साझा संस्कृति को इस तरह नष्ट करने पर प्रश्न उठाता है। क्योंकि वह घटना जन-समुदाय को झकझोरने वाली थी।

'आखिरी कलाम- धर्म को फसाद के पर्याय के रूप में प्रस्तुत करने की एक खूबसूरत वैचारिक रचना और एक अर्थ में 'विरचना' है। 'सारे फसादों की जड़ में धर्म है- इस उपन्यास का बीज तत्त्व है। जिसकी आधार-भूमि अयोध्या है। वही अयोध्या जहाँ पर राजा रामचन्द्र जी के पैदा होने की बात कही जाती है। जहाँ बाबरी मस्जिद थी। वही बाबरी मस्जिद, जो 06 दिसम्बर, 1992 ई० को अपने को असल हिंदू कहलाने वाले, खौलते खून वाले (जिस हिन्दू का खून न खौला) हिंदू कारसेवकों द्वारा पूर्व नियोजित परियोजना के तहत छैनी, हथौड़ा, बल्लम और बारुद से नेस्तनाबूद कर दी गई। 06 दिसम्बर, 1992 की यह घटना ही उपन्यास की विषय-वस्तु है और आँखों देखीं इस उपन्यास की कथन-शैली। औपन्यासिक संरचना की दृष्टि से कल्पना और यथार्थ के उपयुक्त-अनुपयुक्त उपयोग की सुमीता के रूप में 'सफरनामा' एक डिवाइस है।[1] दूधनाथ सिंह ने इस उपन्यास के माध्यम से एक राष्ट्र, उसकी धार्मिक कट्टरता, उन्माद, धर्मान्धता एवं बहुसंख्यकों की दिशाहीनता को उद्घाटित किया है। बाबरी मस्जिद को तोड़कर बहुसंख्यकों ने भारतीय समाज की एकता, जीवन-सत्य, धर्म-सत्य, दैवी सत्य जैसे सत्यों को भी ध्वस्त किया और लोकतांत्रिक जिंदगी में एक छल-छद्म भरी झूठी मायावी सत्ता को थोप दिया। धर्म, संस्कृति और राजनीति ने मिलकर यह मायावी महाजाल को बुना। उपन्यास में लोहिया से लेकर वामपंथी, बौद्धिकों और वामपंथी पार्टी लाइन और उनकी नीतियों की जगह-जगह आलोचना की गई है। सज्जाद जहीर के साथ लंदन में मार्क्सवाद की ट्रेनिंग लेनेवाले आचार्य तत्सत पांडेय जैसा पुराना और दृढ़ आस्था वाला मार्क्सवादी पार्टी लाइन कुछ मुद्दों पर असहमत होकर पार्टी से अलग है। वह इस उपन्यास में पार्टी की बात पर आलोचना करता है कि अयोध्या जैसे मामलों से निपटने और संघर्ष

* **पी-एच. डी. शोधार्थी, हिंदी विभाग, विनोबा भावे महाविद्यालय, हजारीबाग (झारखण्ड)**

करने की पार्टी की नीति साफ नहीं है, वह भी औरों की तरह ढुलमुल ही है। पर, यहाँ पर इस बहस में बहुत विस्तार में न जाकर बस इतना पूछा जाय कि जो 'आत्मघाती विराग' का रास्ता तत्सत पाण्डेय ने चुना है अथवा उपन्यास में जिस तरह एक रेटारिक की हद तक जाकर असफल प्रतिरोधी शक्तियों की तीखी आलोचना की है, उसके या उस तरह से धर्म की समस्या से मुक्ति पायी जा सकती है। अगर ऐसा है तो फिर बार-बार अयोध्या और बार-बार गुजरात क्यों ? तत्सत पाण्डेय का ही कथन है- दृष्टि का साफ होने का मतलब उसका स्पष्ट होना भी हो सकता है। थोड़ा धुंधला होना, अनिर्णय थोड़ा गड़बड़ होना बेहतर है। जो देख रहे हैं, वह ज्यामितिक शैली है जिसमें त्रिभुज के तीनों अंतःकोणों का योग दो समकोण के बराबर होगा।[2]

दूधनाथ सिंह ने उपन्यास के आरंभ में- 'मेरी तरफ से' में आखिरी कलाम के उद्देश्यों, उसकी संरचना एवं विशेषताओं को साफ लहजे में कहा है- यह कृत्ति उन अर्थों में उपन्यास नहीं हैं, जिसकी अपेक्षा विद्वतजन करेंगे। यहाँ औपन्यासिक गद्य (हिंदी) के भीतर एक 'स्वतंत्रता आंदोलन' है। इसका प्रारूप सफरनामें का है और 'बात बोलेगी' यहाँ एक तकनीक है। इसलिए बहुत कुछ कहा- अनकहा जा सके और चरित्रधर्मी उपन्यासों के कलेवर में तोड़-फोड़ संभव हो सके। घटनाक्रमों का इतिहास कृत्रिम रूप से निर्मित होता है और अब वह उपन्यास का विषय उस तरह से नहीं हो सकता। अब स्मृत्ति और यथार्थ के उलट-फेर और उनके बीच के आरोह-अवरोहों में ही वृतांत एक कला है और वही जीवन और कला-संरचना का अंतरंग सत्य है। इस उपन्यास की चित्रधर्मिता और खण्डित लय को इसी नजरिये से समझा जा सकता है।[3]

दरअसल यह उपन्यास अपने पारंपरिक रूप से 'उपन्यास' के प्रति निर्मित धारणाओं को तोड़ता है। लेखक ने इस उपन्यास को लिखने में एक साथ अतीत, इतिहास, मिथक, संस्मरणों का इस्तेमाल का एक नयी अवधारणा को पेश किया है। लेकिन मिथक को इतिहास में बदलने की साजिश को पर्दापाश किया है। धर्म, समाज, संस्कृति एवं सत्य को लेकर व्यक्ति में जो अर्न्तद्वन्द्व चलता रहता है, 'आखिरी कलाम' की कथावस्तु की शक्ति है और यही इसे जीवंत बनाता है। समाज, जाति, संस्कृति एवं धर्म के अंदर फलते-फुलते अवसरवाद, छल-छद्म को लेखक ने उद्घाटित किया हैं। उनके अनुसार-दरअसल यह कृत्ति धर्म, संस्कृति और राजनीति के अन्तर-छल का उद्घाटित सूक्त है। हमें इस बात का डर नहीं है कि लोग कितने बिखर जायेंगे, डर यह है कि लोग नितांत गलत कामों के लिए कितने बर्बर ढंग से संगठित हो जायेंगे। हमारे राजनीतिक जीवन की एक बहुत-बहुत भीतरी परिधि है, जहाँ 'सर्वानुमति का अवसरवाद फल-फूल रहा है। वहाँ एक आधुनिक बर्बरता की चक्करदार आहत है। ऊपर से सब बुद्ध-बुद्ध, परमपवित्र, कर्मकांडी, एकांतिक लेकिन सार्वजनिक गहन सुभावन, लेकिन अब काई से भरा हुआ, ऑक्सीजन युक्त लेकिन दमघोंटू उत्तेजक लेकिन प्रशांत-सारे छल एक साथ। ऐसे ही संविधान सम्मत जीवन पर यहाँ अनपेक्षित लेकिन वैध टिप्पणियाँ हैं। ऐसे ही जीवन निर्वसन निशा का चीत्कार है। एक आदमी की जिद की आंतरिक रिपोर्ट है।[4] उपन्यास गृह-जंजाल, प्रस्थान पर्व और देव-शमशान तीन खंडों में विभाजित है। इसके चार प्रमुख पात्र हैं- तत्सत पाण्डेय, सविनय, सर्वात्मन, और बिसलेश्वर। इस उपन्यास के संबंध में राजेश जोशी कहते हैं कि- दूधनाथ सिंह जीवन के कई पक्षों को शामिल

करते हुए हमारे समाज का एक वृहद आलोचनात्मक पाठ तैयार करते हैं और अयोध्या को उसके परिणाम के रूप में देखते हैं। इसमें परिवार और संस्कार की संरचनाएँ हैं। धर्म है जो हमें डराता है, अन्धत्त्व प्रदान करता है। दर्शन है जो तर्क विरोधी है। जो तर्कातीत पर आधारित है और अमूर्तन का सृष्टि करता है और फिर अमूर्त्तन के लिए तक बनाता है। हमारी चेतना इतिहास विरोधी है और उसे इतिहास और मिथक में घालमोल करने की संस्कारित लत है। उसे लगता है कि लोग बिना इतिहास के जीने के आदि हैं बल्कि लत पड़ चुकी है। यहाँ हर कथा पुराण-कथा है। इसमें सत्य रोमान में बदल जाता है। सब कुछ सुघड़ और ग्राह्य और लालित्यमया। यहाँ तक कि हिंसा और क्रूरताएँ भी।[5] इस प्रकार दूधनाथ सिंह का 'आखिरी कलाम' उत्कृष्ट उपन्यास है।

संदर्भ :

1. चतुर्वेदी, संतोष कुमार. (संपा.). (2020, जून). *अनहद-9*. संयुक्तांक-15-22, प्रयागराज, उत्तरप्रदेश. पृ. 197.
2. वही. पृ. 201.
3. सिंह, दूधनाथ. (2013). *आखिरी कलाम*. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन. पृ. 05.
4. वही
5. अग्रवाल, डॉ. विजय. (संपा.). (2018, जून). *साहित्य विकल्प*. अंक-06, इलाहाबाद : प्रकाशक विभोर अग्रवाल. पृ. 194.

स्वच्छन्दतन्त्र के चतुर्थ पटल में वर्णित नादसाधना की दार्शनिक मीमांसा

डॉ. प्रदीप[1]

संक्षिप्तिका (Abstract) :-

*भारतीय ज्ञानपरम्परा में परम तत्त्व का साक्षात्कार करना परम लक्ष्य माना गया है। जिसके संदर्भ में भारतीय ज्ञानपरम्परा के ग्रन्थों में आध्यात्म, भक्ति, साधना, समाधि, उपासना एवं योग के विविध आयामों के पदचिह्नों का वर्णन पदे पदे परिलक्षित होता है। इनमें साधना मार्ग को सर्वाधिक कठिन माना गया है। आगम और निगम साहित्य में साधना के संदर्भों का विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है। भारतीय आगम ज्ञानपरम्परा में काश्मीरशैवदर्शन का विशिष्ट स्थान है। इस दर्शन का तन्त्र, आगम, दर्शन, स्तोत्र एवं भक्ति साहित्य का भण्डार बहुत ही विशाल है। काश्मीर शैवदर्शन की आचार्य परम्परा में सोमानन्द, उत्पलदेव और आचार्य अभिनवगुप्त जैसे महनीय आचार्यों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। इनके द्वारा विशाल साहित्य की सृजना की गई है। प्रसिद्ध शैवागम अथवा तन्त्र स्वच्छन्दतन्त्र को काश्मीर शैवदर्शन का आधारभूत ग्रन्थ माना गया है। इसमें स्वच्छन्दभैरव साधना का विस्तारपूर्वक वर्णन प्रतिपादित है। स्वच्छन्दतन्त्र में कुल पन्द्रह पटल हैं। जिसके प्रत्येक पटल का नामकरण किया गया है। इस तन्त्र ग्रन्थ में भगवान अघोरेश की भक्तिसाधना का वर्णन सर्वप्रमुख है। इस कारण से इसका दूसरा नाम अघोरेशतन्त्र है। इसमें स्वच्छन्दभैरव ही अघोरेश हैं। शिवमहिमन्स्तोत्र के लेखक पुष्पदन्त ने स्पष्ट कहा है- **"अघोरान्नापरो मन्त्रः"।**[2] अर्थात् अघोरमन्त्र से बढकर कोई मन्त्र नहीं है। इस मन्त्र की साधना में नादसाधना को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। जिसके द्वारा साधक साक्षात् भैरव को आत्मसात कर लेता है। स्वच्छन्दतन्त्र के चतुर्थ पटल का नाम दीक्षा अभिषेक है। इसमें दीक्षाओं के विविध प्रकारों का वर्णन प्रतिपादित है।*

प्रस्तुत शोधपत्र में ***"स्वच्छन्दतन्त्र के चतुर्थ पटल में वर्णित नादसाधना की दार्शनिक मीमांसा"*** *विषय को केन्द्र में रखकर विचार विमर्श किया गया है।*

शब्द-संकेत (Key-Words) :-

स्वच्छन्द भैरव शब्द का अर्थ, मातृका भैरव पूजन के वर्ग-प्रकार, भैरव का पञ्चवक्त्र स्वरूप विवेचन, साधक के प्रकार, नादसाधना विवेचन शरीर स्थान सहित।

---

[1] **सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग (साहित्य विद्यापीठ), महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

[2] *शिवमहिमन्स्तोत्र,* श्लोक संख्या, 35

विषयवस्तु (Subject) :-

काश्मीर शैवदर्शन की ज्ञानपरम्परा में *स्वच्छन्दतन्त्र* का अन्यतम योगदान है। इसमें अघोरेश भगवान की भक्तिसाधना का विवेचन किया है। स्वच्छन्दतन्त्र में अघोरेश की उपासना पद्धति का विश्लेषणात्मक वर्णन करते हुए शिवसामरस्य भाव का समावेशित वर्णन भी प्रातिपादित है। *स्वतछन्दतन्त्र* की व्याख्या आचार्य क्षेमराज के द्वारा की गई है। यथा – **"क्षेमराजो विवृणुते श्रीस्वच्छन्दनयं मनाक्"।**[3] मुख्यत: *स्वच्छन्दतन्त्र* में मन्त्र, मण्डल, विद्या और मुद्रा चतुष्पीठों की व्याख्या की गई है। इसमें परमशिव के अघोरेश स्वरूप का वर्णन नादसाधना के संदर्भ में विस्तार से उपलब्ध है।

अघोर शब्द का सामान्य अर्थ साधारण रूप से घोर अथवा भयानक न हो अर्थात जो सौम्य अथवा प्रियदर्शी होता है। अघोर शब्द औघड़ का पर्याय है।[4] औघड़ शब्द का संस्कृत रूप अघोर है। अघोर शब्द तुदादिगण में पठित घुर् धातु से निष्पन्न होता है। घुर् धातु में हलन्त होने के कारण घञ् प्रत्यय होता है। अतः घुर् शब्द का अर्थ भयंकर से होता है परन्तु अघोर शब्द का सामान्य अर्थ होता है – सौम्य अथव प्रिय दर्शन वाला। अघोर शब्द शिव के लिए भी प्रयोग किया जाता है। अघोरी परम्परा में औघड़ का प्रयोग प्रचूर मात्रा में मिलता है। शिव से आविर्भावित आघोर परम्परा में साधक अघोर परम्परा को आदिकाल से मानते हैं।

स्वच्छन्दतन्त्र में शिव के अघोरेश स्वरूप की साधना का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। साधक के द्वारा अघोरेश की साधना करते समय सर्वप्रथम शुभ लक्षण वाले आचार्य की पहचान करनी पडती है। जिसमें सभी प्रकार गुण होने चाहिए। स्वछन्दतन्त्र में आचार्य के लक्षणों को स्पष्ट करते हुए कहा गया है- जो आचार्य सत्यवादी, आर्यदेश में उत्पन्न, समस्त अवयवों से युक्त, शिवशास्त्र में विधान का ज्ञाता, ज्ञान एवं ज्ञेय का विशारद, देवकर्म ले लगा हुआ, शान्तप्रिय, वीर्यसमपन्न, त्यागी और शिवशास्त्र प्रेमी होना चाहिए। [5] इसी प्रकार से शिष्य या साधक को भी दयालु, धीर, दम्भ, माया से रहित, अग्नि गुरु के प्रति भक्तिभाव रखने वाले, शास्त्रभक्त, गुरु की सेवा करने वाला, गुरु सेवा प्रेमी, शास्त्र प्रेमी एवं सुशान्त, सभी इन्दियों को वश में रखने वाला होना चाहिए। वही गुरुकृपा के शक्तिपात् का पात्र होता है।[6] इसके पश्चात् साधक को मातृका का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

मातृका भैरव पूजन के वर्ग-प्रकार :- साधना अवस्था में साधक के द्वारा नाद अथवा बिन्दु की साधना करते समय अकार आदि सोलह (स्वरों) के भेद को साक्षात् भैरव (बीज) को साधित करना पड़ता है। जिसमें कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग और संहार (क्ष) को भैरवी (योनि) को साधना में पूजन आदि से

[3] *स्वच्छन्दतन्त्र* टीका, 1-1

[4] *अघोर दर्शन : एक ऐतिहासिक अध्ययन,* पृष्ठ संख्या, 9

[5] *स्वछन्दतन्त्रम्,* प्रथम पटल, श्लोक संख्या, 13-15

[6] *स्वछन्दतन्त्रम्,* प्रथम पटल, श्लोक संख्या, 19-20

अभ्यास किया जाता है। अत: मातृका भैरव की पूजा साधक के द्वारा की जाती है। जिसमें भैरवी पूजन के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन इस प्रकार है।

1. अ वर्ग : महालक्ष्मी का पूजन। **2. क वर्ग : कमलोद्भवा (ब्राह्मी) का पूजन।**
3. च वर्ग : महेशानी का पूजन। **4. ट वर्ग : कौमारी का पूजन।**
5. त वर्ग : नारायणी का पूजन। **6. प वर्ग : वराही का पूजन।**
7. य वर्ग : ऐन्द्री का पूजन। **8. श वर्ग : चामुण्ड़ा का पूजन।**

इस प्रकार से भैरवी स्वरूपा माताओं का पूजन किया जाता है।[7] इसके बाद साधक द्वारा साधना अवस्था में बिन्दु से युक्त त्रयोदश (स्वर) अनन्त का उत्तम आसन हेतु साधना करनी पडती है। साधक इससे संयुक्त होकर ब्रह्मा, विष्णु और महेश क्रमश: सोम, सूर्य और अग्नि के मध्य रखकर साधना का निरन्तर अभ्यास करता है। वह साधना में बिन्दु का भेदन करने वाले हँस अक्षर (हं) के द्वारा अर्धचन्द्र में मूर्ती का ध्यान करता है। साधना अवस्था में वह सर्वप्रथम ऊँकार का निरन्तर उच्चारण करते हुए अघोरेभ्य मन्त्र का जप करना करता है। यथा- **"अघोरेभ्य: घोरेभ्य: घोरतरेभ्य: सर्वत: शर्व सर्वेभ्य: नमस्ते रुद्र एव रूपेभ्यो नम:"।** [8] इस मन्त्र के निरन्तर जप से हजारों जन्मों में भ्रमण कर उपार्जित समस्त पाप स्वत: नष्ट हो जाते हैं। इसी क्रम में यकार से लेकर वकार तक संहार युक्त वर्ण जो मस्तक पर बिन्दु युक्त है, भैरव का मुख है। इस प्रकार ये यं रं वं लं और क्षं पाँच मुख बनते हैं।[9] स्वच्छन्दतन्त्र में स्पष्ट कहा गया है कि इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए तारा, सुतारा, तरणी, सुतारणी आदि पाँच कलाओं का भी ध्यान करते हुए अघोरमन्त्र का आभ्यास करना चाहिए। इससे ज्ञान क्रिया और इच्छा तीन शक्तियाँ बनती हैं। शकार के तीसरे वर्ण षष्ठस्वर ए एवं बिन्दु से युक्त करने पर ज्ञान शक्ति का स्वरूप माना गया है। हंस को बिन्दु से संयुक्त एवं षष्ठस्वर से भेदित बाल इन्दु से युक्त जो नादशक्ति वाले हैं, वही निष्कल भैरव कहे गये हैं। यथा - **"हंसाखो बिन्दुसंयुक्त: षष्ठस्वरभेदित:। बालेन्दुनादशक्त्यन्त: स्वछन्दो निष्कल: स्मृत:"।** [10] इस प्रकार से निष्कल (परमतत्त्व) को प्राप्त करना ही साधक का परम लक्ष्य होना चाहिए।

भैरव का पञ्चवक्त्र स्वरूप विवेचन :- साधना में भैरव के पञ्चवक्त्र स्वरूप बहुत ही विस्तृत भाव में स्पष्ट होता है। यह निष्कल भैरव पाँच वक्त्रों से युक्त है और इसका स्वरूप आठ प्रकार का होता है। जिनका वर्णन इस प्रकार है।[11]

---

[7] *स्वछन्दतन्त्रम्,* प्रथम पटल, श्लोक संख्या, 32-36
[8] *स्वछन्दतन्त्रम्,* प्रथम पटल, श्लोक संख्या, 38-40
[9] *स्वछन्दतन्त्रम्,* प्रथम पटल, श्लोक संख्या, 44-45
[10] *स्वछन्दतन्त्रम्,* प्रथम पटल, श्लोक संख्या, 69
[11] *स्वछन्दतन्त्रम्,* प्रथम पटल, श्लोक संख्या, 76-86

1. जिनमें हान्त यादि एकारान्त षष्ठ कला से युक्त रादि बिन्दुनाद के संयोग से कपालेश नामक भैरव का **मन्त्रस्वरूप** कहा गया है।

2. सान्त बिन्दु उसके नीचे अग्नि यदि छठें स्वर युक्त हो तो उसको **शिखीवाहन** वाला जानना चाहिए।

3. संहार यदि षष्ठस्वर से युक्त हो और षड़ान्त से समन्वित हो तो वह **क्रोधराज** कहा गया है।

4. यदि षष्ठ स्वर से युक्त ही त्रिपद से सम्बन्ध हो तो बिन्दु मस्तक (अर्धचन्द्र) से सम्भिन्न **विकराल** कहा जाता जै।

5. सान्त यदि शाद्य से संयुक्त हो, नीचे षष्ठस्वर लगा हो और चौदहवें पद से अक्रान्त हो तथा बिन्दु और नादान्त से अंलकृत हो, इसे **मन्मथ भैरव** कह गया है।

6. यदि ह, र तथा रादि से युक्त नीचे ऊकार लगा हुआ हो और ऊपर बिन्दु हो तो **मेघनादेश्वर भैरव** कहा गया है।

7. इसी क्रम में क्षकार और सकार के बीच वाला, बिन्दु से युक्त और पञ्चम से विभेदित भैरव स्वरूप **सोमेश्वर** कहा गया है। यह जन्म-मृत्यु का नाशक है।

8. इसी क्रम में बिन्दु अर्धचन्द्र से समायुक्त नादशक्ति से समन्वित विद्याराज कहा गया है। यह महापाप का नाशक है। यह भैरव के आठ स्वरूप साधना में योगी ध्यानस्थ करता है। जब वह ध्यान की अन्तिम अवस्था में लीन होता है तब वह शिवोऽहम् का अनुभव करता है- **"अहमेव परो हंस: शिव परमकारणम्"** का ज्ञाता बन जाता है।[12] शिव के सम्पूर्ण अंलकृत शरीर का वह साक्षात् करता है। यह अनुभव सिद्ध साधक ही कर पाते हैं। साधक के दो प्रकार होते हैं।[13]

1. **शिवधर्मी साधक :-** शिवसाक्षात् का प्रेमी, नियोजित साध्यवान्, अभिषिक्त, विशुद्ध अध्वायुक्त, ज्ञानवान्, दैहिक-दैविक और भौतिक या अपर-परा- परापरा साधाना में पूर्णत: सिद्ध एवं शिवभक्त होना।
2. **लोकधर्मी साधक :-** केवल कर्म करने वाला, फल चाहने वाला, शूभ कार्यों में अनुषक्त आदि एवं अशुभ कार्यों से रहितवान होना।

इस प्रकार साधक की कोटी के अनुसार ही उसको शिवत्त्व की प्राप्ति होती है। इसके लिये भी पहले दीक्षा ग्रहण करनी पड़ती है। गुरु द्वारा प्रदत्त दीक्षा से ही मुक्ति होती है। दीक्षा के पश्चात् साधना अवस्था में निरन्तर शिवत्व के अवयवों को सर्वप्रथम अभ्यसित करना चाहिए। जिनमें बिन्दु, नाद और शक्ति ये तीन

[12] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 399

[13] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 64-65

शिवत्व में स्थित बतलाए गए हैं।[14] शिवत्व सिद्धि के बाद साधक का पुन: जन्म नहीं होता है। यह परमतत्त्व काल, कला, तत्त्व और कारण आदि से रहित है। इसको जानकर साधक मुक्त हो जाता है।

इसमें मन्त्रों का अभ्यास करते समय मन्त्राध्वा का ध्यान एकाग्र होकर किया जाता है। जिसमें ग्यारह पद प्राण में नित्य सञ्चरण करते हैं।

"अकारश्च उकारश्च मकारो बिन्दुरेव च।
अर्धचन्द्रो निरोधि च नादो नादान्त एव च॥
शक्तिश्च व्यापिनी चैव समनैकादशी स्मृता।
उन्मना च ततोऽतीतं निरामयम्"॥

अर्थात् अकार, उकार, मकार, बिन्दु, अर्धचन्द्र, रोधिनी, नाद, नादान्त, शक्ति, व्यापिनी और समना ये ग्यारह पद हैं। उस व्यापिनी से परे उन्मना है। उसके ऊपर ही निरामय पद है।[15] यहाँ हँसोच्चारण में हकार को प्राण कहा गया है। यह उच्चारण स्पष्ट होना चाहिए। जब नाद अकारं, उकार रूपी चरण तथा मकार की मात्रा से युक्त होता है तभी स्पष्ट वर्णोच्चारण होता है। बिन्दु शिर के समायोग से सुस्वर बन जाता है। इस हंस का नाद मुख कहा गया है। मुख ही शब्द को प्रेरित करता है। यह नादस्वरूप हंस जो कि नित्य चलने वाला उच्चार ही वही स्फुट वर्णोच्चारण होता है। अकार जो कि स्वर रहित हकार की अभिव्यक्ति का कारण शिवरूप है जब उससे नादात्मक हंस युक्त होता है। तब ऊकार ही अकार का ऊपर नीचे सञ्चारक होने के कारण चरणरूप होता है। यह अ और उ जब बिन्दु आदि प्रमेय की आसुत्रणा के अनुसारी मकार मात्र से युक्त होता है तब ओऽम् के रूप में उच्चारित होता हुआ सभी साधकों कि अनुभूत होता है। यही रूप वर्णोच्चारण योगियों की भ्रूमध्य में बिन्दुरूप बनता है। यह बिन्दु अकार, उकार और मकार तीन मात्राओं से समस्त भेदमय संसार को समाहित करके विभागरहित वेदनस्वरूप हो जाता है। यह बिन्दु जब शिर के सनायोग को प्राप्त करता है तब अर्धचन्द्र जो कि वेद्य के प्रशान्त हो जाने से ऊर्ध्वोन्मुख होने के कारण स्पष्ट रेखा रूप से (.....) हो जाता है। तब योगरहित व्यक्ति को नाद पथ में प्रविष्ट होने से रोकने के कारण यह रोधिका कहलाता है। यह रोधिका नामक अर्धचन्द्र ईश्वर पद समस्त वाचक से अभिन्न विमर्शप्रधान नाद और नादान्त भूमि को प्राप्त करता है।[16]

नादरूप वदन ही कर्ता हैं और वह शब्द जो कि नादान्त जे रूप में अपना ही रूप हैं,उसको ब्रह्मरन्ध्र तल में प्रेरित करता हुआ स्फुरित होता है। यह नादात्मक प्राण केवल शिरवदन चरण से युक्त होकर नदन करता हुआ हंस कहा जाता है। इस प्रकार से नादान्त रूपता को साधक अभ्यास से सान्त करके आनन्द स्पर्श वाली ब्रह्मबिल में प्रवेश कर जाता है। और हंसत्व को प्राप्त करने के बाद सञ्चरण नहीं करता है। इसके बाद वह

[14] *स्वच्छन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 195 "बिन्दुर्नादस्तथा शक्ति: शिवतत्त्वे व्यवस्थिता:"।
[15] *स्वच्छन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 255-256
[16] *स्वच्छन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, ज्ञानवती हिन्दी व्याख्या, पृष्ठ संख्या, 401- 402

शिवतत्त्व से लेकर पृथ्वी पर्यन्त विश्वमय होकर तथा विश्वोतीर्ण रूप स्फुरण करता है। इस हंस का पाँच कारणों से युक्त होता है। इसमें अकार ब्रह्म का वाचक है। इसका त्याग हृदय में होता है। उकार विष्णु का वाचक है। इसका त्याग कण्ठ में होता है। मकार रुद्र का वाचक है। इसका तालु के मध्य भाग में त्याग होता है और बिन्दु स्वयं ईश्वर है। उसका भूर्वो के मध्य त्याग किया जाता है।

इनमें नाद का सदाशिव में त्याग किया किया जाता है। शक्ति व्यापिनी और समना है, इनका वाच्य अवयव शिव है। अत: मूर्धा के मध्य शक्ति का और मूर्धा के ऊपर व्यापिनी का त्याग करना चाहिए। इस प्रकार छ: त्याग करने के पश्चात् उन्मना का त्याग करके सप्तम तत्त्व में लीन हो जाता है। साधक के लिये ये सभी सूक्ष्म सिद्धि के कारण होते हैं।[17] इनके द्वारा साधक अपनी साधना में सफलता प्राप्त कर हुआ सभी शिवरूप षड् भुवनों आदि का भी ज्ञान कर लेता है। यथा

"भुवनं विग्रहो ज्योति: खं शब्दो मन्त्र एवं च।
बिन्दुनादादि संभिन्नं षड्विध: शिव उच्यते"॥[18]

सतत अभ्यास से वह साधक सभी सात शून्यों का ज्ञान भी प्राप्त कर लेता है और सभी तत्त्वों के साथ समरसता को पा लेता है। सभी विषुवतों से प्राण को गुराजरता हु वह प्रकाशवान् बन जाता है। इसके बाद वह समस्त आगम शास्त्रों का ज्ञाता बनकर स्वयं ज्ञानोपदेश करता है।[19] साधक के द्वारा जब साधना की जाती है तब वह शरीर के आन्तरिक स्थानों का अभ्यास करना पड़ता है। जिसमें हृदय,कण्ठ,तालु, भ्रूमध्य, सदाशिव, सहस्रार, अनाश्रित शिव, त्वक्शेष, परमतत्त्व आदि प्रमुख स्थानों को पूर्णत: शोधन करते हुए साधना करनी पडती है।[20] यहाँ नादसाधना ही सर्वप्रमुख है। जिसका विवेचन यहाँ प्रस्तुत है।

नाद साधना : उद्भव स्थान विवेचन :- नाद की साधना अवस्था में जब साधक निरन्तर अभ्यास करता है तब उसको शरीर की सभी ग्रन्थियों का भेदन करना पड़ता है। जिसमें सर्वप्रथम वह प्राण के द्वारा हृदयकमल की ग्रन्थि का भेदन करता है। इस ग्रन्थि का भेदन होते ही आकाश के समायोग से साधक के अन्दर अकार आदि कला रूप शब्द उत्पन्न होकर वह साधक के अन्दर ही अन्दर उपांशुरूप में स्पष्ट सुनाई देता है। इसका स्वरूप घोष के समान होता है। जैसे कान में ऊँगली ड़ालने पर जलती हुई आग के शब्द के समान धक् धक् शब्द उत्पन्न होता है। वह नाद घोष कहा जाता है। जब वह कण्ठ को प्राप्त करके कण्ठस्थ हो जाता है तब वह शान्त हो जाता है।[21] यथा -

भित्त्वा हृतद्मग्रन्थि तु तत: शब्द: प्रजायते। इति लक्षितो घोषो दीप्ताग्नेर्यो

---

[17] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 262-266

[18] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, पृष्ठ संख्या - 412

[19] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 340 "आगमो ज्ञानमित्युक्तमनन्ता: शास्त्रकोट्य:"।

[20] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 341-348

[21] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 369-370

धकधकाकृत्यशब्दतुल्याकारश्रुतिरुच्चरतीत्यर्थः॥

इस प्रकार से कण्ठप्रदेश का भेदन करने पर यह धुक् धुक् शब्द का आकार ग्रहण कर लेता है। जब यह प्राण तालु को प्राप्त करता हुआ तालु ग्रन्थि का भेदन कर लेने पर घुम् घुम् का आकार ग्रहण कर लेता है।[22]

यहाँ तीन ग्रन्थियों के भेदन से यह शब्द आठ कलाओं को ग्रहण कर लेता है। जिनमें घोष, राव, स्वन, शब्द, स्फोट, ध्वनि, झाङ्कार और ध्वङ्कृत रूपों वाला होता है। यथा -

"अष्टधा तु स देवेशि व्यक्तः शब्दः प्रकीर्तितः।
घोषो रावः स्वनः स्फोटाख्यो ध्वनिरेव च।
झाङ्कारो ध्वङ्कृतश्चैव अष्टौ शब्दा प्रकीर्तिताः"॥[23]

इस प्रकार से जब प्राण जहाँ स्थित होता है, आत्मा उसकी गति को प्राप्त करता है। स्थान विशेष होने के कारण आत्मा ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र के द्वारा हृदय, कण्ठ और तालु में सृष्टि, स्थिति और संहाररूपता का अनुभव करता है। जब यह प्राण साधक की भौहों के मध्य में पहुँचता है तब स्फोट शब्द होता है। जब यह बिन्दु का भेदन करता है तब साधक को आन्तरिक अवस्था में घुम् घुम् शब्द सुनाई पड़ता है। साधक की यह सर्वाधिक सावधानी पूर्वक वाली अवस्था होती है। इसके बाद साधक अर्धचन्द्र का भेदन करता है तब उसको ललाट में झिम् झिम् शब्द सुनाई पड़ता है। आत्मा भी स्थानविशेष होने कारण उस उस गति को प्राप्त करता है। इसके बाद रोधनी का भेदन करने पर विद्वान् नाद भूमि में पहुँचता है। वहाँ उसको बाँसुरी के समान सूक्ष्म शब्द सुनाई पड़ता है और अब साधक ब्रह्मरन्ध्र का भेदन करता है। यहाँ ब्रह्मरन्ध्र भेदन करने पर साधक को शुम् शुम् जैसा शब्द सुनाई देता है। जब यह प्राण शक्ति के मध्य चला जात है, तब वंशी के नादान्त के समान ध्वनि का साधक अनुभव करता है। शक्ति के भेदन से यह शुम् शुम् की ध्वनि निरन्तर गतिमान् होती है। यह व्यापिनी का भेदन करने पर सम्पूर्ण शरीर में चींटी के स्पर्श सञ्चरण जैसा अनुभव होता है। इस प्रकार समना में पहुँचने के बाद मन का परित्याग हो जाता है और साधक कैवल्य को प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार से साधक द्वारा नादसाधना को सिद्ध करके परमतत्त्व का साक्षात्कार किया जाता है। इस स्तर पर पहुँचने के लिए साधक को विविध प्रकार की दीक्षाओं के मार्ग को पार करना पड़ता है। जिसमें तत्त्वादि दीक्षा, पद दीक्षा, विज्ञान दीक्षा, ज्ञान दीक्षा आदि दीक्षाओं में दक्ष होना पड़ता तथा पूर्णत दक्ष होने पर पञ्चप्रणव की साधना[24] करनी पड़ती है। अतः साधक अघोरमन्त्र द्वारा परम शिव रूप प्रणव का साधना में अभ्यास करते हुए शिवज्ञान को प्राप्त कर लेता है।

---

[22] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या , 371- 372-373

[23] *स्वछन्दतन्त्रम्,* एकादश पटल, श्लोक संख्या , 67

[24] *स्वछन्दतन्त्रम्*, षष्ठ पटल , श्लोक संख्या, 23 अकार, उकार और मकार ये तीनों वर्ण कहे गए हैं। इनमें बिन्दु और नाद सहित पाँच प्रणव बन जाते हैं तथा ब्रह्म, विष्णु और रुद्र में ईश्वर और सदाशिव सयुंक्त कर ने पर ये पाँच वाच्य प्रणव कहलाते हैं।

उपसंहार (Conclusion) :-

अन्त में विषय को उपसंहरित करते हुए कहा जा सकता है कि *स्वच्छन्दतन्त्र* के चतुर्थ पटल में वर्णित नादसाधना साधक के कठिन अभ्यास द्वारा सिद्ध की जाती है। यद्यपि यह साधना बहुत कठिन है। परन्तु साधना मार्ग के अनुरागी सतत अभ्यास के द्वारा इसको सिद्ध करके सभी बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं। साधक भी परम तेज को व्यक्त करते हुए शिवरूप हो जाता है। स्वच्छन्दतन्त्र में स्पष्ट कहा गया है।

"तत्रस्थो व्यञ्जयेत्तेज: परम् कारणम्।

परस्मिं स्तेजसि व्यक्ते तत्रस्थ शिवतां व्रजेत्"॥ [25]

इस प्रकार साधक स्वयं का अनुभव करता है- **"अहमेव परो हंस:, शिव: परमकारणम्"।** इस साधना पथ पर सभी समान है। कोई भी शिवभक्त इस साधना को कर सकता है-

"ब्राह्मणा: क्षित्रिया वैश्या: शूद्रा वै वीरवन्दिते।

आचार्यत्वे नियुक्ता ये ते सर्वे तु शिवा स्मृता:"॥

अर्थात् जो भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आचार्यपद पर नियुक्त होते हैं वे सब शिव माने गये हैं।[26] अत: शिव भक्ति के साधकों को स्वछन्दतन्त्र ग्रन्थ का अध्ययन करना चाहिए।

संदर्भ (Bibliography):-

1. चतुर्वेदी, आचार्य राधेश्याम. (व्या. सं.). (2004). *स्वच्छन्दतन्त्रम्,* प्रथमो भाग (पटल -1-6). वाराणसी : चौखम्बा विद्याभवन.

2. विक्रम, डॉ. आशुतोष. (2011). *अघोर दर्शन : एक ऐतिहासिक अध्ययन.* गाजीपुर : आसरा एच.आर.डी. फाउण्डेशन.

3. चतुर्वेदी, आचार्य सीताराम. (2006). *तन्त्र विज्ञान और साधना.* नई दिल्ली : चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान.

4. सोमानन्द. (1986). *शिवदृष्टि.* (हिन्दी व्याख्याकार - राधेश्याम चतुर्वेदी) वाराणसी : संस्कृत संस्थान.

5. अभिनवगुप्त. (1922-23). *तन्त्रालोकम्,* भाग, 1-2, राजानक जयरथ कृत विवेक व्याख्या सहित (हिन्दी भाष्य एवं सम्पादक - परमहंस मिश्र), वाराणसी : सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय.

[25] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 374-397

[26] *स्वछन्दतन्त्रम्,* चतुर्थ पटल, श्लोक संख्या, 413

कुबेरनाथ राय के ललित निबन्धों में महर्षि वाल्मीकि का जीवन-दर्शन : सहमति-असहमति

डॉ. वेदवती राठी*

vedvatirathi24@gmail.com

महर्षि वाल्मीकि ने रामायण की रचना दो प्रमुख कारणों से की। पहला उद्देश्य था 'पारिवारिक मर्यादाओं की रक्षा करना' और 'दाम्पत्य सम्बन्धों में सद्भाव और परस्पर प्रीति के आदर्श की स्थापना करना।' इसलिए रामायण को आदर्श दाम्पत्य-सम्बन्धों का महाकाव्य कहा जाता है। महर्षि वाल्मीकि का दूसरा उद्देश्य यह भी था कि वे जगज्जननी सीता जी का चरित्र लिखना चाहते थे। इसलिए उनका ध्यान राम के आदर्श-जीवन और कठोर अनुशासन को उभारने पर नहीं, बल्कि सीता के प्रति करुण संवेदना जगाने पर केन्द्रित था। उनका उद्देश्य यह भी सोचने को विवश करता है कि रामायण रचने की प्रेरणा क्रौंच-वध का कारण भी हो सकती है। वाल्मीकि के करुणा विगलित हृदय के सक्रिय हो जाने के कारण रामायण की रचना सम्भव हो सकी। कुबेरनाथ राय ने वाल्मीकि से सम्बन्धित जितने भी ललित निबन्ध लिखे हैं, वे सभी इस शोधपरक दृष्टि का परिचय देते हैं कि रामायण सविता प्रधान महाकाव्य है और उसमें सूर्य के प्रतीक को उभारने पर वाल्मीकि जी ने सर्वाधिक ध्यान दिया है। इसके साथ ही साथ कुबेरनाथ राय ने त्रेतायुगीन सामाजिक गति विधियों और आदर्शों के दर्पण में देखते हुए आधुनिक बुद्धिवाद की व्याख्या भी की है। इस उद्धरण द्वारा इस बात की पुष्टि की जा सकती है-

''अधिकार की सुरा के लिए छीना-झपटी और मुशल युद्ध करते समय किस राजनीतिज्ञ और किस भाग्य विधाता के पास इतनी फुरसत है कि यह सोचे कवि, लेखक, पत्रकार अथवा अध्यापक उतना ही महत्वपूर्ण है, इतनी ही प्रतिष्ठा का पात्र है, जितना की इंजीनियर, आई0ए0एस0, प्रबन्धक और संसद सदस्य? पर जब तक वैज्ञानिक और साहित्यिक दोनों केवल एक ही जुआ में नद्ह नहीं किये जायेंगे, तब तक देश आगे नहीं बढ़ेगा। वाल्मीकि से निराला तक, प्रत्येक वीराचारी वैष्णव कवि का यही सन्देश है।''[1]

कुबेरनाथ राय वाल्मीकि द्वारा प्रतिपादित जीवन-दर्शन के प्रति असहमति व्यक्त करते हैं। क्योंकि उसमें मर्यादावादी जीवन-दर्शन की अ भिव्यक्ति नहीं हुई है और कुबेरनाथ राय ने वाल्मीकि सम्बन्धी जितने ललित निबन्ध लिखे हैं, उनमें मर्यादावादी जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति बहुत कम हुई है।

* **ऐसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, धर्म समाज महाविद्यालय, अलीगढ़**

कहना न होगा कि 'विषाद योग' में कुबेरनाथ राय ने 'राम कथा' विषयक बीज बिन्दु की तरह जिन पाँच निबन्धों को प्रकाशित किया है, उनका आधार भी महर्षि वाल्मीकि जी की रामायण ही है। 'फटिक-शिला' निबन्ध का प्रारम्भ कुबेरनाथ राय ने भले ही कालिदास कृत 'रघुवंशम्' के निम्न श्लोक से किया है-

''एतद गिरे माल्यवतः पुरस्तात्

आविर्भवत्यम्बरलेखि श्रंगम्।

नवं पयो यत्र धनैर्मया च

त्वद्वियोगाश्रु समं विसृष्टम्।।''[2]

इसी प्रकार 'मेघदूत' का एक श्लोक 'किष्किन्धा' काण्ड की घटना के सन्दर्भ में उद्धृत किया है और मेघदूत के सम्बन्ध में कुबेरनाथ राय का यह वाक्य महत्वपूर्ण है कि 'मेघदूत का समूचा उत्तरार्ध ही मानसरमण की कविता है।' रामायण के सन्दर्भ में कहा गया निम्न उद्धरण उनकी रामायण के प्रति धारणा को व्यक्त करता है-

''जबकि रामायण की विरह-व्यथा अविधा, लक्षणा, व्यंजना के तीन धरातलों पर महत्वपूर्ण विश्व वेदना का अंग है। XXX कहने का तात्पर्य यह है कि विषय समृद्धतर होने के कारण रामायण की विरह-अभिव्यक्ति हीनतर 'रिटॉरिक्स' में व्यक्त होते हुए भी 'मेघदूत' से अधिक शक्ति सम्पन्न हो गयी है। काव्य या साहित्य में 'विस्तार, गहराई, उदात्तता और जाग्रत दृष्टि भंगी का स्रोत तो विषय या 'विषय-दृष्टि' ही है।''[3]

इतना ही नहीं कुबेरनाथ राय इस निबन्ध में रामायण में अपनी गति के सम्बन्ध में यह स्पष्टीकरण भी देते हैं-

''मैं न तो गोविन्दराज हूँ और न मल्लिनाथ। मैं तो 'रामायण' और मेघदूत' को सिर्फ मौज के लिए पढ़ता हूँ। अपने को तो बस, चुल्लूभर काफी है। जब इतने से ही मेरा काम चल जाता है तो विद्वता के समुद्र को गठरी में बाँधकर कन्धे पर ढोते फिरने से क्या लाभ? यह सब वे परम प्रवीण लोग किया करें। मैं तो मन ही मन कल्पना चक्षुओं के द्वारा सारा दृश्य देख-देखकर उसी में बिहार करता हूँ यथा सम्भव उक्त दृश्य का अंग बनकर के। अतः मैं देख रहा हूँ कि राम और लक्ष्मण दोनों भाई फटिक-शिला पर बैठे हैं। वाल्मीकि न कुटी के सामने अंजन वर्ण की 'विशाल-शिला' का उल्लेख किया है। पर तुलसी लिखते हैं 'फटिक शिला बैठे दोउ भाई'। मेरे ध्यान योग में 'मनःशिला' (मैगनीज) और स्फटिक (क्वार्टज) का भेद नहीं उठता। मैं तो सिर्फ देख रहा हूँ शिला सन समासीन दोनों भाईयों को।''[4]

'विषाद योग' नामक संग्रह में कुबेरनाथ राय ने 'एक महाकाव्य का जन्म' शीर्षक निबन्ध सबसे पहले संकलित किया है। इस निबन्ध में रामकथा के महर्षि वाल्मीकि द्वारा किये गये रचना कर्म का परिचय दिया गया

है। इस निबन्ध में उन्होंने तमसारण्य में निषादों की आरण्यक बस्ती की कल्पना की है और इसी सन्दर्भ में निषाद द्वारा 'काम मोहित क्रौंच के जोड़े' के मारने और वाल्मीकि पर होने वाली उसकी प्रतिक्रिया के परिणाम स्वरूप रामायण महाकाव्य के जन्म होने की घटना का उल्लेख किया है-

''यह एक अत्यन्त जानी-सुनी घटना है। इसी से साहित्य में रामावतार सम्भव हो सका। इससे इसका विपुल महत्व है। वास्तव में यह प्रसंग रामायण की पूरी 'थीम' का सूचक है। यह कि विशिष्ट प्रकार की तकनीकि है, जिसका उपयोग शेक्सपीयर और कालिदास के नाटकों में किया गया है। रामायण की थीम है 'पौलत्स्य वध' और इसका सूचक वृत्त है 'क्रौंच-वध'। सारे महाकाव्य का संकेत इसी वृत्त में निहित है। इस वृत्त को पढ़ते ही शोक और क्रोध का एक मानसिक वातावरण तैयार हो जाता है और वृत्त के संकेत-बीज जैसे-जैसे महाकाव्य आगे बढ़ता है अपने अर्थ का विस्तार करने लगते हैं।''[5]

इस प्रकार 'विषाद योग' में रामकथा विषयक जो पाँच निबन्ध ('एक महाकाव्य का जन्म,' 'फटिक शिला,' 'समुद्र संतरण,' 'लंका की एक रात' तथा अशोक के फूल, 'अब और कितनी रात है') दिये गये हैं, उन सबका आधार वाल्मीकिकृत रामायण ही है। 'समुद्र-सन्तरण' निबन्ध के प्रारम्भ में इसीलिए वह वाल्मीकि की उपमा सिंह से देते हैं-

''भारतवर्ष के आदि महाकवि को परम्परा से शायद इसीलिए सिंह की उपमा दी गयी है। XXX महाकवि वाल्मीकि के काव्य का पुण्य स्मरण हमें इतना प्रमादहीन और जाग्रत कर देता है कि लगता है कि हम भी मारूति की तरह समुद्र-सन्तरण कर रहे हैं।''[6]

'लंका की एक रात' के सम्बन्ध में कुबेरनाथ राय ने सुन्दर काण्ड के चौथे सर्ग से ग्यारवे सर्ग तक की घटनाओं को समाविष्ट किया है-

''सुन्दरकाण्ड के सर्ग 4 से 12 तक पढ़ता गया और अन्त में मुझे लगा कि मैं गाँव के प्रतिभोज के बाद फेंके गये झूठे पत्तलों और मृण-भांडों के बीच बैठा हुआ हूँ। वाल्मीकि ने सचमुच यहाँ संकेत गर्भी काव्य प्रस्तुत किया है। यह कामबिद्धपुरी है। उस पर कामरूपी रात अपनी उदार, विदग्ध और विकृत तीनों भूमिका के साथ उतरती है और इसी भयाभय वातावरण में एक स्थित धी पुरुष निराहार व्रतबद्ध रूप में, खण्ड प्रति खण्ड, कोण-प्रति-कोण दबे-पाँव सावधानी से चल रहा है।''[7]

इस निबन्ध के अन्त में महर्षि वाल्मीकि के आशावाद का प्रतिपादन करते हुए कुबेरनाथ राय यह कहना नहीं भूलते-

''अशोक वाटिका का ख्याल आते ही महाकवि के असीम धीर-गम्भीर हृदय में नयी आशा का संचार हो गया।''[8]

'विषाद-योग' में दिये गये अन्तिम निबन्ध 'अशोक-फूल, अब और कितनी रात है' के अन्तर्गत हनुमान को वाल्मीकि ने किस रूप में चित्रत किया है, इसके सम्बन्ध में कुबेरनाथ राय यह टिप्पणी देते हैं-

"हनुमान वाल्मीकि रामायण में इस प्रकार चित्रित किये गये हैं मानो वे जीवित आशा के प्रतीक हों। मूर्तिमान संकल्प और जीवित आशा दोनों भावों का आधार उन्हीं के चरित्र को बनाया गया है। उनका संकल्पात्मक रूप समुद्र सन्तरण के अवसर पर व्यक्त होता है। पर रावण के अन्तःपुर में सीता को खोजते हुए वे भटकती आशा की तरह ज्ञात होते हैं। आशा की दुर्दिन में ुरगार्जित घन अंधकार में एक मात्र प्रबोध, एक मात्र सान्त्वना रह जाती है।"[9]

कहना न होगा कि यहाँ भी वाल्मीकि के आशावादी दृष्टिकोण का निष्पादन कुबेरनाथ राय ने किया है। वे वाल्मीकि कृत रामायण को इसीलिए 'नवनवोन्मेष शालिनी' प्रेरणा के स्रोत के रूप में देखते हैं-

"पर इस तथ्य को उभार कर वाल्मीकि सुन्दर-काण्ड में अत्यन्त गहरे मानसिक द्वन्द्व-सूत्रों का संकेत देते हैं। रावण की प्रणय तृषा आधुनिक मनोविश्लेषण की भूमि पर लाकर ही ठीक से समझी जा सकती है। वाल्मीकि ने यह अर्थवान संकेत यहाँ पर सीता की सार्वभौम करूणा के चित्र को और अधिक अर्थ-सम्पृक्त करने के लिए ही किया है। वाल्मीकि सचमुच महाकवि है। मैं तो रामायण का कोई भी प्रसंग जब भी पढ़ता हूँ तो हर बार नया अर्थ आभास दे जाता है और बार-बार लगता है- अभी भी कुछ शेष है, अभी- भी कुछ बचा रह गया है। सम्पूर्ण अर्थ कभी भी चुक नहीं जाता। तब मैं अनुभव करता हूँ कि शूकर क्षेत्र की रामकथा के सम्बन्ध में गोस्वामी जी की उक्ति कितनी सत्य है- "तदपि कही गुरु बारहिं बारा। समुझि परी कुछ मति अनुसारा।" रामायण बार-बार पढ़ने की चीज है और सारा जीवन लगाकर अनुभव करने की वस्तु है।"[10]

कुबेरनाथ राय ने ' महाकवि की तर्जनी', संग्रह के भाग-1 में वाल्मीकि के सम्बन्ध में पाँच निबन्धों ('महाकवि की तर्जनी' 'वाल्मीकि-धूह में कवि- चक्षु', 'सुपर्ण वाल्मीकि', ' एक पण्डित, एक डोम और एक मरी चिड़िया', 'ऋृतंभरा नदी, इतिहास और वृद्र कवि') की रचना की है। उनमें कवि वाल्मीकि के जीवन और व्यक्तित्व के विषय में उन्होंने गहरा गोता लगाया है। और कल्पना से वे उस पूर्ण वातावरण में पहुँच गये हैं, जिसमें तमसा के तट पर वाल्मीकि का आश्रम था।

महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण को आधार बनाकर कुबेरनाथ राय ने तीसरी पुस्तक 'त्रेता का वृहत् साम' भी लिखी है, जिसमे इनकी स्थापना है कि वाल्मीकि ने यह सविता प्रधान महाकाव्य लिखा था। इसके सम्बन्ध में 'अन्त में दो शब्द' शीर्षक भूमिका में वे कहते हैं-

"रामकथा से जुड़ी ये मेरी दूसरी पुस्तक है। पहली पुस्तक है 'महाकवि की तर्जनी'। इसके प्रथम अंश में वाल्मीकि समस्या से जुड़े हुए कुछ प्रश्नों पर आधारित ललित निबन्ध हैं और शेष पुस्तक में 'शील' तत्व का विवेचन है। उस पुस्तक को लिखते समय मुझे लगा था कि रामायण की शीलाचारिणी (Ethics) के मूल में है

इस महाकाव्य की 'सौर' प्रकृति। यह एक सूर्य गाथा है। इसकी प्रकृति सूर्यात्मक है। इसका प्रथम शब्द है 'तप' (ऊँ तप स्वाध्याय)। अतः इस काव्य की अन्त भूमि के भीतर निहित सूर्य प्रतीकों और सूर्योपासना के तत्वों का विवेचन अलग से होना चाहिए। इससे महाकाव्य की मूल प्रकृति समझने में सहायता मिलेगी और केन्दीय प्रतीक 'सूर्य' का ठीक तरह से उद्घाटन सम्भव हो सकेगा। यही सोचकर इस पुस्तक को लिखा गया है।"[11]

सबसे अन्त में 'रामायण महातीर्थम्' की चर्चा करना नितान्त आवश्यक प्रतीत होता है। इस पुस्तक में भी वाल्मीकि कृत रामायण का दृष्टिकोण प्रमुख रूप से उभारा गया है। इस पुस्तक के अन्त मे 'अपने लेखन के बारे में' एक 'आत्मकथ्य' लेखक की ओर से दिया गया है, जिसमें कुबेरनाथ राय रामकथा विषयक निबन्धों के विषय में अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं कि समूचे लेखन में राम और रामकथा से सम्बद्ध निबन्धों की रचना के पीछे उनका क्या उद्देश्य निहित है -

"रामकथा पर मेरा पहला निबन्ध 'गन्धमादन' में है 'रामस्य करूणो रसः'। दूसरा निबन्ध 'विषादयोग ' में है 'महाकाव्य का जन्म'। 'कामधेनु' में भी दो प्रमुख संकलन है, 'महाकवि की तर्जनी और' त्रेता का वृहत्साम'। XXX रामकथा पर एक तीसरी पुस्तक भी मैं लिख रहा हूँ जो इस विषय पर मेरी अन्तिम पुस्तक होगी। इस मिथक के बिम्बों और मूल ढाँचे की संरचना के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण इसमें प्रस्तुत करने की चेष्टा करूँगा। मेरा उद्देश्य है रामकथा के भावात्मक और बौद्धिक-सौन्दर्य का उद्घाटन।"[12]

कुबेरनाथ राय एकमात्र ऐसे निबन्धकार हैं। जिन्होंने मयार्दा पुरूषोत्तम श्रीराम के प्रत्येक आयाम को अपने निबन्धों की विषय-वस्तु बनाया है।

सन्दर्भ :-

1. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 99
2. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 82
3. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 84, 85
4. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 85
5. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 75,76
6. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 93
7. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 100
8. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 107
9. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 109
10. राय, कुबेरनाथ. (1974). *विषाद योग*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 120,121
11. राय, कुबेरनाथ. (1986). *त्रेता का बृहत्साम*. दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हॉउस. पृ. 6-7
12. राय, कुबेरनाथ. (2002). *रामायण महातीर्थम्*. नयी दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ. पृ. 346

Critical Analysis on Laws Relating to Insider Trading

Adv. Ashish Jayprakash Anand*

Advocate109ashish@hotmail.com

Abstract:

This article has been done to dissect the foundation of insider trading laws in India and settle on the methodology to enhance the current structure with that objective. This article examined the regulatory Framework in the United States of America and the United Kingdom. Taking into consideration various literature review and research gap involved in the laws relating to insider trading. The main objective of this research was to examine the overseeing structure of the insider trading laws and how it can be enhanced.This article will provide you with the recent amendment made by the securities exchange board of India under insider trading laws in India and strategies required to improve the framework of insider trading laws in India.

Keywords: unpublished price sensitive information, SEBI, insider trading, stock exchanges.

INTRODUCTION:

In the recent years, India has seen large price variations in the shares of public companies during the periods of mergers or acquisitions and illegal trading on the basis of unpublished price sensitive information, which has caused great concern to the Indian securities market. If the fiduciaries who run the companies for the benefit of the shareholders gain unjust development at the cost of the company and its shareholders, it becomes a monstrous wrong doing. Although illegal insider trading is a global phenomenon, a study by the IMF reports that it is relatively high in countries such as India, China, Russia, etc., resulting in high irregularity in share prices. Indian studies

* **Assistant Professor, D.Y. Patil deemed to be University, School of Law, Navi Mumbai**

also have reported that insider trading activity is observed amongst companies belonging to the same business group prior to merger announcements.

As the Indian market does not have an equivalent playing field or impeccable challenge, inconsistency of data causes an unfriendly effect available. Along these lines, the capability of guidelines and a productive implementation system to check insider exchanging turns out to be vital to stay away from exploiters and fraudsters exploiting the data anomaly. The motivation behind the investigation has been to dissect the administrative foundation of the insider trading laws in India and settle on the methodology to enhance the current structure. With that objective, I have looked into the laws identifying with insider trading both in the U.S. also, U.K., which are rumored for their adequacy.

Considering that this study has examined in great detail, the legislative and regulatory framework in U.S. and U.K., and in India and has recognized the issues in the Indian governing mechanism and has also suggested certain remedies, I hope that the study would assist the legislators to at least think about the need for an effective enforcement regime.

This study will carefully discuss the details of insider trading laws in India, evolution of insider trading law in India, comparison of US, UK & Indian laws on insider trading, methods to curb insider trading, current amendments in recent years to develop the laws under the regulation .The literature reviews carried for the article are mentioned (Insider Trading Regulations: Who is Liable for what under the New SEBI Rules? A Checklist article by Business Standards)

The recent amendments that have been made certain important changes in the insider trading laws rationalised the insider trading regulations by segregating.(The Insider Trading Regulations in entirety had not undergone any systematic review ever since it was enacted in the year 1992 by Nishith Desai Associates)

This research paper by Nishith Desai Associates talks about the Insider trading laws in India has not undergone under major review since its inception it has come up with SEBI amendments in particular laws and which has lead lacunae in the Insider trading

regulations. (What SEBIs New Insider Trading Regime Does For India Inc., by Bloomberg Quint)

This article published under the Bloomberg Quint gave the insight of the new amendments which were made by the new committee of the TK Vishwanathan which brought into the picture the new amendments ranging from the parameters of information sharing, defenses to trading

Objectives of Research

1. The reason for the examination has been to look at the overseeing structure of the insider trading laws in India and settle on the arrangement to enhance the present system.

2. With that objective, I have looked into the laws identifying with insider trading laws both in the U.S. what's more, U.K., which are accepted for their viability.

Hypothesis

As the Indian commercial center does not have an equal playing field, abnormality of data causes a restricting effect impact on the market. In this manner, the ability of guidelines and an efficient enforcement tool to curb insider trading becomes very important to avoid exploiters and fraudsters taking advantage of the data inconsistency.

Research Methodology

In view of the above topic relating to critical analysis on laws relating to Insider trading in India. The research methodology adopted by me will be empirical in nature and secondary sources of research will be utilized to gain in-depth knowledge and explain the nuisances of the Insider Trading Laws in India.

The research study will be explorative in nature and will be based on in-depth analysis of data collected both from the primary and the secondary sources.

Primary sources: - Primary sources will includes Questionnaire, Interviews, Observations Schedules etc.Secondary sources: - Secondary sources will include information collected from Journal/Article published Reference Books related to

corporate law, Publications by the government and Various websites. It is proposed that in the analysis of data some tools and techniques such as sampling method, surveys, etc. will also be used for empirical results and analysis based on which further research prospects, recommendations and conclusions can be derived.

Nature of the Research: This research is exploratory in nature. It will give a direction to the future researcher for conducting the further research related to the same issue. Population of the Research: Company Secretaries Chartered Accountants And Private Companies in the Mumbai region are the population of this study. Sampling Technique: For collecting the data for this research the researcher has used Random sampling technique.Sample Size: The sample size for this Project work is 25 respondents (out of 150 sample size for the whole Research Work)

Company Secretaries = 10
Chartered Accountant = 10
Companies = 5
Total Sample Size = 25

Type of Data Used for this Study: Only Primary data used by the researcher for this study. Instrument for Data Collection: The researcher has used well structured Questionnaire for getting the information from the respondents. Questionnaire was distributed to the target respondents and data was collected .The researcher approached the practicing secretaries as well as practicing company secretaries for the feedback and the employed Company Secretaries of the respective Private Companies of Mumbai.

RESPONDENT

		Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Valid	CA	9	36.0	36.0	36.0
	CS	12	48.0	48.0	84.0
	EXECUTIVE OF PVT COMPANY	4	16.0	16.0	100.0
	Total	25	100.0	100.0	

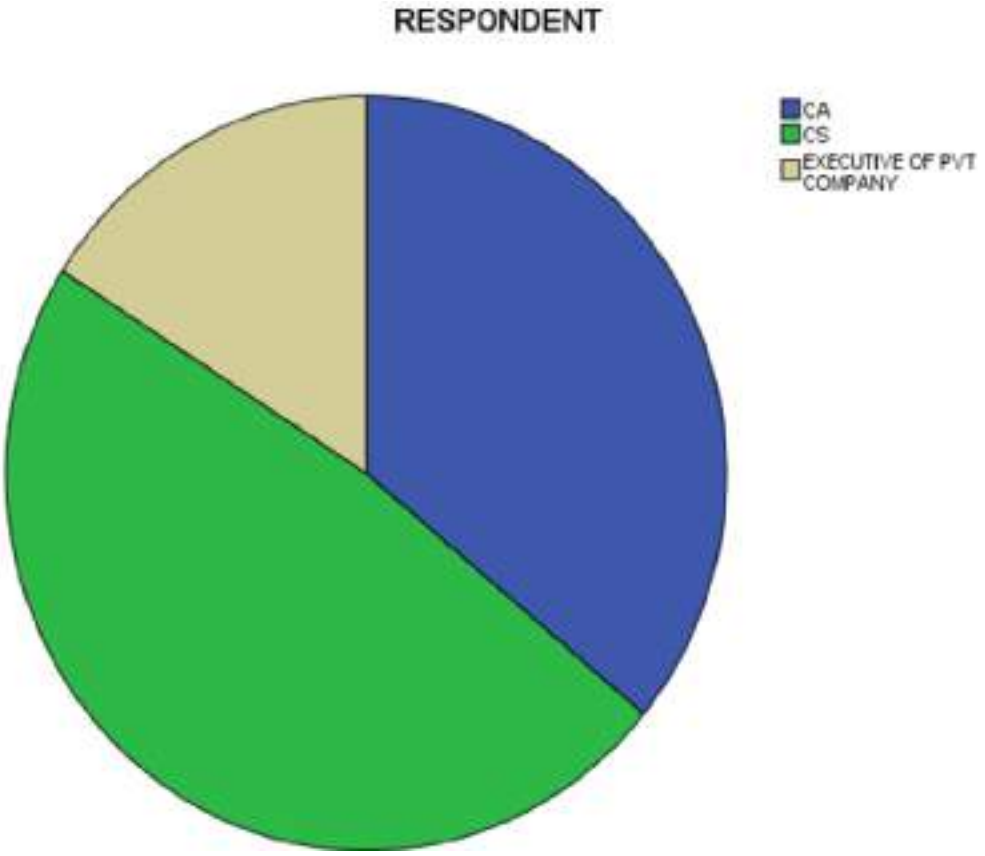

Table 1 and pie diagram represent the chartered accountants, company secretaries, Pvt and company secretaries of Pvt companies. And there response were recorded accordingly and represented in the form of pie chart .

RESULTS, DISCUSSION, CONCLUSIONS AND SUGGESTIONS.

The analysis of the insider trading laws provided the exact information which was required and the making of stricter rules and laws for the insider laws is the Need of the hour. The present system can be enhanced by implementing new technology and penalties so that one doesn't indulge in insider trading. As suggested by the respondents that there should amendments and new technologies should be introduced to cater the enhancement of insider trading laws in India. As compared to laws relating to insider trading laws of UK and USA , India is gaining pace slowly and steadily by learning from these counterparts.

REFERENCES, ACKNOWLEDGMENT

1. NISHITH DESAI ASSOCIATES, INSIDER TRADING REGULATIONS- A PRIMER, (July 2013)

2. UMAKANTH VAROTTIL, THE LONG AND SHORT OF INSIDER TRADING REGULATION IN INDIA, (13th, 2016)

3. Bharat Vasani & Shruti Rajan, *what's SEBI new insider trading regime does for India,* BLOOMBERG QUINT, Feb (2019)

4. Companies Act – 2013 New Rules of The game, A Deloitte and ASSOCHAM Report

5. Companies Act, 2013 available at mca.gov.in

6. Sharma, J. P, Corporate Governance, Business Ethics & CSR (Anne Publications, 2011)

Acknowledgment to the authors, journals, and other relevant components in this article which has been used by me. Without them such information could not be gathered researcher acknowledges their contribution.

CORPORATE SOCIAL RESPONSIBILITY – A BUSINESS MODEL FOR GROWTH IN PRIVATE SECTOR COMPANIES

MR. PRAKASH SHARMA*

iac.prakash95@gmail.com

ABSTRACT

In today's competitive scenario where a business operates in a complex environment, achieving an environmental sustainability and forging of partnerships with various stakeholders is important. Brand visibility, recognition and awareness among the stakeholders can be achieved through a good CSR plan in place. CSR initiatives by a company lend it competitive mileage along with favorable positioning for its products and services. The scope of Corporate Social Responsibility nowadays is broad and depends on the nature of the organization and its commitment to a cause. It has always been significant for an enterprise to have positive association among the community in which it functions.

Corporate Social Responsibility (CSR) is a conception, which stated that companies have responsibilities to society. It reduces the cost as well as challenges thereby, boosting the brand value and reputation of the firm. Corporate Social Responsibility is considered as a point of convergence of different activities attempted at guaranteeing social and economic expansion of the society. This research paper tried to analyze the motive and advantages of CSR initiatives of Indian companies. It points out the procedures administering CSR in India and examined the best practices in CSR activities of Indian private and public companies. There are many issues confronting CSR in India and the study gives suitable suggestions to overcome them and accelerate the CSR initiatives in India.

This research paper offers an inclusive view of CSR motives of Indian companies along with the structural associations between the identified CSR motives. The study will assist professionals and policy makers in manipulate these motives for better CSR practices by the companies in India.

Keywords: Corporate social responsibility, Companies, CSR initiatives, Society

* **Assistant Professor, Delhi Technological University, Delhi**

INTRODUCTION

With an increasing importance on corporate social responsibility (CSR), firms should decide how to incorporate CSR into their organizational strategy. For most companies, CSR has been an instrument for bettering business performance through practices that are unrelated with the business strategies, like charities or PR programs. CSR is a concept that businesses have a responsibility to the community that exists around it.

Corporate social responsibility is considered as a self regulating business growth model that assists an enterprise to be socially responsible - to itself, its stakeholder and the society. By practice CSR, also expressed corporate citizenship, organizations can be aware of the type of effect they are having on all facets of community, comprising financial, societal and environmental.

With the modernization of an incorporated world in the contemporary period there is a multiple raise in the information spreading to the individuals on the economic, socio-cultural and environmental facets of doing businesses. Consequently, across the world, the adverse impacts business practices such as child labors and ecological damage, etc are being identified, with other social and economic problems. The corporate social responsibility has emerged as a vital idea and plan to improve the socio-economic and ecological problems. The present research is a comparative study to finding out the contribution by public and private sector organizations to the socio-economic expansion and safeguard of atmosphere through their CSR activities.

A significant as corporate social responsibility is for the society, it is similarly priceless for an organization. CSR practices can assist forge a stronger bond among staff members and companies, enhance morale, and assist both workers and company managers feel more linked with the world around them. For an organization to be socially accountable, it primarily requires to be accountable to itself and its shareholders. Often, companies that adopt CSR programs have grown their business to the point where they can give back to society. Thus, CSR is typically a strategy that's implemented by large corporations. After all, the more visible and successful a corporation is, the more responsibility it has to set standards of ethical behavior for its peers, competition, and industry.

In the earlier period, CSR was denoted as an activity of offering major financial contributions yearly. Though, at present, CSR stand for the practices of attaining communal, environmental, and economic expansion in companies. In 2020, COVID19 entirely disrupted strategies for further bettering CSR activities. Organizations have invested huge amounts of their allocated CSR funds on unexpected costs because of the epidemic. Their consideration was also diverted away from attaining CSR goals (Harikrishna, 2021).

The pyramid of corporate social responsibility

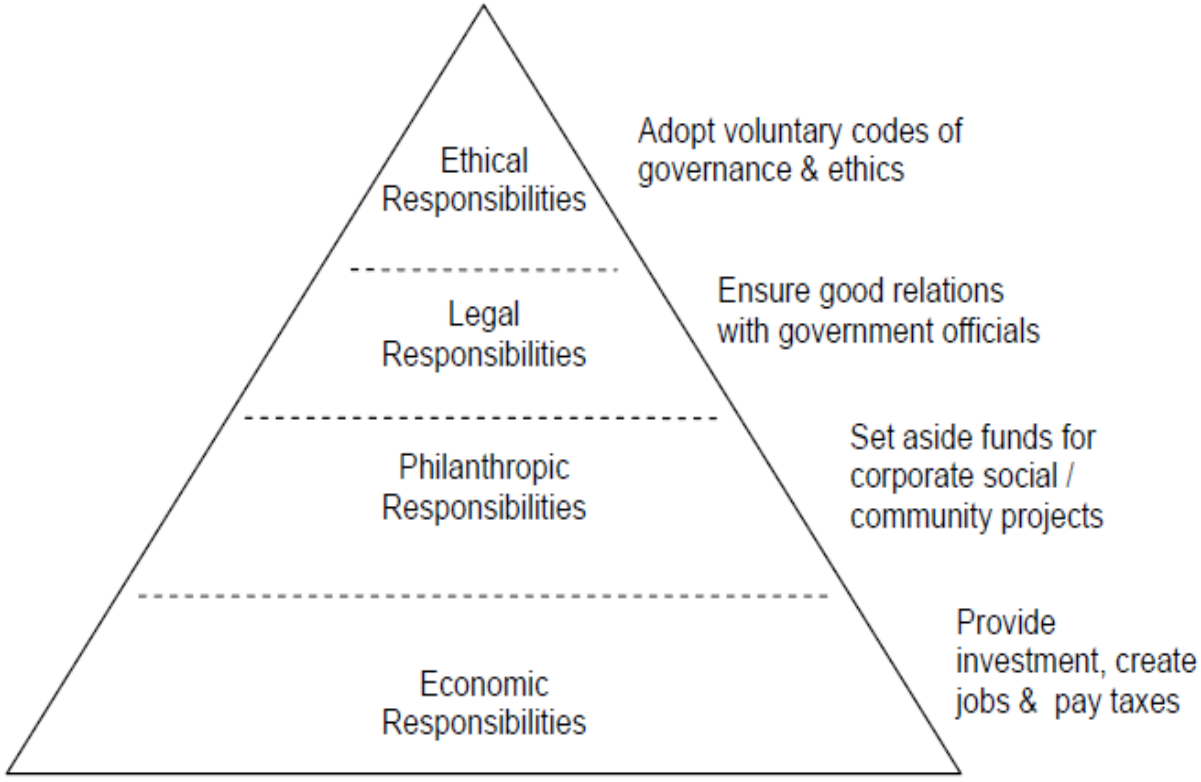

Are these companies doing this just as they taking positive strategies? Apparently not, they are doing this to chase long term corporate development and expansion by keeping sustaining atmosphere. In the present scenario of globalization, the company management has to confront with multiple stakeholders and their corporate decision has to react to the multiple necessities of the stakeholders. Since company managers should assign to follow societal development and business expansion simultaneously, it is thus logical to incorporate corporat social responsibility into business growth strategies.

PROBLEM STATEMENT

The purpose of this research is to study how effectively CSR is practiced by Indian private sector companies. Furthermore, the study shall reveal as to if there is any correlation between the Corporate Social Responsibility practices and the development of society? This study will endeavor to answer these questions by understanding more about the present state of Corporate Social Responsibility, in Indian companies.

RESEARCH OBJECTIVES

- To investigate the business context, strategy, implementation and effectiveness of integrating CSR based on empirical evidences drawn from the Indian context
- To analyze the CSR initiatives taken by Indian companies as a business development model
- To analyze the possibilities to accomplish an outstanding reputation of a company in the field of CSR so as to gain the support of the society and stakeholders.

LITERATURE REVIEW

Patel (2020) proposes that corporate social responsibility is a vital section of business growth strategy where inconsistencies occur among revenue and social objectives, or dispute can take place over equality issue. There are many communal segments where companies can play an important part in CSR and can generate social goods for its people. CSR initiatives might be gainful aspect for business strategy, building brand image, improving customer relations, and employee efficiency and to the preservation of association that is significant to long run productivity.

An article of Anshul Agarwal (2014) investigated business has been influenced by the crisis in CSR areas such as - Socio-political and economic - and stakeholders issue identified in Indian companies. At present companies have become conscious about the

significance of community for long tern success of businesses. Therefore they are more prone towards the association with these societies as it has been proved.

Kumar (2013) conducted a study tried to identify that CSR practices in retail sector particularly in Future group of companies are in a formative stage, characterized by being unstructured, informal and sometimes, inconsistent, Future group does not bring out sustainability report / CSR report and dedicated personnel to drive CSR activities are lacking. In contrast, Wal-Mart tends to be more open and sensitive towards CSR, appeared to be more proficient in their stakeholder relations, exhibited higher CSR transparency and structured CSR more consistently. The findings revealed that Wal-Mart's distinct higher interest levels towards global issues, while the Indian retailer in focus Future group emphasizes on local issues. CSR activities pertaining to environmental sustainability need to be focused upon.

Monica Aggarwal (2013) points out that in emerging nations such as India, where there are different socio-economic issues confronting the people generally, the implementation of CSR policies via the Companies Act in 2013 is a significant step in the overall socio-economic expansion strategies. It is applicable and significant to observe how these initiatives of the Government are functioning and the extent of its consequence on businesses, social and economic growth. It is vital to recognize to what extent the organizations are follow the authorization of the Act for expenditure 2 per cent of their revenues; how they are spending this obligatory amount, and whether they are following the particular provisions of the social responsibility policies.

Chatterjee D. (2010) in his research paper entitled "Corporate Governance and CSR: The case of three Indian firms" tried to analyze the CG activities of major Indian enterprises viz; ITC., Infosys, and Reliance Industries. The research found that though the CG activities are exemplary, there exist differences in the way the companies adopt these practices. Infosys seems to be doing much better than the other two.

Akanksha Jain (2014) point out those organizations so as to fabricate CSR expenditure makes use of charitable trusts. The environmental unfairness is also one of the key reasons for the misuse of social responsibility practices by companies. The article

proposed that profit making is natural facts of firms but CSR is beyond the natural and statutory obligations of the firms. In conclusion, in this paper that sustainable development is the growth of community as well as the corporation in a balanced method.

Upadhyay et al (2021) in their research article discussed briefly concerning how companies have volunteer during this crucial era of Covid-19 when the communal and financial situations of all the nations are not good.

CSR - Expenditure of Indian firms in the year 2019-2020

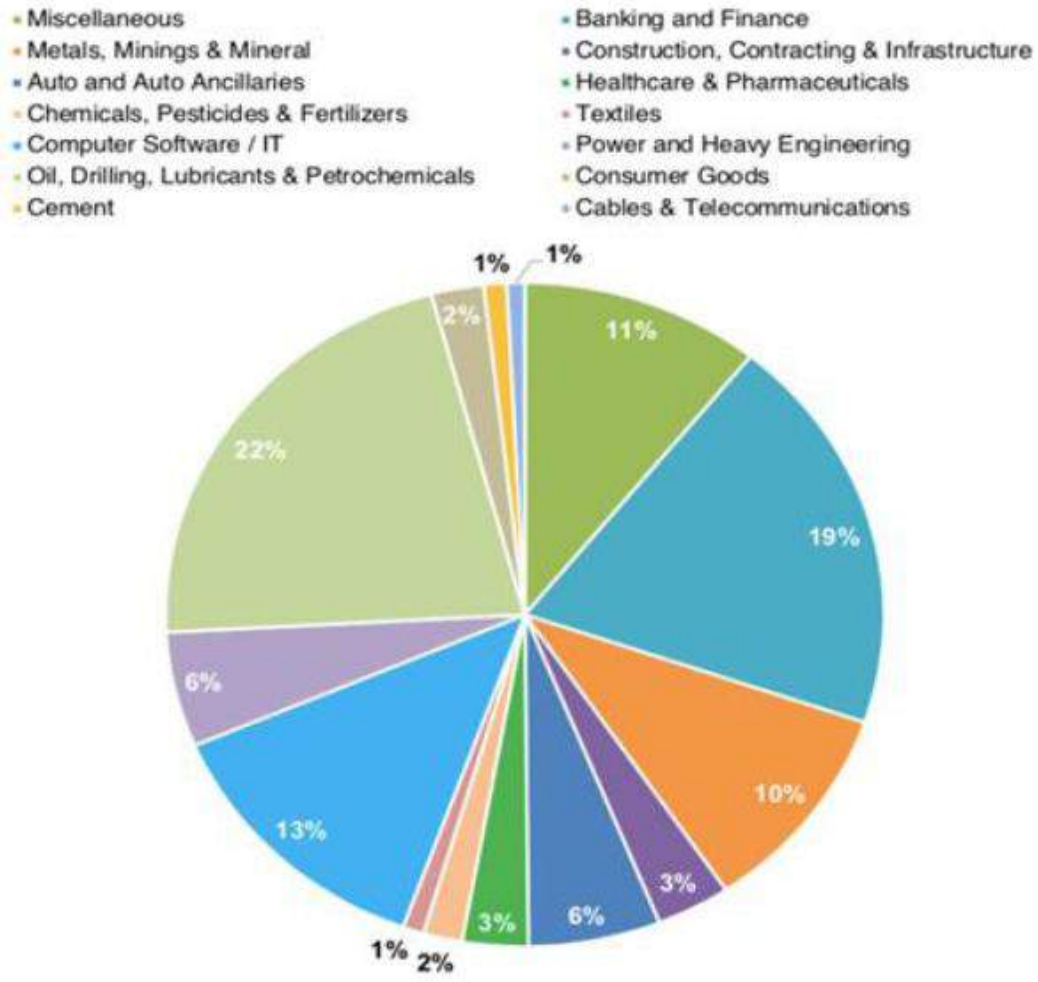

Ranking of companies in CSR activities

2019		2020	
Rank	Company	Rank	Company
1	Tata Chemicals Ltd	1	Infosys Ltd
2	Infosys Ltd	2	Mahindra & Mahindra Ltd
3	Bharat Petroleum Corporation Ltd	3	Tata Chemicals Ltd
4	Mahindra & Mahindra Ltd	4	ITC Ltd
5	ITC Ltd	5	Vedanta ltd
6	Ambuja Cement Ltd	6	Wipro Ltd
7	Tata Motors Ltd	7	Hindustan Unilever Ltd
8	Vedanta Ltd	8	Godrej Consumer Products Ltd
9	Hindalco Industries Ltd	9	Grasim Industries Ltd
10	Toyota Kirloskar Motor India	10	Bharat Petroleum Corporation Ltd

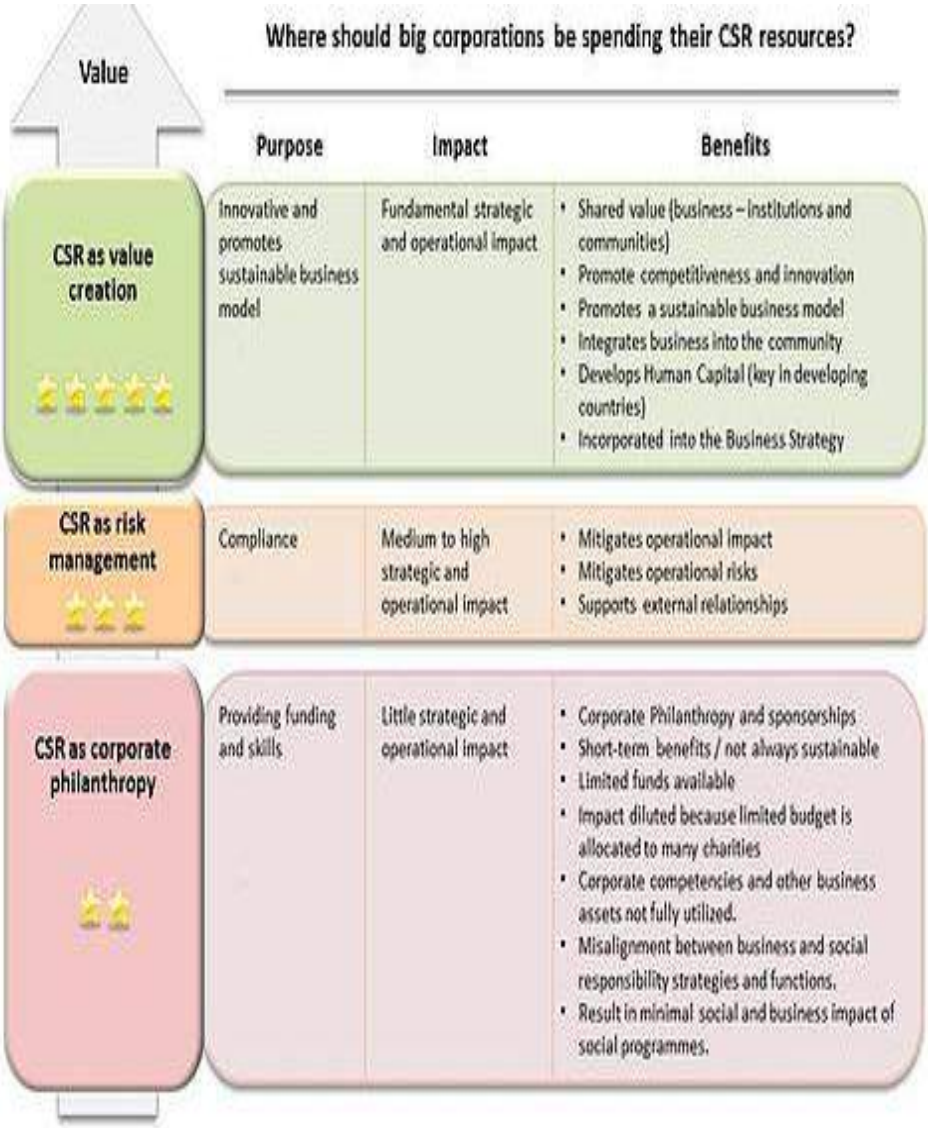

CSR ACTIVITIES OF INDIAN FIRMS

Hindustan Unilever: HUL's CSR viewpoint is embedded in its obligation to its every stakeholder, comprising customers and company staff members, the ecology, and the community the organization functions in. HUL depend on sustainable source of raw material, and is committed to minimize the ecological effect, bettering sustainability throughout the value chains. CSR activities of HUL have got various awards over the years. The BCC awarded HUL the 'Corporate Citizen Award' in 2018-19. HUL was bestowed with a special award for its contribution to the Swachh Bharat Mission and efforts towards successful plastic waste managing by the Ministry of Jal Shakti. Moreover, Project Shakti, the innovative program by HUL C.S.R, awarded the highly commended pioneering venture at the Finance for the Future Award, 2019.

HUL, through its well known brand Lifebuoy soap, spread the messages of washing hands regularly with Soap or Hand washing or Alcohol based Sanitizers to battle against the increase of Corona Virus.

ITC Limited – Recognize that companies are financial organ of community and draws on societal resource, it is ITC's principle that an organization's performance should be determined by its Triple Bottom Line donation to creating economic, societal and environmental capital towards boosting communal sustainability. The Company contributing to rural expansion in great ways. ITC's eChoupal CSR imitative that has become the gold standards on social expansion in global circle. Not only have eChoupal influenced lot of planters over the years via digital education and financial empowerment. It has also been replicated by score of other companies for social well being in their own communities. The company invested more than Rs.326.5 crore on CSR activities in 2019, surpass it spend for 2018. TCS has ongoing social ventures in environmental conservations, organic farming, healthcare, online education, women empowerment, sports and culture.

Grasim Industries Ltd: The Company has raised its CSR spent by around 45% since the 2020. Grasim's CSR expenditure Rs.84.66 crore in 2021 as against Rs.47.14 crore in 2020 and it ranked 9th among the leading Indian enterprises for Sustainability and

C.S.R. The company focuses for schooling, medical, sustainable livelihood, community development, mitigate climate change, etc. Grasim functions 6 company schools with strength of 6,350 students.

Infosys: In the year 2021, the company has spent Rs. 325.30 crore on different ventures and given Rs. 49.50 crore to the Unspent CSR Accounts. The company involved in the fields of safeguard of national heritages, restoration of historical site, and endorsement of art and civilization; care of backward people and rehabilitation; ecological sustainability and ecological balance; education, healthcare, rural development and boosting skills development.

Tata Group

The Tata Group of companies carried out different CSR ventures, most of which are society development and poverty mitigation program. The company also engaged in woman empowerment activity, rural development, farming, ecological protection, infrastructure development and other social wellbeing activities. In education, the company offers scholarship and endowment for colleges and schools. The company provides in medical facilities, like the facilitation of child education, immunization, and formation of consciousness of AIDS.

RESEARCH METHODOLOGY

Here Descriptive Research Design will be applied for analyzing association among CSR and business growth of private companies. The descriptive research is a truth finding investigation with sufficient interpretations. The descriptive research aim at identify the different aspects of a problem under study. And how much it has business growth and as a marketing tool?

Data collection

To find out the suitable data for research mainly two kinds of data has been gathered that is primary and secondary data as described below:

Primary Data source

The primary data will be gathered with the support of structured questionnaire due to its simplicity & reliability. The survey technique is much supportive in variables such as

getting selections and assisting participants to understand the importance and reply to their aptitude. In this technique we get high response rate and reliability. I have made several questions to manager, employees, and clients differently regarding overall CSR condition of Indian companies.

Secondary Data sources

Secondary data has been gathered from earlier research works and literatures to fill in the respective study. The key sources of secondary data are:

Books related to marketing management, services marketing and consumer behavior**,** Articles and previous research papers**,** Journals**,** Annual reports and brochures of selected airlines**,** Relevant Websites

Sampling Technique – Both Probability and Non probability sampling techniques.
Sampling Method –These are the methods which I may use for my research. Those are: Simple random sampling, systematic sampling.
Sample size - 50 managerial employees of selected companies
Sampling Area – Delhi NCR region
Analysis is depended on the responses provided to questionnaire. It is vital to have a detailed analysis plan in mind even before going to the field with a questionnaire. This edited data further codified and code book has been prepared.

FINDINGS AND ANALYSIS

How frequently are you involved in a situation where CSR is a concern?

Particulars	No.of respondents
Sometimes	17
Almost everyday	24
A few times each year	9
Never	0

48% of the respondents agreed that almost every day they involved in a situation where CSR is a concern. 34% said that some they review the situation.

Organizational Involvement in CSR:

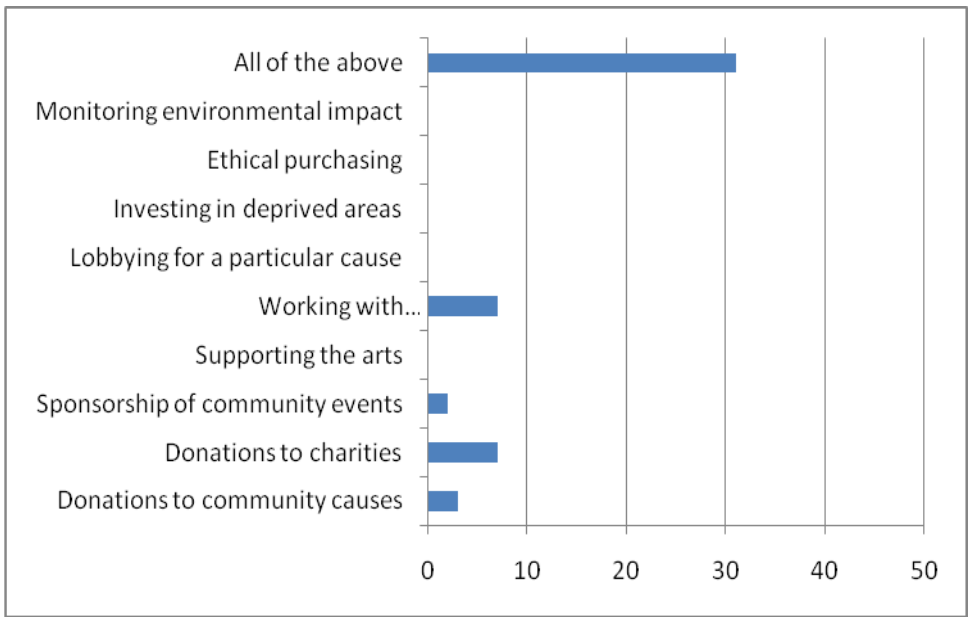

Most of the respondents (62%) all of them are important. CSR commitments communicate the nature and direction of the firm's social and environmental activities and, will help others understand how the organization is likely to behave in a particular situation.

Rank the key potential benefits for firms implementing CSR in your organization

	1	2	3	4	5
Improved Brand equity	25	5	0	0	0
Improved competitiveness and market positioning	4	5	5	10	6
Enhanced operational efficiencies and cost savings	8	4	0	7	11
build effective supply chain relationships	20	8	0	2	0
Enhanced ability to address change	5	4	5	8	8
More robust “social licence” to operate in the community	26	4	0	0	0
Access to capital	24	6	0	0	0
Improved relations with regulators	12	5	4	2	7

Do you think that CSR acts as an effective promotional tool?

	Strongly Agree	Agree	Neutral	Disagree	Strongly Disagree	**Total**
No of respondents	11	26	10	3	0	**50**

The respondents were asked to specify their opinion on the statement that CSR acts as an effective promotional tool for the organization. Five options were given them. 74% respondents agree that yes, CSR acts as an effective promotional tool for the organization.

CONCLUSION

CSR undoubtedly influences our companies, community, and other stakeholders. In spite of its difficulties, the various sustainability practices aim continued, positive effect. CSR policies must work as an integral, self-governing method whereby business would observe and make sure their observance to laws, moral standard and international rules and regulations.

CSR give different advantage to the business like boosting brand value, trust, and notoriety; new client acquisition and expansion of strong and long lasting associations with customers; improved capability to attract, encourage and keep the most talented employees; improved monetary performance and the capability to magnetize new resources and influences major stakeholders – like investors, business partner and policy makers.

To conclude, this study, it is addressed that CSR factors for enhancing financial development of any nation. In India, INFOSYS, HUL, Reliance Industries, TATA Group and Grasim Industries are playing a significant part to contribute a role of their considerable revenue to the stakeholders. No firms in this universe contribute towards the community without considering the goals of profit maximization. When

organizations contribute an important role of their revenue towards the community, they also generate brand image.

To conclude, business can no longer function with the intention of profit maximization at the expense of the ecology, community, customers and workers. Organizations require to think how they can return to community, and this might assist them magnetize consumers and maintain their best employees. Customer happiness and employee retention are the key to all successful businesses, finally.

SUGGESTIONS

The company management must consider that CSR overtakes corporate giving, businesses or community relation or corporate philanthropy. It isn't mere the mere activity of offering employees the fundamental needs in the workplace. Nor it specifies business leaders who stand for by legal sanctions and system needs. Neither does CSR limit itself to "doing good businesses."

The firms have its brand image in the open market and hence it becomes significant for the employees in the companies and the organization as an entity to behave morally, unethical behavior could send negative wave to the common consumers.

A long haul point of view by associations, which envelops their responsibility to both inward and outside partners will be basic to the achievement of CSR and the capacity of organizations to convey on the objectives of their CSR technique

Moreover, companies are needed to encourage their CSR ventures employees via catering training facilities, bonuses, and improved salary system in order to enhance their productivity, thus, to reduce their total cost of the CSR project as higher cost for CSR project remains the company with higher prices of the products to the customers. Therefore customer tends to change their preferences to other marketplaces.

REFERENCE:-

Dixit, S.K., Verma, H. and Priya, S.S. (2021), "Corporate social responsibility motives of Indian firms", Journal of Modelling in Management, 2021

Akanksha Jain (2014) “The Mandatory CSR in India : A Boon or Bane”, Indian Journal Of applied Research , Vol: 4, Issue : 1,pp 301-304.

Anshul Agarwal (2014), “The New Spectrum of Corporate Social Responsibility in Emerging Economies”, International Journal of Engineering and Management Research, Volume-4, Issue-1, February-2014,pp 32-36.

Parvat. R Patel, CSR in India – A Path To Achieve Sustainable Development Goal, IJCRT, Volume 8, Issue 12 Dec 2020

Kumar N. Corporate Social Responsibility: An Analysis Of Impact And Challenges In India, Abhinav International Monthly Refereed Journal of Research in Management & Technology, Volume 3, Issue 5 (May, 2014)

Monica Aggarwal (2013) “Corporate social responsibility and financial performance linkage evidence from Indian companies”,International Journal Of Management & Development Studies, Volume No 2(2013) Issue No 7(July), pp 12-24.

Swati Sharma, Reshu Sharma & Jugal Kishor (2013), “Emerging trends in Corporate Social Responsibility in India-A Descriptive study” ,Global Journal of Commerce & Management Perspective, Vol. 2(2) , pp 58-62.

Hency Thacker, Hindustan Unilever CSR Creates Sustainable Communities in India, The CSR Journals, August 11, 2020

Upadhyay, Niteesh Kumar & Rathee, Mahak. (2021). An Analysis Of Corporate Social Responsibility In India With Special Reference To Covid-19 Situation. Vol. 1 Núm. 1, 2021 42-61.

Kasmin Fernandes and Hency Thacker, Top 100 companies in India for CSR and Sustainability in 2021, The CSR Journal, December 30, 2021

https://government.economictimes.indiatimes.com/news/economy/corporate-social-responsibility-in-times-of-covid-19-pandemic/75771467

https://www.itcportal.com/sustainability/corporate-social-responsibility.aspx

https://www.india-briefing.com/news/corporate-social-responsibility-india-5511.html/

https://indiacsr.in/infosys-transfers-rs-50-cr-to-unspent-csr-account/

W.B. YEATS: A VISIONARY

DR. VIDYAWATI YADAV*

vidyawatiyadav5@gmail.com

W.B. Yeats from the very start of his career, sought for a tradition wherein philosophy, religion, creative imagination was all wedded into a harmonious whole – a unified culture, capable of supplying 'metaphors for poetry'. He looked for it in magic, astrology, Neo – Platonism and occultism; both Western and Eastern his works are the works of an aesthete often beautiful but always rarefied, a soul's cry for release from circumstances. Fundamentally, Yeats was a romantic poet. "Was it a vision or a waking dream" is the eternal theme of Yeats' poetry. He is attracted by the romantic idea of creative imagination. Yeats says in his autobiography, "My life is my poem". Yeats was immensely influenced by Shakespeare, Spenser, Shelley, Keats and Tennyson.

He was the last of the great romantics, but because of his life as a poet was so much longer than that of Keats or Shelley and so much more complex, passionate and interesting than that of Wordsworth, it seems to me that there is humanity, a solidity, a constant awareness of the demands of decorum and style in his work, which one does not find in theirs. (1)

The whole bent of W.B. Yeats' imagination is strongly towards the shaping of ideas in form of images. His ruling images seem to be woven round one centre in many connected strands forming a sort of pattern on a Persian carpet. Many scholars have made a thorough study of imagery and ideas in the poetry of W.B. Yeats but water as dominant symbol has not attracted sufficient attention from Yeastian scholars.

Yeats way fascinated, early in his poetic career, by the India of Romance. This fascination for India, particularly 'India of Romance' remained the lifelong passion

* **Assistant Professor - English, Govt. Degree College CaptainGanj, Basti.**

with Yeats. Concurrent with Yeats' interest in Theosophy and India was his preoccupation with Irish folk – lore, the Ireland of romance. Yeats' love for India and his nationalism did not in any way come to a clash. It is said that Yeats had no association with India during the period 1914 – 1931, till in 1931 he met Purohit swami. Dr. Naresh Guha in this connection says:

His biographer Joseph Hone has suggested that the Swami awakened his odd sentiment of Hinduism dormant since childhood. But the fact is that he pursued his study of Indian systems, such as Yoga and Tantra, into middle age and that his association with Tagore kept this interest fresh in his mind. His enthusiasm for Tagore may have waned somewhat after 1914, but not his interest in India. (2)

Keeping in view Yeats' lifelong fascination for India and the occult, it will be interesting to trace those aspects of water – imagery found in the Indian and the occult traditions that are woven into his poetry.

Yeats uses his image to represent several different levels of iconographic references. Similarly, water one of the chief icons of Yeats' poetry, is used in multiple iconographic references. One of such iconographic references is the use of water symbolizing creation and generation. The use of water imagery in Yeats' poetry, symbolizing creation and generation, is strikingly similar to Indian tradition of water – imagery through the water – myths of other countries to speak of the same. He knew of the Indian tradition from The Upanishads from Madame Blavatsky as also from his other Indian studies. In creation of the universe and the beginning of civilization in Indian philosophy is attributed to water. The destruction of the world by water during Pralaya itself contains the germs of creation. Every civilization Yeats believed, returns to the same source when it sprang.

He himself remembers a young girl singing at the edge of the sea, of the coming and going of the civilization. My imagination goes some years backward, and I remember a beautiful young girl singing at the edge of the sea in Normandy words and music of her own composition. She thought herself alone, stood barefooted between sea and sand,

sang with lifted head of the civilization that there had come and gone, ending every verse with the cry: 'O lord, let something remain. (3)

The reference here to the coming and going of civilization reminds us of the beginning and close of the Manvantar periods. The world 0f generation is frequently imagined as a stream in his imagery. The Upanishads repeatedly spoke of the phenomenal world as a stream. (4)

Yeats was well acquainted with the symbolic association of water with the love, act, sexual desire and procreation in various faiths and cultures of the world. It should also be remembered here that Yeats's personal experience was also an important factor in influencing his imagery of sexual desire. Images like and all, men's heart must burn and beat; and candle like foam on the dim sand and "mysterious wave of passion" appear with frequency only after the Diana Vernon affair. However, his early Indian studies must also have suggested to him the association of water with passion.

It is in his Indian poem of love that water symbolizes passion as well as eternity for the first time. The tide is linked with passion in the poem while the enamelled sea images eternity. Much later in his life, Yeats wrote about the association of water with sexual desire in Indian mythology, in his essay 'The Munduko Upanishads' 1935 – who knows what beginning, what act of creation is commemorated in that legend of a golden phallus rising once in every year from the waters of Manas Sarowar, or to what source Bhagwan Shri Hansa like many before, like many will come after made his perilous journey, not what his dreams or his undreaming sleep recalled? Yeats knew from his study of the Upanishads and the Principles of Tantra that the mystical union of the sexual act was also away to reach the Brahman. The Upanishads frequently associate water with the sexual act. So strong was the association of water with the sexual desire in Yeats's mind that sensual emotions always produced dreams of water. I dream of clear water, perhaps two or three times (the moon of the poem) then come erotic dreams. Then for weeks perhaps I write poetry with sex for theme. (5)

Water not only creates and sustains but also destroys. The flood – myth is to be found in almost all the mythologies of the world. However, the concept of Pralaya in Indian

mythology is highly poetic and picturesque and might strongly have appealed to Yeats's visual sense. According to Indian mythology Vishnu preserves created things through successive ages, until the close of the period termed Kalpa.

After Kalpa the same mighty deity Janardhan assumes the awful form of Rudra and destroys the universe. Having, thus, destroyed all things and converted the world into one vast ocean the Supreme reposes upon his mighty serpent couch amidst the deep: he awakes after a season, and again as Brahma becomes the author of creation. The Vishnu Purana says:

When the three worlds are one mighty ocean, Brahma, who is one with Narayana, satiate with the demolition of the universe, sleeps upon his serpent – bed contemplated the lotus – born by the ascetic inhabitants of the Janaloka …. (6) The association of sea with eternity in Indian mythology can easily be visualized and here in, I think, lies the appeal of this symbolic reference to Yeats. The vast illimitable ocean, without bound and dimension, where the sense of lengthy and breadth, time and place is lost, naturally suggests eternity. Greek mythology associated the sea with mortality and corporeal life. It was always symbolic of life and its passion to the Greeks. F.A.C. Wilson maintains that the sea to Yeats is invariably the sea of life.

Yeats, in his early poems, speaks of sevenfold sea. They are called sevenfold because they were the source of all worldly creations and the sprang under the seven Hazel – trees. Yeats is trying to reconcile the Indian and the Irish traditions in his water imagery. Later in life he spoke of an identical approach of both the Irish and the Indian tradition. Yeats often refers to the sea as old. The concordance of words, so significant in Yeats, suggests that the reference is to its timeless existence and significantly the word is also used in this context with reference to gods dwelling on sacred Himalayas in his poem "Anashuya and Vijaya". The sea is eternal like beauty and the stars have grown old dancing silver sandalled on its boundless surface. Yeats was influenced by Vedanta and Raja – Yoga. The search for the magic of India led Yeats to be introduced to a Bengali Brahmin called Mohini Chatterjee. He explained to Yeats the powers of yoga. He was also introduced to some great Hindu Vedantists who led him to study the Ten Principal Upanishads. One of the Vedantists was Purohit Swami. In his hunger for

attaining to spiritual powers, Yeats studied the Upanishads so deeply that he began to quote from them as early as 1901. Yeats also translated with Purohit Swami, The Ten Principal Upanishads. W.B. Yeats was immensely influenced by Plato, Plotinus, Gautam Buddha and the Hindu philosophy. But though he was influenced, he was not dominated by any philosophy. About him it is said, formally this may look like Hindu belief but the emotional colouring is very different and Yeats belief actually springs from a very different, central core of conviction. Hindu thought springs from a conviction that phenomenal experience is all we have and that all value must be found within it. Christian and Indian religious beliefs have this in common with the belief in progress – that they look for salvation in a state outside our present experience. Yeats does not believe that the salvation is a goal to which we can attain by moral discipline of material development; it is some – thing that we make out material already at our disposal. (7)

Shankar's philosophy, which Yeats comes to know from Mohini Chatterjee, emphasized the inner realization. It is said that the real life was that of dreaming, imagination and contemplation. In this way, his study of the books on Indian religion and Indian mythology made him aware from the very beginning of his career correspondence between his attitude towards water and the tradition of water imagery in Indian mythology and the occult, particularly Theosophy. This water symbolism appealed to his joyous philosophy; a subject mystic as he was; and was consistently used in his works. Thus, Yeats, creative art is passage to Divine Consolation amidst the human sufferings.

Work Cited

1. Frezer, G. S. (1964). *The modern writer and his word*. London: Penguin Books. p. 201
2. J.J.C.L 1964 – 104 for Hone's remark see W.B. Yeats (1865 – 1939 London 1962 p. 424)
3. Yeats, W. B. (1962). *A Vision*. Londan: Palgrave makmillan. pp. 219 – 220
4. Mundako Upanishad S.B. XV – 41
5. Letters on Poetry. p. 86
6. Vishnu Purana. p. 23
7. Conklin, T. (2019). *The Last Romantics*. New York: William Morrow & Co. pp. 259 - 260

बहमनी नगर कला शैली का विकास

लुसी कुमारी*

Lucyarya448@gmail.com

मुहम्मद बिन तुगलक के राज्यकाल में 1347 ई0 में अलाउद्दीन हसन बहमन शाह ने गुलबर्गा में एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। बहमनी वंश के शासक निर्माणकार्य में बड़ी रूचि लेते थे। वास्तुशिल्प की अपनी एक अलग शैली विकसित करने में सफल रही थी। यह न तो परंपरागत द्रविड़-चालुक्य शैली पर आधारित थी और न दिल्ली सल्तनत की शैली पर। यह प्रत्यक्ष रूप से फारस के वास्तुशिल्प से प्रभावित है, जहाँ से बहमनी राज्य का संस्थापक एक साहसिक यात्री के रूप में आया था। वह अपने साथ बड़ी संख्या में शिल्पकार, कारीगर तथा मजदूरों को भी लाया था। साथ ही मुहम्मद बिन तुगलक के द्वारा राजधानी को दिल्ली से दौलताबाद स्थानांतरित करने के निर्णय से भी कई शिल्पकार शाही सेवा छोड़कर बीजापुर आ गए, जहाँ दिल्ली तथा फारसी, दो स्थापत्य शैलियों का सामंजन प्रारंभ हो गया और उन्होंने गुलबर्गा में बड़ी-बड़ी इमारतें बनवाई जिसमें से अधिकांश अब नष्ट हो गए है। बहमनी नगर कला शैली की जो कुछ इमारतें शेष हैं, उनमें गुलबर्गा की जामी मस्जिद मुख्य है। अलाउद्दीन बहमन द्वारा गुलबार्गा में बनाई गई बालाहिसार अब ध्वस्त रूप में है।

जामी मस्जिद गुलबर्गा :-

काजवीनी शिल्पकार रफी की देखरेख में 1367 ई0 में बनी गुलबर्गा की जामी मस्जिद योजना के अनुसार नहीं है। एक तो इसमें न तो मध्य में खुला आंगन है और न इसके तीन ओर खम्भेदार दालानों की व्यवस्था है। यह ढ़की हुई मस्जिद है, जिसमें विशाल नुकीले मेहराबों का प्रयोग किया गया है। मुख्य कक्ष पर एक विशाल गुम्बद और चारों कोनों पर चार छोटे गुम्बद हैं। इसकी दूसरी विचित्रता इसका ऊँचा गुम्बद है, जो मध्य भाग की वेदी पर स्थित अधिवातायन के ऊपर बनाया गया है।[1] इसमें कोई भी भारतीय तत्त्व नहीं है और स्पष्ट ही इसकी प्रेरणा ईरान से आयी जिसके साथ यहाँ के शासकों को संबंध बराबर बना रहा था।[2]

महमूद गवाँ का मदरसा :-

1425 ई0 में बीदर को बहमनी साम्राज्य की राजधानी बनाया गया और परिणामस्वरूप वहाँ बड़े-बड़े महल, मस्जिद और मकबरे बने। कुछ महलों में बड़ा सुन्दर रंगीन अलंकरण हुआ था। बहते हुए पानी की कृत्रिम व्यवस्था की गयी थी। इन इमारतों में भी ईरानी प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होता है। इस दृष्टिकोण से बीदर का महमूद गवाँ का मदरसा प्रतिनिधि इमारत है। इसका निर्माण 1472 ई0 में हुआ। महमूद गवाँ एक सुसंस्कृत

* **शोध छात्रा, विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर**

ईरानी था। इसने इसका निर्माण विशुद्ध ईरानी पद्धति पर ईरानी कारीगरों द्वारा कराया। यहाँ तक कि अलंकरण के लिए ईरान से ही रंगीन टाइल्स मंगाई गई। महमूद गवाँ का मदरसा भारत की भूमि पर एक ईरानी कृति है और देश की वास्तुकला की परम्पराओं से इसका कोई संबंध नहीं है। परिणामस्वरूप यहाँ की वास्तुकला के विकास में इसका स्थान नगण्य है। न ही इसकी गिनती सुन्दर इमारतों में की जा सकती है। तोड़े और छज्जे-जिन तत्वों से प्रकाश और छाया का सौन्दर्य आता है उनका इनमें सर्वथा अभाव है।[3] उर्ध्वरचना में एक भद्दी मीनार के साथ एक भोंडा गुम्बद भी है जो बड़े बेमेल लगते हैं। विभिन्न अंगों में तालमेल न होने के कारण इसका पैबन्द लगी रंगीन गुदड़ी सी लगती है। स्पष्ट ही ईरानी पद्धति को यहाँ की भूमि पर बलपूर्वक थोपने का प्रयोग सफल नहीं हुआ।

बहमनी साम्राज्य के विघटन के पश्चात् उसमें कई स्वतंत्र राज्यों की स्थापना हुई। इनमें अमहदनगर के निजामशाही, बीजापुर के आदिमशाही और गोलकुण्डा के कुतुबशाही राज्य मुख्य थे। इनका अकबर से लेकर औरंगजेब तक लगभग सौ वर्ष तक मुगलों से कड़ा संघर्ष हुआ। 1687 ई0 तक ये तीनों राज्य मुगल साम्राज्य में मिला लिए गए।

हैदराबाद का चार-मीनार :-

कुतुबशाहियों ने गोलकुण्डा में 1512 से 1687 ई0 तक राज्य किया और गोलकुण्डा और हैदराबाद में बड़ी-बड़ी सुन्दर मस्जिदें और मकबरे बनवाये। मस्जिदों में जामी मस्जिद और मक्का मस्जिद और मकरबों में मोहम्मद कुली और अब्दुल्ला कुतुबशाह के मकबरे प्रसिद्ध हैं। वस्तुतः उनकी सबसे सुन्दर इमारत हैदराबाद की चारमीनार है, जिसका निर्माण 1591 ई0 में विजयद्वार की तरह हुआ। यह वर्गाकार है और इसकी भुजा 100 फीट लम्बी है। प्रत्येक मीनार 186 फीट ऊँची है। अर्थात् आगरे के ताजमहल की मीनारों से 54 फीट अधिक ऊँची। प्रत्येक मुखपट में 36 फीट चौड़ा एक विशाल मेहराब-द्वार दिया गया है। इस इमारत में बहुत से अन्य सुन्दर तत्वों का सम्मिश्रण हुआ है। उर्ध्वरचना पर स्थापित इसके निर्माण पर शासकों ने विशेष ध्यान दिया है और कुल मिलाकर यह इमारत बड़ी सुन्दर लगती है।[4]

बीजापुर में आदिलशाहियों के अधीन दक्षिण की सबसे सुन्दर और कलात्मक शैली का विकास हुआ। आदिलशाहियों को इमारतें बनवाने का बड़ा शौक था और डेढ़ सौ वर्षो के अल्पकाल में उन्होंने अकेले बीजापुर नगर में 50 से अधिक मस्जिदें, 20 से अधिक मकबरे और महल बनवाए। ये केवल संख्या में ही अधिक नहीं है बल्कि अत्यन्त उत्कृष्ट श्रेणी की रचनाएँ भी हैं। इनमें बीजापुर की जामी मस्जिद, इब्राहीम रोजा और गोल गुम्बद प्रतिनिधि इमारतें हैं।

बीजापुर के आदिलशाही वंश के लोग कला के महान संरक्षक थे। इन्होंने बड़ी संख्या में मस्जिद, कब्र और महलों का निर्माण किया। ये इमारतें स्थापत्य कला के उत्कृष्ट नमूने माने जाते हैं। आरंभ में बनाए गए इनके भवन बहमनी परंपरा के अनुरूप थे, किन्तु बाद में इन्हें विभिन्न श्रोतों से नई जानकारी मिली और इनमें निखार

आया। इन श्रोतों में ऑटोमन वुर्क विशिष्ट है, जहाँ के ये मूल निवासी रहे थे। यह प्रभाव इनकी इमारतों के शिखर पर चंद्राकृति प्रतीकों से स्पष्ट हो जाता है। बीजापुरी वास्तुशिल्प में भी कुछ विशेष स्वरूपों का विकास हुआ था। इनके गुम्बद अर्द्धवृत्ताकार रूप के हो गए थे। मेहराबों अब कोणात्मक नहीं होकर वक्राकृति धारण कर चुकी थी। स्तम्भों के स्थान पर ईंट-चूने के पाये थे तथा कार्निस या छज्जा का चलन हो गया था।[5]

बीजापुर की जामी मस्जिद का निर्माण अली शाह-प्रथम के राज्यकाल (1558-1580 ई0) में हुआ। खुले आंगन के तीन ओर सुन्दर मेहराबदार दलान है। पश्चिम की ओर अराधना भवन है। इनमें त्रिज्याकार मेहराबों का सुन्दर प्रयोग हुआ है। बाहर तोड़ों पर आधारित छज्जा लगाया गया है। अराधना भवन की छत पर मेहराबदार एक और मंजिल दी गयी है, जिसके कोनों से चार लघु मीनारें उठकर विशाल गुम्बद को चारों ओर से सुशोभित करती हैं। गुम्बद कमल की खलती हुई पंखुड़ियों के बीच में से ऐसा उठता है जैसे पृथ्वी आकाश को कोई चीच भेंट देने जा रही हो। बीजापुर की वास्तुशैली का सबसे विशिष्ट तत्त्व गुम्बद के आधार में खुलती हुई कमल की पंखुड़ियाँ ही हैं।6 स्पष्ट ही इसकी प्रेरणा भारतीय श्रोतों से ली गयी है। फर्गुसन के हिस्ट्र ऑफ इंडियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटैक्चर में उल्लेख है- "यह अपनी व्यवस्था और आयोजन के स्थान पर अपने विस्तार, सौन्दर्य के लिए अधिक दर्शनीय है।"[7]

बीजापुर का इब्राहीम रौजा :-

इब्राहीम रौजे का निर्माण इब्राहीम आदिलशाह प्रथम (1580-1680) ने करवाया। वास्तव में इसमें उसके मकबरे के अतिरिक्त एक सुन्दर मस्जिद भी है। दोनों ही वर्गाकार रचनाएँ हैं और एक ऊँची चौकी पर स्थित है। मकबरे को बड़े आकर्षक ढंग से संवारा गया है। मुख्य कक्ष के चारों ओर मेहराबदार बरामदा है, जिसके बाहर सुन्दर तोड़ों पर आधारित छज्जा है।

चारों कोनों पर चार लघु मीनारें (ज्नततमजे) जिनके अण्डाकार गुम्बद कमल की पंखुड़ियों पर जैसे सहज ही रख दिए गए हैं। इब्राहीम जैसे के प्रधान गुम्बद भी ऐसे ही कमल की खुलती हुई पंखुड़ियों पर रखा गया है। गुम्बद लगभग सम्पूर्ण गोल है और कमल की पंखुड़ियों के साथ बड़ा ही सुन्दर लगता है। वास्तुकार ने उर्ध्व रचना के विन्यास पर सबसे अधिक ध्यान दिया है और यही अंग इस मकबरे के सौन्दर्य का विशिष्ट तत्त्व है। बीजापुर की मस्जिद की रचना भी लगभग इससे मिलती-जुलती है।[8]

बीजापुर का गोल गुम्बद :-

बीजापुर की सबसे अधिक प्रसिद्ध इमारत मोहम्मद आदिलशाह (1627-1657 ई0) का मकबरा है, जिसे गोल गुम्बद भी कहते हैं। इसकी गिनती इमारत की सबसे विशाल और भव्य इमारतों में होती है। यह वर्गाकार है और प्रत्येक भुजा 200 फीट से अधिक लम्बी है। लगभग इतनी ही उसकी ऊँचाई है। चारों कोनों पर चार सम्बद्ध अठपहलू मीनारें हैं। ये सात मंजिल की हैं। प्रत्येक में खुले लघु मेहराब दिए गए हैं। इनके ऊपर वही

बीजापुरी गुम्बद है जो कमल की पंखुड़ियों पर आधारित हैं। प्रत्येक भुजा में तोड़ों पर आधारित छज्जा, लघु मेहराब और छत पर लघु छतरियों का प्रयोग किया गया है।[9]

मकबरे के अन्दर केवल एक बड़ा हॉल है, जिसमें जाने के लिए दो और मेहराबदार द्वार हैं, दो ओर के मेहराब बन्द हैं। यह हॉल 135 फीट लम्बा है और गुम्बद तक इसकी ऊँचाई 178 फीट है। इस प्रकार यह गुम्बद संसार का सबसे बड़ा और ऊँचा गुम्बद है। इसमें कोणात्मक मेहराबों का अत्यंत सूझबूझ और चतुरता से प्रयोग किया गया है और उनपर इस विशाल 10 फीट और एकहरे गुम्बद को संभाला गया है।[10] वास्तुकला का यह एक अद्भुत कमाल है, जिसका इससे पहले का और कोई उदाहरण नहीं मिलता है। शायद यह भारतीय वास्तुकारों की सृजनात्मक प्रतिभा की अपनी युक्ति थी। इस मकबरे के अलंकरण पर बहुत कम ध्यान दिया गया है। कलाकार का मुख्य ध्येय इसे विशाल और भव्य बनाना था और परिणामस्वरूप इसका सम्पूर्ण सौन्दर्य वास्तुकला के तत्वों के कारण है। इस दृष्टि से यह एक अत्यन्त उत्कृष्ट कृति है।

गोल गुम्बज के विषय में पर्सी ब्राउन मानते हैं, "यदि कोई इसके विशाल विस्तार को ही देखे तो यह भारतीय वास्तुकारों व कलाकारों की महान विजय है।"[11] यह अत्यन्त कुशलता के साथ संतुलित है और इसका सुडौल गुम्बद दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा गुम्बद हैं।[12] फर्गुसन यह देखकर आश्चर्यचकित था कि इतना विशाल आकार कैसे स्थिर हो सका। उसने लिखा है- "इस गुम्बद की सर्वोत्तम और अनूठी बात उसमें निहित है, जिसके द्वारा इसके पार्श्विक या बहिर्मुखी प्रतिबल का प्रतिकार किया गया है। इसकी पूर्ति के लिए 'लंबमानों' की व्यवस्था है, जिससे ये न केवल कोणात्मकता को समाप्त करते हैं बल्कि मेहराबों को एक दूसरे से विभक्त करते हुए यथेष्ट मात्रा में चिनाइ राशि को उचित रूप में सुस्थिर करते हैं। इसका वनज अन्तर्मुखी होता है जो गुम्बद के संभव भार के प्रतिकरण स्वरूप कार्य करता है।" [13]

बीजापुर में धार्मिक इमारत के अलावा अन्य इमारतों में कोई उल्लेखनीय कुशलता नहीं है। उस युग के महल तथा ऐसी अन्य इमारतें अब खंडहर के रूप में हैं। 'गगन महल' जिसका निर्माण 1560 ई0 में हुआ था, शाही निवास के लिए था तथा उसने मंत्रियों की सभा के लिए भी कमरे बने थे।

दक्षिण भारत में बहमनी सुल्तानों की इमारतों की वास्तुकला में दक्षिण हिन्दू कला का प्रभाव है। बहमनी सुल्तानों की इमारतों में हम देखते हैं कि तुर्की, मिस्री और ईरानी तत्वों के होने पर भी भारतीय शिल्पियों की प्रतिभा विदेशी प्रभाव से ऊपर उठ गयी और उन्होंने विदेशियों की कृतियों पर अपनी छाप पहले की अपेक्षा अधिक गहरी छोड़ दी। बहमनी सुल्तानों की इमारतें प्रायः गुलबर्गा, बीजापुर और बीदर में ही गुलबर्गा और बीदर की मस्जिदें दक्षिणी कला की आदर्श हैं। गुलबर्गा में फीरोजशाह का मकबरा बढ़ते हुए हिन्दू प्रभाव को प्रकट करता है। बीजापुर में मुहम्मद आदिलशाह की कब्र जिसे गोल-गुम्बद कहते हैं, दक्षिण भारत की शिल्पकला से प्रभावित एक उत्कृष्ट इमारत है। बहमनी सुल्तानों ने कई दुर्गो का निर्माण करवाया, जिनकी विस्तृत योजना व विशुद्धता की प्रशंसा मीडोज टेलर (डमंकवू ज्ंलसवत) में भी की है।[14]

हम देखते हैं कि नगरों, मस्जिदों, दुर्गो व भवनों की स्थापना को प्रोत्साहित करने में बहमनी शासकों ने भी कार्य किये-जिसमें गुलबर्गा और बीदर की मस्जिदें दक्षिण कला की श्रेष्ठ प्रतीक हैं।[15] मुहम्मद आदिलशाह का मकबरा, जिसे गोल गुम्बद कहते हैं, दक्षिण में एक विचित्र शैली का नमूना है। कहा जाता है कि इस पर तुर्की प्रभाव की छाप है।[16] बीजापुर के शासक बड़े निर्माता थे। कुछ मकबरे व स्मारक कला के आश्चर्यजनक कार्य हैं।

संदर्भ :-

1. चोपड़ा, पी. एन., पुरी, बी. एन. & दास. एम. एन. (1975). *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास*. दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड. पृ. 209.
2. डॉ. रामनाथ. (1972). *मध्यकालीन भारतीय कलाएँ एवं उनका विकास*. जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी. पृ. 51.
3. डॉ. रामनाथ. (1972). *मध्यकालीन भारतीय कलाएँ एवं उनका विकास*. जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी. पृ. 51.
4. डॉ. रामनाथ. (1972). *मध्यकालीन भारतीय कलाएँ एवं उनका विकास*. जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी. पृ. 51.
5. चोपड़ा, पी. एन., पुरी, बी. एन. & दास. एम. एन. (1975). *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास*. दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड. पृ. 210.
6. चोपड़ा, पी. एन., पुरी, बी. एन. & दास. एम. एन. (1975). *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास*. दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड. पृ. 52.
7. फर्गुसन, हिस्ट्री ऑफ इंडियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, कोटेड इन चोपड़ा, पुरी, दास, भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृ. 210.
8. फर्गुसन, हिस्ट्री ऑफ इंडियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, कोटेड इन चोपड़ा, पुरी, दास, भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृ. 210.
9. फर्गुसन, हिस्ट्री ऑफ इंडियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, कोटेड इन चोपड़ा, पी. एन., पुरी, बी. एन. & दास. एम. एन. (1975). *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास*. दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड. पृ. 210.
10. फर्गुसन, हिस्ट्री ऑफ इंडियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, कोटेड इन चोपड़ा, पुरी, दास, भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, पृ. 210.
11. चोपड़ा, पी. एन., पुरी, बी. एन. & दास. एम. एन. (1975). *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास*. दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड. पृ. 211.
12. चोपड़ा, पी. एन., पुरी, बी. एन. & दास. एम. एन. (1975). *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास*. दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड.
13. चोपड़ा, पी. एन., पुरी, बी. एन. & दास. एम. एन. (1975). *भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास*. दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड. पृ. 211.
14. लुनिया, बी. एन. (1952). *भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास*. आगरा : लक्ष्मी नारायण अग्रवाल एण्ड कम्पनी. पृ. 305-306.
15. महाजन, बी. डी. (2001). *मध्यकालीन भारत (1000 ई0 से 1761 ई0 तक)*. दिल्ली : एस चन्द एण्ड कं लि. पृ. 329.
16. महाजन, बी. डी. (2001). *मध्यकालीन भारत (1000 ई0 से 1761 ई0 तक)*. दिल्ली : एस चन्द एण्ड कं लि. पृ. 329.

संस्कृतसाहित्ये नाट्यस्योद्भवो विकासक्रमश्च

डॉ. जगदीश नारायण तिवारी[1]

sanskritamvande@gmail.com

अस्मिन् जगति स्थावरजंगमात्मके मानवेतरास्तु कानिचन वैशिष्ट्यानि अधिकृत्य प्रवृत्तिमन्तो भवन्ति, परं तेभ्यो नितरां भिन्नो मनुष्यः प्रायेण सर्वेष्वपि लभ्यमान वैशिष्ट्यान्यधिकृत्य तान्यतिक्रम्या नितरसाधारणवैशिष्ट्यमान् भवतीति मनोविदां समयः। मानवस्यानुकरणप्रवृत्तिरसाधारणधर्मेऽस्ति, तच्चेतनाया:। यद्यपि अनुकरणमूलकव्यवहारस्तु केषुचिदन्येष्वपि सत्वेषु वानरादिषु दृश्यते, परं स तु केवलमभ्यासजन्य एव, न तत्र ज्ञानविषयता भवतीति चिन्तयामि। अनुकरणवृत्तेः प्रमुख उद्देश्यस्तु कुतूहलनिवृत्तिरस्ति, तज्जन्यसौख्याप्तिरपि तदानुषंगिकफलरूपेण जायते। सर्वं खलु स्यात् परं तत्फलं मनोरंजनमात्रमेव एतन्मनोररंजनरूपं तु साधारणमेव, काव्यादुत्पन्नं मनोरंजनं तद्भिन्नं भवति। तदीय आस्वादे मनोरंजनातिरिक्तमपि बहुतरं फलं निविष्टं भवति। काव्यकलादिषु यद्यपि अनुकरणवृत्ते: मूलहेतुत्वं समुचितमाभाष्ति तथापि तदतिक्रम्य भरतादिपूर्वाचार्यसम्मता चतुर्वर्गफलावाप्तिरूपदेशादिकञ्च तस्यापूर्वं फलम्। धनञ्जयस्तु नाट्यं परिभाषमाण: अवस्थानामनुकरणमेव नाट्यपदेन व्यावहार तद्यथा दशरुपके -

"अवस्थानुकृतिर्नाट्यम, रूपकं तत्समारोपाद्"।[2]

मानवप्रकृतिं मानवेतरप्रकृतिञ्चानुकृत्य काव्यकलादयः आनन्दमुत्पादयन्ति। कलाकारो न केवलं बाह्ययकृतेरेवापितु अन्तः प्रकृतेरपि अनुकरणं करोति। तथाच तन्मनोगतभावामपि अनुकृत्यानक्ति। एवमेव कविरपि श्रव्यकाव्यादिषु पात्राणां मनोगतान् भावान् तथैव वर्णयति। अनुकरणस्योभयोरेव

रुपयोरंतरंगबहिरंगयो: यथार्थ चित्रणं यदा सम्पद्यते, तदैव नाटककारस्य कवेर्वा प्रयत्नसाफल्यं सम्पद्यते। भारतीयनाट्यपरम्पराया: प्रतिनिधिर्भगवान् भरत एव विद्यते। येन पूर्वाचार्यपरम्परां स्वानुभवैः प्रायोगिकै: समृद्धं। विधाय नाटकीयताया: कश्चिदपूर्वो मानदण्ड: संस्थापितः। नाट्यशास्त्रदिशा नाट्यस्योद्दभवः एवमस्ति - एकदा देवा: ब्रह्माणमुपगता: प्रार्थयामासुः - भगवन् ! चतुर्वर्गससिद्धिभूतं मनोरंजनप्रधानं कमप्युपायं भवान् विनिर्दिशतु। तदा ब्रह्मणा सर्वकलाज्ञानविज्ञानस्रोतोभूतान् वेदान् निर्मथ्य पाठ्यगीताभिनयरसान्वितं नाट्यतत्वं समुद्भावितम्।

तदुक्तञ्च नाट्यशास्त्रे भरतेन-

---

[1] **सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, साहित्य विद्यापीठ, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

[2]. *दशरूपकम्* , १/७

"जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि ॥[3]

अस्यैव प्रसंगस्य सम्यक्तया अभिनयदर्पणेऽपि स्थितिर्विद्यते -

"ऋग्यजु: सामवेदेभ्यो वेदाच्याथर्वण: क्रमात्।
पाठ्यञ्चाभिनयं गीतं रसान् संग्रह्य पद्मजः ॥
व्यरीरचच्छास्त्रमिदं धर्मकामार्थ मोक्षदम्।
नाट्यवेदं ददौ पूर्वं भरताय चतुर्मुखः"॥[4]

आचार्य भरतेन ब्रह्मणालब्धं शास्त्रमनुशील्य नाट्यवेदः प्रणीत:। एवम्प्रकारेण भारतीयपरम्परायां नाट्यस्योद्भवस्त्रेतायुगे चर्चित:। उपर्युक्तकथानकस्य वास्तविकीमस्वीकृत्यापि यदि विचार: स्यात्तदेदं स्पष्टमालक्ष्यते यद् ऋग्वेदस्य विभिन्न संवादसूक्तेषु नाटकीयतत्वानि विद्यन्ते। अभिनयस्यानेक तत्वानि यजुर्वेद संहितोक्त यज्ञविधानेषु सारल्येन लब्धुं शक्यन्ते। भरतमुनिनापि अभिनयस्यादानं यजुर्वेदादेव प्रोक्तम्। वैदिककाले नाटकानामायोजनमभवदिव्यस्यापि प्रमाणानि वाजसनेय संहितायां लभ्यन्ते। प्रसंगेऽस्मिन् मंत्रोऽयमीक्षणीयः -

नृत्ताय सूतं गीताय शैलूषं धर्माय सभाचरं नरिष्ठाय।
भीमलं नर्माय रेभं हासाय कारिमानन्दाय स्त्रीसखं प्रमदे।
कुमारीपुत्रं मेघायै रथकारं धैर्य्याय तक्षाणम् ॥[5]

मन्त्रेऽस्मिन् नृत्त, गीत, सूत, शैलूष इत्यादिशब्दाः अभिनयसामग्रया: सत्वं ध्वनयन्ति। यद्यपि केचन् विद्वांसो नैतनमतमंगीचक्रु: डॉ दासगुप्तमहोदयः वैदिककाले नाटकीयतत्वानामवस्थितिं स्वीकुर्वन्नपि नाटकस्य व्यवस्थितां रूपरेखां तात्कालिकीं न स्वीकरोति। तदुक्तञ्च तेन स्वकीये समालोचनात्मके प्रबन्धे

" It seems therefore, that even. If the elements of the drama were present in the Vedic times there is no proof that the dramas, in however rudimentary form were actually known. The actor is not mentioned nor does any dramatic terminology occur. There may have been some connection between the dramatic religious ceremonies and the drama embryo.[6]

एवमेव नाटकस्यान्यतत्वेषु प्रमुखं गीतं नृत्यञ्चेत्यस्ति। तत् सामवेदादुधृतमस्ति। रसानामादानमथर्ववेदादभवत्। नाट्यशास्त्रस्य 36 अध्यायानुसारेण भरतपुत्राणामभिनय प्रबन्धलेखने

[3]. *नाट्यशास्त्रम्* , १/१७
[4]. *नाट्यदर्पणम्* , कारिकासंख्या, ७-८-९
[5]. *यजुर्वेदसंहिता,* ३०/६
[6]. *History of Sanskrit Literature* by S.N.Dasgupta & Dr. K.K.de, Page No. 46-47

महर्षिसमुद्देश्यकदोषप्रसंगात्ते महर्षिभिरभिशापिता बभूवुः। ततः क्षमापनात् परं ते शुद्रत्वमाप्ताः धरित्रीतलमाजग्मुः। तेभ्य एवं नाट्यपरम्परेयं विकासमाप्नवती एवञ्चान्यापि कथाऽस्मिन् विषये प्रसिद्धास्ति- तदनुसारेण वृत्तवधानन्तरमिन्द्रस्य ब्रह्महत्या भयात् पलायनमभवत् तदा शक्ररहितस्य स्वर्गस्य कार्यभारो राज्ञा नहुषेण गृहीतः। नहुषः स्वर्गीयनाट्यं भूतलेऽवतारयितुं स्वर्गांगना आदिष्टवान्। परं महर्षिभिः परामृष्टोऽसौ भरतमुनिं सम्प्रार्थ्य तत्पुत्रान् नाट्यप्रवर्तनाय भूतलमानीतवान्। तै: भरतपुत्रैरेवेयं परम्परा प्रथिव्यां प्रससार। एवम्प्रकारेण नाट्यस्योद्भवस्थानेककथानकानि दिव्यानि प्राप्यन्ते।

नाट्यस्योभवे विविधमतानि-

नाटकस्योद्भवविषये यो भारतीयो दिव्यसिद्धान्तोऽस्ति तत्पाश्चात्यानां तदनुरानाञ्च कृते शिरोवेदनायते। तस्मात्तैः विविधाः परिकल्पना अस्याविर्भावविषये कृताः। दशरूपकस्य भूमिकायां वर्णितायां नाट्यपरम्परायां डॉ. हजारीप्रसाद्द्विवेदिना कानिचन मतानि उद्धृत्य तेषां निराकरणं कृतम्, एवमेव आचार्यसीतारामचतुर्वेदिना अभिनवनाट्यशास्त्रे तथा डॉ. रामजीपाण्डेयेन भारतीयनाट्यसिद्धान्त–उद्भव और विकास नाम्नि समीक्षाग्रन्थे अतीव दाक्ष्येणोपयुक्तमतानि निराकृतानि। तेषामंत्र संक्षेपेणोवस्थापनं विधाय निष्कृष्टं मतमुपस्थाप्यते।

तत्र खलु वैदिकसंवाद सिद्धान्तमाश्रित्य *हिस्ट्री ऑव संस्कृतलिटरेचर* नाम्नि ग्रन्थे मैक्डॉनल महोदयः प्रतिपादयति 'संवादा एवं भारतीयनाट्यसाहित्यस्यादिरूपाणि सन्ति।[7] डॉ. ए. बी. कीथ महोदय: एतान् संवादानाख्यान शब्देन कथयति, तथा एतेभ्य एवं नाट्योत्पत्तिममन्यत। डॉ. सीतारामचतुर्वेदिना मतमिदं निराकृतम्। तदनुसारेण नाटके कल्पितघटनाया अनुकारो भवति, परन्त्वेतेषु सूक्तेषु अभिनयोपादानान्येव सन्ति, नतु तद्विधिरस्ति।

अथ चेदमपिप्रोक्तं यत् कथान्तर्गत संवादा: नाटकीयसंवादाद् भिद्यन्ते। नाटकीयसंवादे वाचिकांगिकाद्यभिनय द्वारा कथोपकथनं भावपूर्णं विधाय रसा उत्पद्यन्ते, परं कथान्तर्गतसंवादे तर्क जिज्ञासादिप्रधान्यान्न तथा भिनेयत्वसिद्दि:। तस्मादिदं मतं नास्ति समीचीनम्।[8]

द्वितीय: सिद्धान्त: वैदिककर्मकाण्डसिद्धान्तोऽस्ति। अस्य प्रवर्तको जर्मनविद्वान् मैक्समूलरमहाशय आसीत्। मैक्समूलर-सिल्वालेवीमहोदयाभ्यां समर्थितेऽस्मिन् सिद्धान्तेऽपि दोषप्रसक्तिरस्ति। यतो हि नाटकस्यापि वैदिककर्मकाण्डवन् मान्यवत्त्वात् तस्यांगता दोषपूर्णा, वैदिककर्मकाण्डस्ययांगता स्वीकर्तुमपि न शक्यते अतस्तयोदिदं मतमपि दोषदुष्टत्वादुपेक्ष्यम्।

एवमेवस्तृतीयः सिद्धान्तः - नृत्यान्नाट्यस्योद्भमूलकोऽस्ति। मैक्डॉनलप्रभृतिभिरयमपि सम्भावित:। तेषां मतमस्ति नट् धातोरिदं निष्पन्नं नाटकमस्ति। 'नट्' इति पदं नृत् इत्याख्यघातोरेव प्राकृतं रुपमस्ति। तस्मान्नृत्यान्नाट्यमुद्भूतम्। परंतु संस्कृतव्याकरणे नट् घातो: नृत् धातोश्च पृथक पृथक पाठात् तथार्थ भेदाच्य

[7]. *भारतीयनाट्यसिद्धान्त,* पृष्ठसंख्या, २१

[8]. *भारतीय नाट्यशास्त्र* , सीताराम चतुर्वेदी, पृष्ठसंख्या, २१

धात्वोः स्वत: मतं खण्डितं भवति। अथ चेदमपि तथ्यमवधेयम् - नृत्त, नृत्य, नाट्य- त्रयोऽपि शब्दा: भिन्नार्थकत्वात् न साह्यार्थका: भवितुमर्हन्ति। एवञ्च धनञ्जयेन दशरूपके उभयोर्धात्वो निष्पन्नपदयो: पृथग् पृथग्रूपेण निर्देशस्तयो: नाट्योपकारिता च प्रतिपादिता। तद्यथा दशरूपके -

"मधुरोद्घतभेदेन तद्वयं द्विविधं पुनः।
लास्यताण्डवरूपेण नाटकाद्युपकारकम्" ॥[9]

एवम्प्रकारेण धनञ्जयीयेन साक्ष्येण पाश्चात्यमतं निराकृतं जायते। अथ च पाश्चात्यानाञ्चतुर्थ: सिद्धान्तः पुत्तलिकानृत्यन्नाट्यसमुत्पत्तेरस्ति। मतस्यास्याविर्भावक: डॉ. पिशेल महाशयोऽस्ति। अस्य आधारहीनं मतं प्रो. हिलेब्राष्ट महाशयो निराकृतवान्।

ततः परमेकस्यान्यमतस्यापि चर्चा समायाति- तदनुसारेण छायानाटकेभ्यो: नाटकान्याविर्भूतानि।

प्रो. ल्यूडर्श, प्रो. कोनो प्रभृतिविद्वांसः मतस्यास्य समर्थका: सन्ति। परन्तु छायानाटकानां स्थितेर्विषये कल्पितानि प्रमाणानि डॉ. कीथमहोदयेन निराकृतानि। एतद्तिरिच्य वीरपूजातोऽपि नाट्यसमुद्भवः पाश्चात्यनाट्यशास्त्रिभिरामन्यते। पूर्वोक्तानां सिद्धान्तानां निराकरणं विधाय 'वीरपूजां' नाट्यस्य मूलप्रकृतिं डॉ.रिजवेमहाशयः स्वीकृतवान्। मृतपूर्वजान् प्रत्यादरं दर्शयितुं नाट्यमाचर्यते स्म इत्याकारक: य: रिजवे महोदयस्य सिद्दांतोऽस्ति। असौ यद्यपि सर्वथा यथार्थो नास्ति, तस्याप्यास्मिन् आंशिकयाथार्थ्यमवश्यमस्ति।

तस्य भ्रामकत्व विषये इदमवधेयमस्ति तथ्यं यद् यदि वीरपूजार्थमेव नाट्याचार आसीत्तु संस्कृतवाङ्मये श्रृंगारहास्यादिरसप्रधानानां रूपकाणां स्थितिः कथमस्ति किम्प्रयोजनमेतेषां रुपकाणामिति विचिकित्सा भवति।

अन्ये समालोचका: यूनानदेशीयनाट्याद् भारतीयं नाट्यं समुत्पन्नमिति मन्यन्ते, यवनिका प्रभृति शब्द प्रयोगात् स्वमतं पोषयन्ति च, परं बलदेव-उपाध्याय:, डॉ. हजारीप्रसादद्विवेदि आचार्य सीतारामचतुर्वेदि प्रमुखै: संस्कृत-हिन्दी-अंग्रेजी भाषात्रये लब्धाधिकारैरेतन्मतमपि निराकृतम्।[10]

निष्कर्षतः एतद्वधेयं यन्नाट्यस्य बीजानि तु अन्यशास्त्राणां बीजमिव वेदेष्वेवावस्थितानि, परं वेदोत्तरकालिके समये शनैः शनै:, नाट्यपरम्पराग्रेसरन्ती भरतात् पूर्वमेव स्वीयं व्यवस्थितं परन्तु व्याप्यरूपमाप्तवती।

यतो हि भरतोऽपि नैकत्र द्रुहिण, नन्दिकेश्वर नखकुहादि नाट्याचार्याणां नामानि निरदिशत्। नाट्यस्यपरवर्तिनि समये प्रायेण महाभारतकालएवार्थाद् ख्रीष्टाब्दात् द्विसहस्राब्दपूर्वमेव नाट्यस्य यथाविधि समुचितः प्रयोगः समभवत्। तदनु आदिकाव्येऽपि नाट्य विद्याया: प्रकारान्तरेण चर्चालभ्यत एव।[11]

---

[9]. *दशरूपकम्* , १/९

[10]. *अभिनव नाट्यशास्त्र,* पृष्ठसंख्या, ४२

नट नर्तकसंघानां गायकानाञ्च संहनताम्।

यत: कर्णदुखावाच: शुश्राव जनता तत: ॥

अथ च पाणिनिरपि अष्टाध्याय्या: सूत्रयोर्द्वयो: नाट्याचार्याणां चर्चामाचकार।[12] तस्मादस्या: परम्पराया: प्राक्तनत्वं स्पष्टरूपेण परिलक्षितं भवति। वेदकालादारभ्यपरम्परेयं क्रमशो विकासमाप्नवती

नाट्यशास्त्रप्रणेतु: भरतस्य काले समुचितरूपेण व्यवस्थिताऽभवत्। तत: परमपि धनञ्जयधनिकरामचन्द्र गुणचंद्र शारदातनयाभिनवगुप्तपादाचार्यादिभिरस्याः परम्पराया: संवर्धनं पोषणञ्चाकारि।

सहायक संदर्भ:-

1. दशरूपकम्, बैजनाथ पाण्डेय, नई दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास.
2. नाट्यदर्पणम्, टी.सी.उप्रैति, नई दिल्ली : परिमल पब्लिकेशन्स.
3. नाट्यशास्त्र, कन्हैयालाल जोशी, नई दिल्ली : परिमल पब्लिकेशन्स.
4. नाट्यशास्त्र, बाबूलाल शुक्ला शास्त्री, वाराणसी : चौखम्बा प्रकाशन.

फार्म - IV

1.	प्रकाशन स्थान	:	वाराणसी
2.	प्रकाशन तिथि	:	01 दिसंबर, 2021
3.	मुद्रक का नाम	:	सूर्या आफसेट
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	30, विवेकानंद कालोनी, मलदहिया, वाराणसी
4.	प्रकाशक का नाम	:	अजय परमार
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	बी.- 30/239, नगवां, लंका वाराणसी
5.	संपादक का नाम	:	अजय परमार
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	पता	:	बी.- 30/239, नगवां, लंका वाराणसी - 221005
6.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र स्वामी हो तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत के अधिक का साझेदार या हिस्सेदार हों। : कोई नहीं		

मैं, अजय परमार एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य है।

01दिसंबर 2021 प्रकाशक का हस्ताक्षर

[11]. *वाल्मीकीयरामायणम्*, १/४/-८-९-१०-३४

[12]. पाराशर्यशिलाभ्यां भिक्षुनटसूत्रयो:, ४/३/११० , कर्मन्दकृशाश्वादिभि:, ४/३/१११

भोजपुरी में संज्ञाओं के रूपसाधक प्रत्यय

धनन्जय सिंह[1]

dhananjaysinghg0548@gmail.com

सारांश

भोजपुरी में आठ शब्दवर्ग होते हैं जिनमें एक संज्ञा है। किसी भी भाषा में संज्ञा शब्दों की संख्या अन्य शब्दवर्गों की तुलना में अधिक होती है। किसी भी भाषा में प्रत्यय की मत्वपूर्ण भूमिका होती है, जो मूल शब्दों के साथ जुड़कर नए शब्दों का निर्माण करता है। प्रत्यय की अहम भूमिका कोश निर्माण में होती है, जो मूल शब्दों के साथ जुड़कर नए-नए शब्दों का निर्माण करता है। भोजपुरी में प्रत्ययों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है- उपसर्ग और अंतप्रत्यय। उपसर्ग को 'पूर्वप्रत्यय' तथा प्रत्यय को 'अंतप्रत्यय' भी कहते हैं। प्रत्यय को 'शब्दांश' कहते हैं, जो मूल शब्द के साथ जुड़कर नए शब्दों का निर्माण करते हैं; जैसे- पन- अपनापन, आवट- लिखावट, आ- मेला, अउती- बुढ़उती आदि। कुछ ऐसे भी शब्दांश होते हैं जिनके योग से नए शब्दों का निर्माण नहीं होते हैं लेकिन शब्दों का नए-नए रूप निर्मित होते हैं; जैसे- लइका से लइकन/लइकवन, लइकी से लइकिन/लइकियन/लइकिनन आदि। प्रस्तुत शोध-पत्र में भोजपुरी संज्ञाओं के रूपसाधक प्रत्ययों के योग से मूल शब्दों में होने वाले रूप परिवर्तन को समझने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द: *भोजपुरी, संज्ञा, पूर्वप्रत्यय, अंतप्रत्यय (प्रत्यय), मूल शब्द, रूपसाधक।*

1. परिचय

प्रत्यय को शब्दांश कहते हैं, जो शब्दों के साथ जुड़कर नए-नए शब्दों (या शब्दरूपों) का निर्माण करते हैं। प्रत्ययों के जुड़ने से शब्दों के अर्थ एवं रूप में परिवर्तन होते हैं। प्रत्यय का अपना कोई कोशीय अर्थ नहीं होता लेकिन उनमें शब्दों के साथ जुड़कर अर्थ भेद करने की क्षमता होती है। प्रत्ययों को शब्दों के साथ जुड़ने पर मूल शब्दों में कुछ रूप परिवर्तन होते हैं। भोजपुरी में प्रत्ययों के योग की एक व्यवस्था है, जो किसी शब्द में जुड़कर दूसरे शब्द और पुनः इस निर्मित शब्द में अन्य प्रत्यय जुड़कर नए शब्द का निर्माण करते हैं। अर्थात इस प्रक्रिया में एक प्रत्यय के बाद और प्रत्यय जोड़कर नए-नए शब्द निर्मित किए जा सकते हैं; जैसे- राष्ट्र में 'ईय' प्रत्यय जोड़कर 'राष्ट्रीय'। लेकिन कुछ ऐसे भी प्रत्यय हैं, जो मूल शब्द में जुड़कर नए शब्दों का निर्माण नहीं करते हैं बल्कि मूल शब्द का शब्दरूप बदल जाता है; जैसे- लइका से लइकन, मरद से मरदन आदि। यहाँ मूल शब्द में 'न' प्रत्यय जुड़ा है। जो किसी नए शब्द का निर्माण न करके उसके एकवचन से बहुवचन रूप का निर्माण करते हैं। ऐसे प्रत्ययों को रूपसाधक प्रत्यय कहते हैं। भोजपुरी में शब्द निर्माण की प्रक्रिया में प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं- व्युत्पादक और रूपसाधक। जिन प्रत्ययों के योग से नए कोशीय शब्दों का निर्माण होता है, उसे व्युत्पादक कहते हैं; जैसे- लिख + आवट=लिखावट। जिन प्रत्ययों के योग से नए

[1] **पी-एच. डी. (भाषा प्रौद्योगिकी), महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)**

कोशीय शब्दों का निर्माण न होकर उस शब्द के विविध व्याकरणिक रूपों का निर्माण होते हैं, उसे रूपसाधक कहते हैं; जैसे- मरद से मरदे, मरदो, मरदन तथा मरदवा। यहाँ पर 'मरदे, मरदो, मरदन तथा मरदवा' नए शब्द नहीं है बल्कि 'मरद' शब्द के ही बहुवचन और परसर्गीय रूप है।

2. भोजपुरी संज्ञाओं का रूपसाधन प्रत्यय

रूपसाधक प्रत्ययों के योग से शब्दों के रूप में परिवर्तन होता है लेकिन वे अपना कोशीय अर्थ नहीं छोड़ते। यह परिवर्तन एकवचन से बहुवचन तथा परसर्गीय शब्दों के निर्माण में होता है; जैसे- 'लइका' से 'लइकवे, लइकवो, लइकवन/लइकन, लइकवने/लइकने, लइकवनों/लइकनों, लइकवा' आदि। अध्ययन से भोजपुरी में संज्ञाओं के अलग-अलग शब्दरूपों से रूपसाधक प्रत्यय प्राप्त हुए हैं। जो इस प्रकार से हैं- 'वे, वो, वन, न, नन, ने, वने, वनों, नों, वा, ये, यो, यन, यने, यनों, या, ◌े, ◌ो, यवा, यवे, यवो, यवन, यवने, यवनों, ◌िये, ◌ियो, ◌ियन, ◌ियने, ◌ियनों, ◌िया, ◌ा, अन, अने, अनों' आदि।

3. रूपसाधक प्रत्यय का प्रयोग एवं रूप परिवर्तन

भोजपुरी में संज्ञा शब्दों का बहुवचन रूप बनाने के लिए कुछ प्रमुख प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है। शब्दों का शब्दरूप बनाते समय यह भी ध्यान रखा जाता है कि शब्द की प्रकृति क्या है और यह किस लिंग (पुल्लिंग/स्त्रीलिंग) के अंतर्गत आता है? सभी प्रत्ययों का प्रयोग सभी शब्दों में एक समान नहीं होता है बल्कि उस शब्द की प्रकृति और लिंग पर निर्भर करता है कि किस शब्द के साथ कौन-सा प्रत्यय जुड़ेगा और कौन-सा प्रत्यय नहीं। यह शब्द के अंतिम स्वर और शब्द के लिंग पर भी निर्भर करता है। जिसकी चर्चा नीचे की जा रही है-

- **'वे' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग, ऊकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'वे' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत, आकारांत और ऊकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- घर-घरवे, बाचा-बचवे, लइका-लइकवे, पिल्ला-पिल्लवे, बछरू-बछरूवे, मेहरारू-मेहररुवे, थरिया-थरियवे आदि।

  नोट- 'वे' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (ही) रूप का कार्य करते हैं।

  नोकरी दिआवे के बात लइकवे चलवले रहलन सऽ। (नौकरी दिलाने की बात लड़के ही चलाए थे।)

- **'वो' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग तथा ऊकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'वो' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत, आकारांत और ऊकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- घर-घरवो, ईंटा-ईंटवे, थरिया-थरियवो, बाचा-बचवो, पिल्ला-पिल्लवो, गोरू-गोरूवो, मेहरारू-मेहररुवो, नाऊ-नउवो आदि।

नोट- 'वो' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (भी) रूप का कार्य करते हैं।

अब त लइकवो स्कूले जाये लगलन सऽ। (अब तो लड़के भी स्कूल जाने लगे हैं।)

- **'वन' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग तथा ऊकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'वन' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत, आकारांत और ऊकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- घर-घरवन, चाचा-चचवन, खुरपा-खुरपावन, छुरा-छुरवन, मेहरारू-मेहररुवन, बछरू-बछरूवन, नाऊ-नउवन आदि।

  नोट- 'वन' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

  लइकवन के खाना दे दऽ। (लड़कों को खाना दे दो।)

- **'न' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग, ईकारांत स्त्रीलिंग, ऊकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'न' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत, आकारांत और ऊकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- मरद-मरदन, लइका-लइकन, लइकी-लइकिन, मेहरारू-मेहरारून आदि।

  नोट- 'न' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

  हम लइकन के लहेंटले बानीं। (हमने (मैंने) लड़कों को भगा दिया।)

- **'नन' प्रत्यय का प्रयोग-** ईकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'नन' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता है; जैसे- लइकी-लइकिनन आदि।

  नोट- 'नन' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

  लइकिनन के पानी द। (लड़कियों को पानी दो।)

- **'ने' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग तथा ईकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ने' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत, आकारांत और ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- कुकुर-कुकुरने, बाभन-बभनने, लोहार-लोहरने, लइका-लइकने, लइकी-लइकिने आदि।

  नोट- 'ने' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (ही) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

  सीता आपन *लइकने* से कहली। (सीता अपने लड़कों से कही।)

- **'वने' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग, ईकारांत पुल्लिंग तथा ऊकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'वने' प्रत्यय

का प्रयोग किया जाता है। 'वने' प्रत्यय का प्रयोग वाक्य में बहुवचन तिर्यक के साथ 'ही' का भी होता है। जिससे अकारांत, आकारांत, ईकारांत और ऊकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- मरद-मरदवने, इनार-इनरवने, लइका-लइकवने, पिल्ला-पिल्लवने, बाछा-बछवने, भाई-भइयवने, मेहारू-मेहररुवने, नाऊ-नउवने आदि।

नोट- 'वने' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (ही) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

लइकवने के खाना दऽ। (लड़कों को खाना दो।)

- **'वनों' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग, ईकारांत पुल्लिंग तथा ऊकारांत पुल्लिंग स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'वनों' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत, आकारांत, ईकारांत और ऊकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- मरद-मरदवनों, इनार-इनरवनों, खाँचा-खँचवनों, पिल्ला-पिल्लवनों, मेहारू-मेहररुवनों, नाऊ-नउवनों आदि।

  नोट- 'वनों' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (भी) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

  आपन लइकवनों के भेज दिहऽ। (अपने लड़कों को भी भेज देना।)

- **'नों' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग, ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग तथा ऊकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'नों' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत, आकारांत, ईकारांत और ऊकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- कुकुर-कुकुरनों, बाभन-भभनों, लइका-लइकनों, लइकी-लइकिनों, मेहारू-मेहारूनों आदि।

  नोट- 'नों' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (भी) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

  तू आपन लइकिनों के बुलाव। (आप/तू अपनी लड़कियों को बुलाइए।)

- **'वा' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग, आकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग, ईकारांत पुल्लिंग तथा ऊकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'वा' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत, आकारांत, ईकारांत और ऊकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- घर-घरवा, इनार-इनरवा, चूना-चूनवा, थरिया-थरियवा, बाचा-बचवा, भाई-भइयवा, हँसुआ-हँसुअवा, पठरू-पठरूवा, मेहारू-मेहररुवा, नाऊ-नउवा आदि।

  नोट- 'वा' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन, एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन रूप का कार्य करते हैं।

a. तोहार लइकवा का कइले बा? (आपके/तुम्हारे लड़के ने क्या किया है?)

b. ओकर/उनकर लइकवा कहवा रहत बा? (उसका/उनका लड़का कहाँ रहता है?)

- **'ये' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग तथा ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ये' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत और ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- परेह-परेहिये, रात-रतिये, अदमी-अदमिये, लइकी-लइकिये, बेटी-बेटिये, चोरनी-चोरिनिये, पानी-पनिये, बाछी-बछिये आदि।

  नोट- 'ये' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (ही) रूप का कार्य करते हैं।

  पहिले-पहिल *लइकिये* होली सन। (पहिले-पहिले लड़की ही होती है।)

- **'यो' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग तथा ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यो' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। 'यो' प्रत्यय का प्रयोग वाक्य में 'भी' का कार्य करता है। अकारांत और ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- परेहियो, रतियो, अदमियो, लइकियो, बेटियो, बछियो आदि।

  नोट- 'यो' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (भी) रूप का कार्य करते हैं।

- **'यन' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग तथा ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यन' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत और ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- रात-रतियन, अदमी-अदमियन, लइकी-लइकियन, बेटी-बेटियन, भाई-भइयन, मड़ई-मड़इयन, भउजाई-भउजइयन, चोरनी-चोरिनियन, बाछी-बछियन, खाँची-खँचियन आदि।

  नोट- 'यन' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'यने' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग तथा ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यने' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत और ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- गाय-गइयने, अदमी-अदमियने, लइकी-लइकियने, बेटी-बेटियने, बाछी-बछियने, भउजाई-भउजइयने, मड़ई-मड़इयने आदि।

  नोट- 'यने' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (ही) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'यनों' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग तथा ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यनों' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत और ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- गाय-गइयनों, झाल-झलियनों, अदमी-अदमियनों, बेटी-बेटियनों, बाछी-बछियनों, भउजाई-भउजइयनों, मड़ई-मड़इयनों आदि।

नोट- 'यनों' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (भी) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'या' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग, ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग तथा ऊकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'या' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत और ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- परेह-परेहिया, रात-रतिया, लइकी-लइकिया, अदमी-अदमिया, चीनी-चिनिया, पानी-पनिया, भेली-भेलिया, मड़ई-मड़इया आदि।

  नोट- 'या' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन, एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन रूप का कार्य करते हैं।

- **'े' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'े' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- मरद-मरदे, बैल-बैले, कुकुर-कुकुरे, लोहार-लोहरे आदि।

  नोट- 'े' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (ही) रूप का कार्य करते हैं।

- **'ो' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ो' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- कुकुर-कुकुरो, देवर-देवरो, सोनार-सोनरो आदि।

  नोट- 'ो' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (भी) रूप का कार्य करते हैं।

- **'यवा' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग तथा ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यवा' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत और ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता है। जैसे- गाय-गइयवा, भाई-भइयवा आदि।

  नोट- 'यवा' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन, एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन रूप का कार्य करते हैं।

- **'यवे' प्रत्यय का प्रयोग-** ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यवे' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता है। जैसे- भाई-भइयवे आदि।

  नोट- 'यवे' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (ही) रूप का कार्य करते हैं।

- **'यवो' प्रत्यय का प्रयोग-** ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यवो' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता है। जैसे- भाई-भइयवो।

  नोट- 'यवो' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (भी) रूप का कार्य करते हैं।

- **'यवन' प्रत्यय का प्रयोग-** ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यवन' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता है। जैसे- भाई-भइयवन।

  नोट- 'यवन' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'यवने' प्रत्यय का प्रयोग-** ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यवने' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता है। जैसे- भाई-भइयवने आदि।

  नोट- 'यवने' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (ही) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'यवनों' प्रत्यय का प्रयोग-** ईकारांत पुल्लिंग और स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'यवनों' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ईकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता है। जैसे- भाई-भइयवनों आदि।

  नोट- 'यवनों' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (भी) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'ि◌ये' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ि◌ये' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- पतोह-पतोहिये, सेम-सेमिये, नाउन-नउनिये, बाघिन-बघिनिये आदि।

  नोट- 'ि◌ये' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (ही) रूप का कार्य करते हैं।

- **'ि◌यो' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ि◌यो' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- पतोह-पतोहियो, सेम-सेमियो, नाउन-नउनियो, बाघिन-बघिनियो आदि।

  नोट- 'ि◌यो' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन (भी) रूप का कार्य करते हैं।

- **'ियन' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ियन' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- सेम-सेमियन, दुलहिन-दुलहिनियन आदि।

  नोट- 'ियन' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'ियने' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ियने' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- पतोह-पतोहियने, सेम-सेमियने, बाघिन-बघिनियने आदि।

  नोट- 'ियने' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (ही) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'ियनों' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ियनों' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- पतोह-पतोहियनों, सेम-सेमियनों, नाउन-नउनियनों आदि।

  नोट- 'ियनों' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (भी) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'िया' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत स्त्रीलिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'िया' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन होता भी है और नहीं भी। जैसे- कठवत-कठवतिया, बहिन-बहिनिया आदि।

  नोट- 'िया' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन, एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन रूप का कार्य करते हैं।

- **'ा' प्रत्यय का प्रयोग-** अकारांत पुल्लिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'ा' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे अकारांत शब्दों में रूप परिवर्तन भी होता है और नहीं भी। जैसे- कुकुर-कुकुरा, बानर-बनरा, सोनार-सोनरा, लोहार-लोहरा, बाभन-बभना आदि।

  नोट- 'ा' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द एकवचन, एकवचन तिर्यक तथा बहुवचन रूप का कार्य करते हैं।

- **'अन' प्रत्यय का प्रयोग-** ऊकारांत पुल्लिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'अन' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ऊकारांत शब्दों में कोई रूप परिवर्तन नहीं होता है। जैसे- पठरू-पठरूअन, डमरू-डमरूअन आदि।

  नोट- 'अन' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'अने' प्रत्यय का प्रयोग-** ऊकारांत पुल्लिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'अने' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ऊकारांत शब्दों में कोई रूप परिवर्तन नहीं होता है। जैसे- पठरू-पठरूअने, डमरू-डमरूअने आदि।

  नोट- 'अने' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (ही) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

- **'अनों' प्रत्यय का प्रयोग-** ऊकारांत पुल्लिंग शब्दों से अंत होने वाले शब्दों का शब्दरूप बनाने के लिए 'अनों' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है। जिससे ऊकारांत शब्दों में कोई रूप परिवर्तन नहीं होता है। जैसे- पठरू-पठरूअनों, बछरू-बछरूअनों आदि।

  नोट- 'अनों' प्रत्यय के योग से निर्मित होने वाले शब्द बहुवचन (भी) तथा बहुवचन तिर्यक रूप का कार्य करते हैं।

4. उपसंहार

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्यय शब्दांश होते हैं जो शब्दवर्गों के साथ जुड़कर शब्दों के बनावट को परिवर्तित कर देते हैं। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना होती है तथा उनकी अपनी व्याकरण सम्मत नियम भी होती है। भोजपुरी में संज्ञाओं के रूपसाधक प्रत्ययों के जुड़ने की एक प्रक्रिया है, जो शब्द की प्रकृति और लिंग पर निर्भर करता है। भोजपुरी में संज्ञा शब्दों के अध्ययन और विश्लेषण के दौरान निम्न रूपसाधक प्रत्यय प्राप्त हुए हैं। जिससे शब्दों का शब्दरूप परिवर्तन के साथ-साथ उसमें रूप परिवर्तन भी होता है और नहीं भी। प्रत्ययों का प्रयोग इस शोध-पत्र में प्रस्तुत करने का एक प्रयास किया गया है।

संदर्भ :-

1. ओझा, त्रिभुवन. (1987). *प्रमुख बिहारी बोलियों का तुलनात्मक अध्ययन.* वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन.
2. गुरु, कामता प्रसाद. (2012). *हिंदी व्याकरण.* नई दिल्ली: प्रकाशन संस्थान.
3. तिवारी, शकुंतला. (2009). *भोजपुरी की रूपग्रामिक संरचना.* कानपुर: विकास संस्थान.
4. तिवारी, उदयनारायण. (2011). *भोजपुरी भाषा और साहित्य.* पटना: राष्ट्रभाषा परिषद.
5. त्रिपाठी, आचार्य रामदेव. (1987). *भोजपुरी व्याकरण.* पटना: भोजपुरी अकादमी प्रकाशन.
6. त्रिपाठी, रामदेव. (1987). *भोजपुरी व्याकरण.* कानपुर: विकास संस्थान
7. पाण्डेय, अनिल कुमार. (2010). *हिंदी संरचना के विविध पक्ष.* दरियागंज नई दिल्ली: प्रकाशन संस्थान.
8. प्रसाद, धनजी. (2019). *हिंदी का संगणकीय व्याकरण.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
9. वाजपेयी, किशोरीदास. (1950). *हिंदी शब्दानुशासन.* वाराणसी: नागरीप्रचारिणी सभा.
10. सिंह, जयकान्त. (2013). *मानक भोजपुरी भाषा, व्याकरण आ रचना.* मुजफ्फरपुर (बिहार): राजर्षि प्रकाशन.
11. सिंह, शुकदेव. (2009). *भोजपुरी और हिंदी.* वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन.

20 वीं सदी का महाठग : नटवर लाल

डॉ. मन्नू राय[1]

mannooraisewa@gmail.com

प्रकृति प्रत्येक इंसान के अंदर एक विशेष प्रतिभा के साथ धरती पर भेजती है। व्यक्ति इसी प्रतिभा के सहारे समाज में अपने को स्थापित करता है। कुछ लोग अत्यधिक पैसा कमाने और चर्चित होने का सपना देखते हैं, तो कोई समाज सेवा, राष्ट्र सेवा हेतु अपने जीवन को समर्पित कर अमरत्व को प्राप्त करना चाहते हैं। ये बात अलग है कि कुछ लोग सिर्फ सपना देखते हैं और अपने सपने को सच करने के लिए कुछ नहीं करते लेकिन जो अपना सपना सच करने के लिए लगन व परिश्रम से मेहनत करते हैं वे धीरूभाई अंबानी, दशरथ मांझी या फिर वे नटवर लाल बन जाते हैं। नटवर लाल अपने दौर के सबसे जीनियस व्यक्ति थे। आपने रॉबिन हुड की कहानी सुनी होगी, जो अमीरों से पैसे लूट कर उसको गरीबों में बांट दिया करता था। नटवर लाल ने भी अपनी जिंदगी में कुछ ऐसा करने की कोशिश की थी। जिससे भारत में जाल-साजी व ठगी का बेताज बादशाह बन गए थे। नटवर लाल के किस्से इस तरह मशहूर हुए कि जब कोई जाल-साज पकड़ा जाता है तो लोग उसे नटवर लाल की उपाधि देते हैं। हिंदुस्तान में जब भी धोखा-धड़ी का इतिहास लिखा जाएगा, नटवर लाल का नाम पहले पन्नों पर स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जाएगा।

बीसवीं सदी के मशहूर ठग नटवर लाल का वास्तविक नाम मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव था। जिनका जन्म 27 मार्च 1912 को बिहार राज्य के सिवान जिला के रूईया बंगरा गाँव में हुआ था। पिता रघुनाथ प्रसाद श्रीवास्तव अपने इलाके के एक समृद्ध जमीदार थे तथा रेलवे में सहायक स्टेशन मास्टर पद से सेवानिवृत्त के पश्चात जीवन के अंतिम दिनों तक कृषि कार्य करते रहे। माता दुलारी देवी कुशल ग्रहिणी थीं तथा आध्यात्मिक प्रवृत्ति की होने के कारण पूजा-पाठ में अधिक ध्यान देती थी। रघुनाथ प्रसाद श्रीवास्तव के दो पुत्र मिथलेश कुमार श्रीवास्तव एवं गंगा प्रसाद श्रीवास्तव की प्रारंभिक शिक्षा जीरादेई में हुई थी।

मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव से नटवर लाल बनने की दो अलग-अलग कहानियां है। पहली कहानी के मुताबिक बिहार के सिवान जिले के बंगरा गाँव का रहने वाला मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव धनी जमीदार रघुनाथ प्रसाद श्रीवास्तव के बड़े बेटे थे, जो पढ़ने में एक औसत छात्र थे। पढ़ाई के बजाय फुटबॉल और शतरंज में उनकी रुचि ज्यादा थी। मैट्रिक की परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने पर मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव के पिता द्वारा खूब पिटाई हुई, जिसके बाद वे कोलकाता भाग गए उस समय उनकी जेब में सिर्फ ₹5 थे। कोलकाता में उन्होंने

[1] **प्रखंड शिक्षक, राजकीय उत्क्रमित मध्य विद्यालय पिठौरी सिवान (बिहार)-841436**

बिजली के खंभे के नीचे पढ़ाई की, बाद में केशवराम नाम के एक सेठ ने मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव को अपने बेटे को पढ़ाने के लिए रख लिया। मिथिलेश कुमार सेठ के बच्चों को पढ़ाने के साथ-साथ अपनी पढ़ाई भी जारी रखें। कुछ दिनों के बाद मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव ने सेठ से अपनी आगे की पढ़ाई के लिए पैसे उधार मांगे, जिसे सेठ ने देने से इनकार कर दिया। सेठ के इनकार करने से मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव इतना चीड़ गए कि उसने रुई की गांठ खरीदने के नाम पर सेठ से चार लाख पचास हजार रुपये ठग लिये।

दूसरी कहानी यह है कि एक बार मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव को उनके पड़ोसी बाबू शंकर सहाय ने बैंक ड्राफ्ट जमा करने के लिए भेजा। बैंक में जाकर मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव ने बाबू शंकर सहाय के हस्ताक्षर को हूबहू कॉपी किए। उस समय मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव को पहली बार लगा कि वे जाल-साजी का काम शानदार ढंग से कर सकते हैं। उस दिन के बाद से मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव कुछ दिनों तक अपने पड़ोसी के खाते से पैसे निकालते रहे, जब उनके पड़ोसी को इस बात की भनक लगी, तब तक उनके बैंक खाता से ₹1000 निकाल चुके थे, उसके बाद मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव कोलकाता चले गए। वे कोलकाता जाकर एक सेठ के यहां उसके बच्चे को होम ट्यूशन पढ़ाते हुए बलराम देव शिक्षण संस्थान कोलकाता से हाई स्कूल, कोलकाता विश्वविद्यालय से बी. कॉम, फिर विधि में स्नातक की डिग्री हासिल की। पढ़ाई के साथ-साथ ब्रोकर का कार्य, फिर कपड़ों की दुकान करने की कोशिश की लेकिन सफलता नहीं मिली। वकालत करते-करते कई फर्जी डिग्रीया बनाई, फिर एक स्कूल में प्रिंसिपल बन गए। मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव हिंदी, अंग्रेजी, भोजपुरी, उर्दू, बांग्ला, अवधी मैथिली मराठी सहित कई भारतीय भाषाओं के अच्छे जानकार थे। अंग्रेजी भाषा में फराटेदार लिखना-पढ़ना और बोलने की कला ने जाल-साजी की दुनिया में नई ऊंचाई प्रदान किया तथा ठगी और जाल-साजी की दुनिया का बेताज बादशाह बना दिया। कूटरचित दस्तावेज तैयार करना, फर्जी हस्ताक्षर करना बाएं हाथ का खेल था। नियमित रूप से हिंदी और अंग्रेजी अखबार को पढ़ना दिनचर्या का अहम हिस्सा था। चार सौ से अधिक ठगी के मामलों में अभियुक्त थे, वे पचास से अधिक अलग-अलग नामों से बिहार उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, नई दिल्ली, हरियाणा, महाराष्ट्र, गुजरात सहित कई राज्यों में अपने कारनामों को अंजाम दिए, जिसमें नटवर लाल सबसे अधिक लोकप्रिय नाम रहा।

आपने डाकू, चोर, लुटेरों व नेताओं को लूटते सुना होगा, नटवर लाल ने इन सभी को लूटे। यहां तक कि नर्तकी और हिजड़ों तब को भी नहीं बक्से। उन्होंने हजारों लोगों को धोखा दिए। वे हमेशा ठगी के लिए शहर बदलते रहते थे। लोगों को धोखा देने के लिए उपन्यासों को पढ़कर आईडिया इस्तेमाल करते थे। ठगी में नटवरलाल इतने माहिर थे कि उसने तीन बार ताजमहल, दो बार लाल किला, एक बार राष्ट्रपति भवन और एक बार संसद भवन तक भेज दिए थे। राष्ट्रपति डॉ राजेंद्र प्रसाद के फर्जी हस्ताक्षर करके उन्होंने संसद बेच दिए थे। जिस समय संसद को बेचा गया था, उस समय सारे सांसद वही मौजूद थे। सरकारी पदाधिकारी का वेश धारण कर नटवर लाल ने विदेशियों को ये सभी स्मारक बेचे थे। इनकी ठगी पर मिस्टर नटवरलाल फिल्म बन चुकी है, जिसमें अमिताभ बच्चन ने इनका किरदार निभाया है। यह भी कहा जाता है कि उन्होंने कई बड़े-बड़े

उद्योगपतियों को भी धोखा दिए थे। वे एक बड़ी रकम नगद उनसे यह कहकर ले लेते थे कि वे एक सामाजिक कार्यकर्ता है। उन्होंने कई दुकानदारों को लाखों रुपये का चूना लगाए थे। दुकानदारों से बड़ी मात्रा में सामान लेकर उन्हें नक़ली चेक और डिमांड ड्राफ्ट द्वारा भुगतान करते थे।

दिल्ली का कनॉट प्लेस, सुरेंद्र शर्मा की घड़ी की दुकान थी। एक दिन सफेद कमीज और पेंट पहने एक बूढ़ा आदमी घड़ी की दुकान में गया और अपना परिचय तत्कालीन वित्तमंत्री माननीय नारायण दत्त तिवारी का पर्सनल स्टॉप डी. एन. तिवारी के रूप में दिया तथा दुकानदार से कहा कि प्रधानमंत्री राजीव गांधी के दिन अच्छे नहीं चल रहे हैं, इसलिए उन्होंने पार्टी के सभी वरिष्ठ लोगों को समर्थन के लिए दिल्ली बुलाया है और इस बैठक में शामिल होने वाले सभी लोगों को वे घड़ी भेंट करना चाहते हैं। जिसके लिए आप की दुकान से घड़ी चाहिए। दुकानदार को पहले तो उस आदमी की बातों पर शक हुआ लेकिन एक साथ इतनी घड़ियों को बेचने के लालच से खुद को रोक नहीं पाया। अगले दिन वही बूढ़ा आदमी घड़ी लेने दुकान पहुंचा। दुकानदार को घड़ी पैक करने की बात कह एक स्टाफ को अपने साथ नार्थ ब्लॉक (नार्थ ब्लाक वह जगह है जहां प्रधानमंत्री से लेकर बड़े-बड़े पदाधिकारियों का कार्यालय स्थित है) ले गया। वहां उसने स्टाफ को भुगतान के तौर पर 32829/ रुपये का बैंक ड्राफ्ट दे दिया। दो दिन बाद जब दुकानदार ने ड्राफ्ट जमा किया तो बैंक वालों ने बताया कि जमा किया गया बैंक ड्राफ्ट फर्जी है। तब दुकानदार को समझ आया कि वह बूढ़ा आदमी और कोई नहीं बल्कि नटवर लाल था। इसके बाद वित्त मंत्री बी. पी. सिंह तो कभी वाराणसी के जिला जज के नाम तो कभी उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के नाम पर नटवर लाल अलग-अलग शहर में दुकानदारों को ठगते रहे।

जाल-साजी के एक मामले में लखनऊ के जेल में डेढ़ वर्ष तक कैद रहे । उस दरम्यान नटवर लाल की पत्नी आठ पत्र लगातार भेजती रही, जिसमें घर गृहस्ती की दुर्दशा और माली हालात का जिक्र होता था। उन पत्रों के माध्यम से पत्नी घर की दयनीय स्थिति से अवगत कराते हुए लिखी थी कि पैसे के अभाव में खेती भी नहीं हो पा रही है। जेलर ने नटवर लाल से कहा कि तुम्हारी पत्नी लगातार आठ पत्र भेज चुकी, लेकिन तुम एक भी पत्र का जवाब नहीं दिए, आखिर क्यों ? तुम्हें अपनी पत्नी के पत्रों का जवाब देना चाहिए। दरअसल जेल के अंदर आने जाने वाले पत्रों की जांच होती है। जिला इसी बहाने नटवर लाल का राज जाना चाहता था। जेलर के कहने पर नटवर लाल ने अपनी पत्नी को पत्र लिखें, जिसमें लिखे की गोयडा खेत (गाँव के समीप) मे एक घड़ा छुपा रखे हैं, जिसमें महंगे आभूषण तथा सोना के सिक्के हैं, उसे निकाल कर काम चलाना। इसके बाद जेलर के आदेशानुसार सिवान जिला की पुलिस नटवर लाल के गाँव रूईया बांगरा के समीप खेत को कुदाल से कोड़कर आभूषण से भरा घड़ा खोजते रहे, लेकिन घड़ा नहीं मिला। थक हार कर पुलिस वापस लौट गई। तब नटवर लाल ने अपनी पत्नी को पुनः पत्र लिखे की 'जेल से तुम्हारी इतना ही मदद कर सकता हूं, अब खेत की बुवाई करा लेना'। जब जेलर पत्र को पढ़ा तो उसके पैर के नीचे की जमीन खिसक गई।

नटवर लाल को नौ बार गिरफ्तार किया गया था, जिसमें पहली दफा जमानत पर छूटे थे, बाकी आठ बार बिना बेल- अदालती कार्रवाई के जेल से फरार हो गए थे। उन्हें जालसाजी के 14 मामलों के लिए दोषी

ठहराया गया था जबकि उनके खिलाफ 150 से अधिक मुकदमे दर्ज थे, जिसमें सभी कोर्टों ने कुल मुकदमों में 113 वर्ष की सजा सुनाए थे लेकिन नटवर लाल मुश्किल से 20 साल जेल में बिताए। आखरी बार जब उन्हें 1996 में गिरफ्तार किया गया था तो उस समय उनकी उम्र 84 साल थी, लेकिन वे पुलिस को चकमा देने में फिर कामयाब हो गए। घटना यह है कि कानपुर की जेल में नटवर लाल काफी दिनों से निरंतर बीमार रहने लगे, चलने फिरने में इतनी दिक्कत होने लगी कि अपने नित्य क्रिया कर्म के लिए एक सहयोगी की जरूरत पड़ गई। तब जेल प्रशासन ने बेहतर इलाज के लिए दिल्ली भेजने का निर्णय लिया। पुलिस के दो जवान और एक हवलदार नटवर लाल को लेकर लखनऊ एक्सप्रेस से पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन पर पहुंचे। स्टेशन पर खासी भीड़ थी। पहरेदार मौजूद थे और नटवर लाल बेंच पर बैठे हांफ रहे थे, उसने सिपाही से कहा कि 'बेटा बाहर से दवाई की गोली ला दो, मेरे पास पैसे नहीं है लेकिन जब रिश्तेदार मिलने आएंगे तो दे दूंगा'। अब बेचारे सिपाही को क्या मालूम था कि परिवार और रिश्तेदार उनको पसंद नहीं करते हैं। पत्नी की बहुत पहले मौत हो गई थी और उनकी एकलौती बेटी अपने पति के साथ रांची में बस गई है। सिपाही दवाई लेने बाहर चला गया, आखिर दो पहरेदार मौजूद थे। इनमें से एक को नटवर लाल ने पानी लेने के लिए भेज दिए। बच गए अकेले हवलदार तो उनसे नटवर लाल ने कहा कि ' भैया, तुम वर्दी में हो और मुझे जोर से पेशाब लगी है। तुम रस्सी पकड़े रहोगे तो मुझे जल्दी अंदर जाने देंगे, क्योंकि मुझसे खड़ा नहीं हुआ जा रहा है। हवलदार ने नटवर लाल को बाथरूम के पास ले जाकर के रस्सी पकड़ कर खड़ा हो गया। नटवर लाल पेशाब करने के लिए दीवार पकड़ कर अंदर गए और उस भीड़ भाड़ में नटवर लाल ने कब हाथ से राशि निकाली, कब भीड़ में शामिल होकर गायब हो गए, क्या किसी को पता नहीं। तीनों पुलिस वाले निलंबित हुए और कहते हैं कि नटवर लाल साठवीं बार फरार हो गए। इसके बाद 24 जून 1996 को पुलिस द्वारा बिहार के दरभंगा रेलवे स्टेशन पर देखे गए थे। पुलिस विभाग में थानेदार ने जो सिपाही के जमाने से नटवर लाल को जानता था, उसने पहचान लिया। नटवर लाल ने भी देख लिया था कि उसे पहचान लिया गया है। सिपाही अपने साथियों को लेने थाना के भीतर गया तब तक नटवर लाल गायब थे। यह बात अलग है कि पास खड़ी मालगाड़ी के डिब्बे से नटवर लाल के उतारे हुए कपड़े मिले और गार्ड की यूनिफार्म गायब थी।

सन 2009 के नवंबर में नटवर लाल के वकील द्वारा अदालत में यह कहते हुए अर्जी डाली गई कि नटवर लाल की मृत्यु 25 जुलाई 2009 को हो चुकी है, इसलिए उनके खिलाफ लंबित केस खारिज कर दिए जाए। नटवर लाल के छोटे भाई गंगा प्रसाद श्रीवास्तव, जो गोपालगंज जिले में रहते हैं, उनका भी कहना है कि नटवर लाल का अंतिम संस्कार उनकी बेटी एवं दामाद द्वारा रांची में कर दिया गया है। परंतु आज तक इसका कोई पुख्ता सबूत या सरकारी दस्तावेज उपलब्ध नहीं है। इसका आशय यह है कि चलाकी और ठगी को ललितकला बना देने वाला यह शख्स अब इस दुनिया में नहीं है। नटवरलाल के बारे में एक बार डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल आफ पुलिस (सीआईडी) एस. के. सक्सेना ने कहा था- "ऐसा लगता है कि नटवर लाल राष्ट्रीय एकता के किसी मिशन पर है, इसलिए वह हर एक स्टेट में कुछ ना कुछ हरकत जरूर करता है, और उसको पकड़ने के लिए सभी राज्य एक साथ मिलकर काम करते हैं।"

नटवरलाल को अपने किए पर कोई पछतावा नहीं था। वह अपने आप को रॉबिन हुड मानते थे। कहते थे कि मैं अमीरों से लूट कर गरीबों को देता हूं। नटवरलाल को अपने किए पर इतना विश्वास था कि उसने भारत सरकार से यह भी प्रस्ताव रखा था कि यदि भारत सरकार उसे मौका दे तो वह भारत के ऊपर से सभी विदेशी कर्ज उतार सकते हैं। नटवरलाल की खास बात और थी कि उसे बहूरुपियों का बादशाह भी कहा जाता है। वे भेष बदलने में माहिर थे, मतलब जैसी जाल-साजी वैसा रूप, ताकि किसी को शक ना हो। नटवर लाल को चार्ल्स शोभराज से भी बड़ा जाल-साज माना जाता है लेकिन नटवर लाल ने कभी भी किसी हथियार का इस्तेमाल नहीं किए, यहां तक कि उसने किसी को एक थप्पड़ भी नहीं मारे। उन्होंने अपराध को एक कला की तरह इस्तेमाल किए। वह हमेशा नाकटकीय ढंग से ठगी करते, नाटकीय ढंग से पकड़े जाते थे और बेहद नाटकीय ढंग से वे जेल से फरार भी हो जाते थे। नटवर लाल का दावा है कि उसने कभी किसी को हथियार के बल पर ना लुटा, ना चोरी किया। नटवर लाल के करनामें को भले ही जुर्माना गया, लेकिन में समाज सेवा मानते थे।

रुईया बांगरा के लोग अपना सौभाग्य मानते हैं कि नटवरलाल जैसा शख्स का जन्म उनके गाँव में हुआ है। इनके गाँव के लोगों का मानना है कि नटवर लाल के अंदर दिव्य प्रतिभा थी । यदि उनकी प्रतिभा का सही इस्तेमाल किया गया होता तो वे देश व समाज के लिए बड़ा कार्य किए होते। नटवर लाल जब अंतिम बार अपने पैतृक गाँव रूईया बांगरा तीन गाड़ियों की काफिला संग आए थे तो पूरे गाँव के लोगों को भोजन कराए थे तथा सभी को ₹100 रुपये भेंट स्वरूप प्रदान किए थे।

नटवर लाल के बुद्धि और विवेक से परिपूर्ण विराट व्यक्तित्व और जाल-साजी के वृहद कृतित्व की चालाकी और चतुराई को कोटि-कोटि अभिनंदन है।

संदर्भ_

1. सिवान गजेटियर, (प्रेस में)- सह संपादक : डॉ मन्नू राय
2. साक्षात्कार : श्रीमती किरण कुमारी, शिक्षिका (मिथिलेश कुमार श्रीवास्तव उर्फ नटवर लाल की भतीजी)
3. साक्षात्कार: सुधीर कुमार शर्मा, शिक्षक नेता (जीरादेई निवासी)

महादेवी वर्मा के काव्य की भाषा एवं प्रतीक

डॉ० मंजु लाल*

Manjulal181@gmail.com

महादेवी के गीतों में जहाँ संगीतात्मकता व शास्त्रीय ज्ञान की प्रचुरता है वहीं अलंकार शास्त्र की अच्छी परख भी है। फलतः विशेषणों के चयन में जहाँ उनकी सूक्ष्म अन्त दृष्टि रम गयी है वहाँ अनुप्रास अलंकार की सृष्टि स्वतः हो गयी है। ऐसे स्थलों पर महादेवी का शब्दशोधान उनके अनंत शब्द भंडार को पारिपुष्ट करता है। 'मधुर मधुर मेरे दीपक जल' शीर्षक कविता में उनकी अनुप्रास विशेषण योजना के दर्शन होते हैं। जैसे :-

1. मधुर-मधुर मेरे दीपक जल 2. पुलक-पुलक मेरे दीपक जल 3. सिहर-सिहर मेरे दीपक जल
4. विहंस-विहंस मेरे दीपक जल 5. बिखर-बिखर मेरे दीपक जल 6. सहज-सहज मेरे दीपक जल
7. सजल-सजल मेरे दीपक जल 8. सरल-सरल मेरे दीपक जल 9. मंदिर-मंदिर मेरे दीपक जल

संदर्भ : महादेवी वर्मा, मधुर मधुर मेरे दीपक जल, छंद संख्या 1,2,3,4,5,6,7,8

वास्तव में महादेवी के विशेषण का साहित्यक सौन्दर्य उनके कार्य-विषय की विविधता एवं शब्द-विन्यास शैली पर आधारित है। उनकी शब्द मर्यादा, शब्द संयम, शब्द वैभव आदि उनके साहित्यिक सौन्दर्य का अपूर्व स्थान दिलाते हैं। जैसे :-

1. आँसू से लिख-लिख जाता है :

अस्थिर है संसार।

2. छलकती पलकों से कहती है :

कितना मादक है संसार।

3. मर्मर रोदन कहता है

कितना निष्ठुर है संसार

4. बीते युग पर बना हुआ है

अब तक मतवाला संसार!

* **असिस्टेंट प्रोफेसर, स्नात्तकोत्तर हिन्दी विभाग, डोरण्डा महाविद्यालय, राँची**

5. गर जाती है करूण स्वरों में

कितना पागल है संसार।

(महादेवी वर्मा, नीरजा पृ. 27)

महादेवी जी ने मधु, मधुमय, मृदूल, तथा कोमल शब्दों का प्रयोग विशेषणों के रूप में अनेक स्थानों पर किया है :-

1. बता दो मधु मंदिरा का मोल।
2. मुझे मधुमय पीड़ा में बोर।
3. रजन करो की मृदूल तुलिसा।
4. विधुर हृदय के मृदू कम्पन सा।
5. मुल प्रण्दय की मधुर व्यथा से
6. मधुर चाँदनी हो जाती है।
7. तुहिन कणों पर मृदू कम्पन से रोज विछादे गान।
8. करते ही आलोक जहाँ बुझ बुझकर कोमल प्राण।
9. वहीं कोमल कमनीय प्रकाश।
10. मधुर जीवन था, मुग्ध वसन्त।
11. मेरे मधुमय पीड़ा को

(महादेवी वर्मा : विविध कविताएँ)

महादेवी के हदय से निकले गीतों का आलम्वन ब्रह्म है जो स्वयं निर्विकार रहने पर भी सभी परिवर्तनों की आश्रय भूमि है। महादेवी छायावादी के सभी विशेषताओं से ओतप्रोत कविताओं की रचना करती हैं। महादेवी प्रकृति के कण-कण को सजीव मानती है प्रकृति उनकी चिरसंगिनी है। उसके साथ उनका तादात्म्य भाव है। 'प्रिय सांध्य गगन मेरा जीवन में बनी मधुमास आली'' मैं नीर भरी दुःख की बदली, विरह का जलजात जीवन, आदि अनेक गीतात्मक अभिव्यक्तियाँ प्रमाण है कि महादेवी का काव्य व्यक्तिगत प्रकृति में घुलमिल गया है।

गीतों की परंपरा तो वेदों से स्थापित की जा सकती है परंतु हिन्दी भाषा में पहला नाम कवि विद्यापति जी का लिया जा सकता है। विद्यापति के उपरांत कबीर ने अपनी मस्ती से सबको सरोबार किया, सूर ने न जाने कितनी राग रागनियों को सजग किया उनके समकालीन तुलसीदास ने 'गीतावली' 'विनयपत्रिका' 'रामचरितमानस' के द्वारा हिन्दी साहित्य में गीतों का धारा बहा दी। मीरा ने अपने प्रेम की पीर का गाया तो सबको रूला डाला। गीतिकाव्य को आगे बढ़ाया छायावादी कवियों ने।

"नीरजा की सृष्टि के साथ गीतिकाव्य की परम्परा में महादेवी अपनी पूर्णता लेकर सामने आई।

"गूंजती क्यों प्राण वंशी?

शून्यता तेरे हृदय की

आज किसी साँस भरती?

प्यास को वरदान करती

स्वर लहरियों में बिखरती,

आज मूक अभाव किसने कर दिया लयवान वंशी?

अमिट मसि के अंक से

सूने कभी थे छिद्र तेरे

पुलक के अब है बसेरे

मुखर रंगों के चितेरे

आज ली इनकी व्याथा किन उगलियों ने जान वंशी?

गुंजती क्यों प्राण वंशी?

(दीपशिखा से)

मत्रिक छन्दों के अतिरिक्त अनेक लोक गीतों को प्रतिष्ठा भी महादेवी ने बढ़ाई है।

महादेवी जी के काव्यों में जो प्रतीक है वे भी इस प्रकार है - जैसे सागर संसार के लिए, तरी जीवन के लिए, जलचर वृन्द के लिए, तम अज्ञान के लिए प्रकाश ज्ञान के लिए, वीणा के तार हृदय के भाव के लिए गायक साधक के लिए। आत्मा को दीपक और शल्य को मोहमूलक सांसारिकत आकर्षण मानने वाले इस गीत को ही ले --

शलम में शापमय वर हूँ।

किसी का दीप निष्ठुर हूँ।

शून्य मेरा जन्म था,

अवसान है मुझको सवेरा

प्राण आकुल के लिए

संगी मिला केवल अंधेरा,

मिलन का मत नाम ले मैं विरह में चिर हूँ।

(दीपशिखा)

महादेवी जी ने हृदय संबंधी प्रतीक लिये हैं। वे ग्रीष्म का प्रयोग रोष के लिए वर्षा का करुणा के लिए शिशिर का जाड़ा के लिए, पतझड़ का दुःख के लिए और वसन्त का आनन्द के लिए प्रयोग करती है। भाव के लिए उन्होंने कहीं 'वीणा के तार' लिखा है कहीं कलियों का अचूछवास और कहीं 'उज्जवल तारे' आँसुओं के लिए 'तुहिनकण' मोती, मकरन्द आदि प्रतीक लिए है।

ढुलक जो पड़ी ओस की बूंद

विश्व के शतदल पर अज्ञात

तरल मोती सा दे मृदुगात,

नाम से जीवन से अनजान

कहो क्या परिचय दे नादान

(रश्मि)

अलकारों के क्षेत्र में महादेवीजी ने बड़ी सुरुचि का परिचय दिया है। काव्य में अलंकार का प्रयोग भावों को रमणीयता तथा तीव्रता करने के लिए होता है। समासोक्ति से अधिक महादेवी जी ने रूपकों को अपनाया है।

चुभते ही तेरा अरूण वान
X X X X X X
सजल है कितना सवेरा
राख से अंगार तारे झर चले है

X X X X X X

निम्नांकित सांगरूपक में कितना मार्मिक उद्गार व्यक्त है देखे -

तरल मोती से नयन भरे।
मानस से ले उठे स्नेह –धन
कसक विधु, पुलकों के हिमकण
सुधि स्वाती की छाँह

पलक की सीपी में उतरे!

सुबोध लघु शब्दावली, ध्वनी-गुज लयात्मकता छंद बद्धता और मुक्त संगीत अदभुत समॉ बांधे है। महादेवी की कविताओं में शब्द अत्यंत ही सरस, सुन्दर और सुकोमल है। नीचे की पंक्तियों में 'उपमा कम और अपहुति तीनों अलंकार एक साथ आए हैं -

एकप्रिय दृग-श्यामता-सा

दूसरा स्मित को विभा-सा,

यह नहीं निश-दिन इन्हें

प्रिय का मधुर उपहार रे कह!

नीरजा में एक स्थान पर अनायास आ गये यमक को देखिए -

जगती-जगती की मूक प्यास!

महादेवी ने अनेक स्थानों पर भावपूर्ण विशेषणों के प्रयोग से विशेष्य में अपूर्व चमत्कार की सृष्टि की है। कल्पना के आवेग में भावों को अधिक संवदेनशील मृत और सहजग्राह्य बनाने के लिए उन्होंने निठुर काल, मतवाली वीणा, प्यासी आँखे, मूक वेदना, सहज शेफाली शीतल चुम्बन, अलसित रजनी, तन्द्रिल पल, मृदुल दर्पण, कोमल व्यथा जैसे विशेषण का प्रयोग किया है। यहाँ यह दृष्टव्य है कि कवियित्री होने के कारण महादेवी के अधिकांश विशेषण नारी सुलभ है।

"भाषा की कोमलता छायावाद का पहला वादा था" (डॉ. नामवार सिंह, छायावाद पृ. 104) और महादेवी ने इसे पूरा किया।

महादेवी न भावभिव्यक्ति के लिए संस्कृत की तत्सम शब्दावली तथा उनक तद्भव रूपों की सहायता ली।

छायावादी काव्य के प्रायः सभी कवि भाषा के साहित्यक संरक्षक थे। अतः तत्सम के प्रति उनका झुकाव सहज स्वभाविक था। महादेवी जी के कविताओं में तत्सम शब्दों में अनेक उदाहरण है, जिनमें से कुछ - नक्षत्र, उदगार, उन्मीलन, अकिचन, तुषित, मन्द्र, निरन्तरंग जैसे तत्सम शब्द (यामा की पृष्ठ संख्या 18, 21, 43, 95) अशन, अखिल, वानीर, यूथी, रशना आदि शब्द अपेक्षाकृत कठिन है। काव्य इसने क्लिष्ट हो गया है।

तद्भव शब्दों का प्रयोग महादेवी ने इसी क्लिष्टता से बचने के लिए किया है। जैसे आँसू, मोल, पाट, बीन, सूना, पात, उजाला, धरती आदि (यामा पृष्ठ संख्या 14, 21, 71, 120,186, 193, 231) लोकगीतों से रचनाओं की निकटता के लिए इन शब्दों का प्रयोग महादेवी ने किया है। लोकगीतों का रंग देने के लिए देशज शब्द भी लिये गये है यथा- अँकवाऊँ, लिपना, विरानी, विछलना, रिसना भेटना आदि स्थानीय शब्द / विदेशी

शब्दों में उर्दू अथवा फारसी के शब्दों का प्रयोग महादेवी ने किया है। जैसे- साकी, अरमान, बेहोश, परदा आदि।

महादेवी की काव्यभाषा की एक अन्य विशेषता है कि महादेवी ने कुछ शब्दों का बार-बार प्रयोग किया है। जो उनके शब्दमोह को दर्शाते हैं। जैसे -

क) नव –नव धन, नव उत्पन्न नव कम्पन,

वह अशोक, नव किसलय, नव प्रभात

ख) मधु-मध पराग, मघु आसव मधु प्रभात,

मधु-दिन, मधु राग।

ग) मधुर-मधुर क्रय, मधुर मिलन, मधुर वेदना

मधुर आवास, मधुर राग, मधुर गीत

चिताकर्षक काव्य में रूप चित्रण की अतिशयता पायी जाती है। दिनकर जी की मान्यता है कि "चित्रमाया ही कविता को विज्ञान से अलग करती है। दार्शनिक और इतिहासकार जिस ज्ञान को सूचना के भंडार में जमा करते हैं। कवि उसी ज्ञान का चित्र बनाकर लोगों के आँखों के सामने तैरा देता है - जिस कविता में जितने अधिक चित्र उठते हैं उसकी सुन्दरता भी उतनी ही अधिक बढ़ जाती है।

संदर्भ :-

1. सिंह, नामवार. (1968). *छायावाद*. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन.
2. वर्मा, महादेवी. (1960). *नीहार*. प्रयाग : साहित्य भवन लि.
3. वर्मा, महादेवी. (1934). *नीरजा*. प्रयाग : इंडियन प्रेस लिमिटेड.
4. वर्मा, महादेवी. (1932). *रश्मि*. प्रयाग : साहित्य भवन लि.
5. पाण्डेय, श्री गंगा प्रसाद. (1950). *छायावाद और रहस्यवाद*. इलाहाबाद : राम लाल प्रकाशन.
6. शर्मा, डॉ. मनोरमा. (1976). *महादेवी के हाथ में लालित्य विधान* . कानपुर : साहित्य संस्थान.
7. मदान, डॉ. इन्द्रनाथ & प्रकाश, ओम, (संपा.). (1965). *महादेवी*. दिल्ली : राधा कृष्ण प्रकाशन.
8. पाण्डेय, गंगा प्रसाद. (संवत 1969). *महीयसी महादेवी*. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन.
9. गुप्त, रमेश चन्द्र & शर्मा, प्रेमचन्द. (1968). *महादेवी का काव्य*. दिल्ली : प्रेम प्रकाशन मंदिर.

गांधी विचार का प्रकाश

प्रो. (डॉ.) नृपेन्द प्रसाद मोदी*

isgsnpmodi@gmail.com

आजादी के अमृत महोत्सव वर्ष में और गांधी जयंती के 153 वें वर्षगांठ में गांधी पर राष्ट्र का ही नहीं अपितु अंतरराष्ट्रीय जगत का ध्यान जाना स्वाभाविक है, क्योंकि सात अरब से अधिक वैश्विक आबादी कोरोना 19 के कोप से कुपित रहा। शायद यह पहली बार देखने में आया कि सौ वर्ष की अवधि में विश्व इतना भयावह स्थिति में गुजरा। कोरोना ने विकसित एवं विकासशील राष्ट्र के मध्य खाई को पाट दिया, विभेद मिट-सा गया था और गांधी की जीवन शैली बहुत ही मददगार सिद्ध हुई, जिसमें शारीरिक श्रम की प्रधानता रहती है। टाल्सटॉय के कायिक श्रम (ब्रेड लेवर) जिसे गांधी प्रारंभ से ही अपनाया था। वे जीवन भर शारीरिक श्रम एवं स्वच्छता के न सिर्फ पक्षधर रहे अपितु वे जीवन पर्यन्त श्रमाधारित कार्यों से जुड़े रहे। अतएव उनके लोकप्रिय फोटो में से 'चर्खा चलाते हुए फोटो' की अपनी एक वैश्विक पहचान है। ऐसा पाया गया कि भारत में खासकर जिस राज्य के निवासी श्रमाधारित अधिक रहा, वह प्रान्त कोरोना से अपेक्षाकृत सुरक्षित रहा। यही स्थिति कुछ हद तक वैश्विक स्तर पर भी रहा।

लगभग ग्यारह दसक पूर्व जब गांधी जी 'किलडोनल कैसल' पानी वाले जहाज पर इंग्लैंड से लौटते समय हिन्द स्वराज की रचना 'पाठक और संपादक' की शैली में करते हैं और सूर्यास्त न होने वाले ब्रिटिश हुकुमत एवं पश्चिमी सभ्यता को अहिंसक चुनौती देते हैं तो शायद यह कभी नहीं सोचा गया होगा कि गांधीजी की छोटी सी किताब विशाल जनसंख्या का ध्यान इस तरह खींचेगी कि गांधी निहत्था पैगम्बर बनकर बाद के वर्षों में विश्व में छा जायेंगे। गांधी का अविर्भाव मानव जाति के लिए एक अभूतपूर्व घटना थी। गांधी न अवतारी पुरुष थे, न ही देवता। वे हमारी तरह ही सामान्य प्राणी थे, उनकी जीवन यात्रा अति साधारण से असाधारण होने का नाम है, अपनी असाधारणता से जितनी ऊँचाई तक बापू पहुँचे, वह सचमुच विसम्यकारी, अकल्पित तथा वर्णनातीत है। अतएव एक अमेरिकी फादर का यह कहना कि विश्व में ईसा मशीह के बाद गांधी ही द्वितीय महामानव हैं, न्यायसंगत एवं यथार्थोनुकूल लगता है। 2 अक्टूबर 2007 से संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा गांधीजी के जन्म दिन को 'विश्व अहिंसा दिवस' के रूप में मनाने का निर्णय लिया जाना इस बात का द्योतक है कि विश्व में अहिंसा, शांति एवं भ्रातृत्व के लिए वैश्विक गांधी मार्ग प्रभावी है। गांधीवादी लेखक जैनेन्द्र कुमार का यह कहना कि सत्तापति देश में रहता है और काल में खो जाता है। मनीषी काल में जीता है

* **प्रोफेसर, गांधी एवं शांति अध्ययन विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

और देश में शून्य बना रहता है। गांधी न तो सत्ताधीश थे, न उस अर्थ में ऋषि या संत, इसलिए कारण नहीं बचता है कि देश या काल के किसी आयाम में वे खो जाये या निरर्थक बन जाए।

स्वतंत्रता प्राप्ति बाद गांधीजी देश के पुनर्निर्माण में महत्वपूर्ण काम करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने 29 जनवरी 1948 में 'आखिरी वसीयतनामा' में स्पष्ट उल्लेख किया था - 'हिन्दुस्तान आजाद हुआ है, लेकिन अभी भी सिर्फ राजनीतिक आजादी मिली है। शहरों और कस्बों से भिन्न उसके लाखों गांवों की दृष्टि से सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी हासिल करना अभी बाकी है।' वे कांग्रेस को विसर्जन कर और उसे 'लोक सेवक संघ' का निर्माण करना चाहते थे – सत्ता की जगह सेवा करने के लिए। एक राजनीतिक पार्टी लोक सभा एवं विधान सभाओं में प्रथम आम चुनाव से लगातार लगभग चार दसकों तक गांधी-धुन को गुंजायमान कर सत्तासीन रही, किंतु गांधी-मार्ग को दोयम दर्जे तरह व्यवहार करते रहे, जबकि मानव जीवन का चरम उद्देश्य स्वयं अपना परिष्कार करना है। 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' एवं वसुद्यैव कुटुम्बकम' का मार्ग गांधी का उसे लोगों ने सहज ही त्याग दिया। गांधी बहुत पहले मानव समाज के वर्तमान प्रारूप का पूर्वानुमान कर लिया था तथा मानव सभ्यता के विकास के लिए में उन्होंने 'यंग इंडिया' के अंक में 1925 में सामाजिक दोषों से दूर रखने का पैमाना दिया था वे सात दोष क्रमश: इस प्रकार है – 1. सिद्धान्तविहीन राजनीतिक 2. विवेकहीन सुख 3. श्रम-हीन सम्पत्ति 4. नीतिहीन व्यापार 5. दयाहीन विज्ञान 6. चरित्रहीन ज्ञान 7. त्यागहीन पूजा। आज समस्त विश्व में नैतिक मूल्यों का विखरना चिंता का मूल विषय है। भारत में पिछले कई दसकों तक नीति विहीन राजनीति फलता-फूलता रहा, उसकी यह परिणति है कि वर्तमान में उस पर नियंत्रण के लिए प्रयत्न किया जा रहा है, परन्तु वह उतना फलीभूत नहीं हो पा रहा है, जितना होना चाहिए। फिर भी गांधी विचार का प्रकाश देश एवं दुनिया के लिए प्रकाश स्तम्भ का काम कर रही है क्योंकि वैश्विक स्तर पर प्रचलित व्यवस्था में से साम्यवाद सिमटता हुआ दिखाई पड़ रहा है तथा पूँजीवाद एक ऊंचाई जाकर ठहर-सा गया है, ऐसा लग रहा है।

वस्तुत: वैश्विक परिदृश्य में देखें तो लगता है कि गांधी के चिंतन का 'सात सामाजिक पाप' (Seven Social Sins) में एक सिद्धान्त विहीन राजीनति काफी फल-फूल रहा है, शेष अन्य सामाजिक पाप में भी गति है लेकिन राजीनति की गति सर्वाधिक है। गांधी ने प्रत्येक चीज को एक आयाम में तब्दील कर दिया अर्थात नैतिक चीज एवं इसके साथ-साथ ठीक एक बिन्दु में अर्थात सत्य की तलाश में तब्दील कर दिया। वह केवल इस परम सन्दर्भ बिन्दु से ही राजनीति या समाज के भीतर की अपनी जिम्मेवारी को प्राप्त करते हैं। वह जीवन में जो नैतिक स्टैंड लेते हैं, उनके लिए राजनीतिक कर्तव्य उसी की एक अपरिहार्य संजात है। इस सम्बन्ध में वह बाद की तारीख में जब अपने विचार को पूरी तरह गढ़ चुके थे, निम्नलिखित पक्तियाँ लिखते हैं :[1]

"सत्य के शाश्वत और सर्वव्यापी भाव को आमने-सामने देखने के लिए व्यक्ति को सृष्टि की सबसे तुच्छ चीज से अपने जैसा प्रेम करने के काबिल होना जरूरी है। और वह मनुष्य जो इसकी आकांक्षा करता है, वह जीवन के किसी क्षेत्र से बाहर रहना बर्दाश्त नहीं कर सकता। यही कारण है कि सत्य के प्रति मेरी अनुरक्ति

मुझे राजनीति के क्षेत्र में खींच लायी है तथा मैं पूरी विनम्रता से बेझिझक कह सकता हूँ कि वे जो यह कहते हैं कि धर्म का राजनीति से कोई लेना देना नहीं है, वस्तुत: वे धर्म का अभिप्राय नहीं जानते हैं।"[2]

गांधी अपनी आत्मकथा के अन्त में पूर्णाहुति में लिखते हैं कि मेरा जीवन इतना सार्वजनिक हो गया है कि शायद ही कोई चीज ऐसी हो, जिसे जनता जानती न हो। बिना आत्मशुद्धि के जीवन मात्र के ऐक्य सध ही नहीं सकता। आत्मशुद्धि के बिना अहिंसा-धर्म का पालन सर्वथा असंभव है। अशुद्ध आत्मा परमात्मा के दर्शन करने में असमर्थ है। अतएव जीवन-मार्ग के सभी क्षेत्रों में शुद्धि की आवश्यकता है। यह शुद्धि साध्य है, क्योंकि व्यक्ति और समष्टि के बीच ऐसा निकट का संबंध है कि एक की शुद्धि साध्य है; क्योंकि व्यक्ति और समष्टि के बीच ऐसा निकट का संबंध है कि एक की शुद्धि अनेकों की शुद्धि के बराबर हो जाती है और व्यक्तिगत प्रयत्न करने की शक्ति तो सत्य-नारायण ने सबको जन्म से ही दी है।[3]

मानव जीवन में सुचिता का होना आवश्यक है, उसके व्यापिकरण से जगत का कल्याण संभव है, सरल बात तो कदापि नहीं है साकारात्मक अवलंबन है। उन्होंने लिखा है कि मैं प्रतिक्षण यह अनुभव करता हूँ शुद्धि का मार्ग विकट है। शुद्ध बनने का अर्थ है - मन से और बचन से निर्विकार बनना, राग-द्वेषादि से रहित होना। इस निर्विकारता तक पहुँचे का प्रतिक्षण प्रयत्न करते हुए भी मैं नहीं पहुँच पाया हूँ इसलिए लोगों कि स्तुति मुझे झुलावे में नहीं डाल सकती। उल्टे, यह स्तुति प्राय: तीव्र वेदना पहुँचाती है। मन के विकारों को जीतना संसार को शुद्ध-युद्ध से जीतने की अपेक्षा मुझे अधिक कठिन मालूम होता है। हिन्दुस्तान आने के बाद भी मैं अपने भीतर छिपे हुए विकारों को देख सका हूँ, शर्मिन्दा हुआ हूँ, किन्तु हारा नहीं हूँ।[4]

सत्य के प्रयोग करते हुए मैंने आनंद लूटा है और आज भी लूट रहा हूँ। लेकिन मैं जानता हूँ कि अभी मुझे विकट मार्ग तय करना है। इसके लिए मुझे शून्यवत् बनना है। मनुष्य जब तक स्वेच्छा से अपने को सबसे नीचे नहीं रखता, तब एक उसे मुक्ति नहीं मिलती। अहिंसा नम्रता की परकाष्ठा है और यह अनुभव-सिद्ध बात है कि इस नम्रता के बिना मुक्ति कभी नहीं मिलती। ऐसी नम्रता के लिए प्रार्थना करते हुए उसके लिए संसार की सहायता की याचना करते हुए इस समय तो मैं इन प्रकरणों को बन्द करता हूँ।[5]

सशस्त्र पैगम्बरों के बारे में मैकियावेली के दावे के मद्दे नजर गांधी में सफल होने की कितनी सम्भावनाएं हैं? उपर्युक्त् विवेचन के आलोक में विचार करें तो मानव जाति की उतरजीविता के लिए गांधी ही एकमात्र आशा की किरण दिखते हैं। प्रजातियों में उतरजीविता की सहज प्रवृति होती है, इसलिए एक स्पष्ट सम्भावना बनती है कि मनुष्य की प्रतिकूलता और संगठित मानवीय समूहों द्वारा सृजित क्रूरता के बावजूद अन्तत: मनुष्य गांधी के बताये अहिंसा और शांति के मार्ग को अपना लेगा यह एक सीमित स्वीकार हो सकता है, लेकिन ऐसी सीमित सफलता सभी नैतिक उपदेशों का प्रारब्ध है। कुछ नये मौलिक नियम बना लिये जाएंगे और शायद इसके बाद लोग हमेशा की तरह जीना शुरू कर देंगे। लेकिन, इससे एक शांतिप्रिय और स्वस्थ दुनिया का सृजन होगा। यदि ऐसा होता है तो गांधी के मार्ग को पूरी तरह से न्याय संगत ही ठहराया जाएगा।[6]

अतएव विश्व मानवता के लिए एक ही मार्ग बचता है और वह है गांधी-मार्ग, जो वाद नहीं होकर विचार है और मानव कल्याणार्थ है।

संदर्भ :-

1. सिन्हा, सच्चिदानंद. (2014). *निहत्था पैगम्बर*. नई दिल्ली : गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति. पृ. 70
2. सिन्हा, सच्चिदानंद. (2014). *निहत्था पैगम्बर*. नई दिल्ली : गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति. पृ. 71
3. गांधी, मो. क. (1957). *सत्य के प्रयोग*. अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन मंदिर. पृ. 453
4. गांधी, मो. क. (1957). *सत्य के प्रयोग*. अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन मंदिर. पृ. 453-54
5. गांधी, मो. क. (1957). *सत्य के प्रयोग*. अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन मंदिर. पृ. 454
6. सिन्हा, सच्चिदानंद. (2014). *निहत्था पैगम्बर*. नई दिल्ली : गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति. पृ. 156

महात्मा गांधी जी के स्वच्छता संबंधित विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

रवि कुमार* **इमरान शाह†**

ravikumargupta184@gmail.com **shahi6368@gmail.com**

सारांश

महात्मा गांधी ने कहा था - भारत गांवो का देश हैं। गांधी का यह कथन उद्घोष करता है, कि भारत की पहचान, भारत का अस्तित्व व भारत का मूल गांवो से ही है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विभिन्न सरकारी योजनाओं के द्वारा भारत के ग्रामीण इलाकों को सुदृढ़ बनाने के लिए तथा गांवो की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था को उद्देश्य परक बनाने के लिए कई योजनाओं का निर्माण किया गया। इन योजनाओं के द्वारा भारत के कृषक समुदायों को लाभ पहुंचाने के लिए और उनके जीवन को खुशहाल बनाने के लिए समय-समय पर परिवर्तन किए गए परंतु इन सब के उपरान्त भी कुछ ऐसी मौलिक समस्याएं यथावत बनी रही जो ग्रामीण समुदाय को एक स्वस्थ व समृद्ध समाज में रूपांतरित नहीं कर पायी। गांधी जी ने जिस भारत की कल्पना की थी उसमें स्वच्छता को एक विशेष स्थान दिया था। प्रस्तुत शोध पत्र में महात्मा गांधी जी के स्वच्छता संबंधित विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

प्रस्तावना

मोहन दास करमचंद गांधी का जन्म 2 अक्तूबर, 1869 को गुजरात प्रांत के सुदामापुरी, पोरबंदर में हुआ था। उनके बचपन का नाम मोनिया था। उनके दादा उत्तमचंद गांधी एवं उनके पिता करमचंद गांधी, पोरबंदर रियासत के दीवान थे, उनकी माँ का नाम पुतलीबाई था, गांधी जी अपने माता-पिता की चौथी संतान थे। मात्र 13 वर्ष की आयु में गांधी जी का विवाह कस्तूरबा कपाड़िया से कर दिया गया। गांधी की प्रारम्भिक शिक्षा की शुरुआत राजकोट में हुई और बाद में वे वकालत की पढ़ाई करने के लिये लंदन चले गए और 10 जून 1891 को गांधी जी बैरिस्टर घोषित हुए।[1] लंदन में ही उनके एक दोस्त ने उन्हें भगवद् गीता से परिचित कराया और इसका प्रभाव गांधी जी की अन्य गतिविधियों पर स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। वकालत की पढ़ाई के बाद जब गांधी भारत वापस लौटे तो उन्हें माता जी के देहांत का समाचार मिला। बम्बई में गांधी डॉ. मेंहता के घर पर रुके जहां उनका परिचय रामचंद्र भाई से हुआ। कुछ समय राजकोट में बिताकर वकालत करने के लिए बम्बई गए। वहाँ उनको पहला मुकदमा मामी बाई का मिला और मेंहनताने के रूप में 30 रुपये मिले लेकिन मोहनदास वो मुकदमा लड़ नहीं पाए क्योंकि वह प्रथम बार कोर्ट में जिरह करने के लिए गए थे और जैसे ही खड़े हुए उनके पैर कापने लगे। वर्ष 1893 में दादा अब्दुल्ला ने गांधी को दक्षिण अफ्रीका में मुकदमा लड़ने के लिये आमंत्रित किया, जिसे गांधी ने स्वीकार कर लिया और गांधी दक्षिण अफ्रीका के लिये रवाना हो गए। प्रसिद्ध है कि गांधी जी के इस निर्णय ने उनके राजनीतिक जीवन को काफी प्रभावित किया।[2]

* **एम. फिल शोधर्थी, महात्मा गांधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, बिहार**

† **पी-एच. डी. शोधर्थी, महात्मा गांधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, बिहार**

स्वच्छता पर गांधी जी के विचार

दक्षिण अफ्रीका से वापसी के पश्चात गांधी जी एक वर्ष तक देश का भ्रमण किए और भारतीय जनता की दशा को समझा। तत्पश्चात उन्होंने मानवीय समस्या के प्रथम दृश्य को समझा कि स्वच्छता व सामाजिक एकता की सिख सर्वप्रथम यहाँ के जनसमूहो के लिए आवश्यक है। जानकारी का अभाव इसका एकमात्र वजह नहीं था बल्कि वह मानसिकता भी इसका एक प्रमुख कारण था। जो आम जनो के स्वास्थ्य ओर पर्यावरण पर प्रभाव हेतु इस परिस्थिति पर चिंतन करने से बचाव करती है। दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गांधी को ब्रिटिश अधिकारियों के इस कथन ने बड़ा ही झकझोर कर रख दिया 'की भारतीयो को साफ-सफाई में रहने की आदत नहीं' क्योंकि वे गंदगी और साफ-सफाई को महत्त्व ही नहीं देते हैं। गांधी की स्वच्छता का मुख्य आधार बिन्दु साफ-सफाई को माना गया हैं। इन्ही बातों को गांधी जी द्वारा अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ग्राम स्वराज में स्वच्छता के मूल तत्वो को जन जन तक लाभान्वित करने की सुनियोजित आधार विकसित करने का प्रयास किया गया है।[3] बापू ने स्वच्छता हेतु सर्वप्रथम व्यक्ति के मन व आत्मा को स्वच्छ करने को कहा। तभी तो पास-पड़ोस की स्वच्छता विस्तारित होकर राज्य स्तर तक अपनी पहुँच सुनिश्चित कर पाएँगी।

क्योंकि महात्मा गांधी ने ग्रामीण स्वच्छता को मुक्त समाज के रूप में बताया। इससे उत्कृष्ट दर्शन अन्य कोई नहीं हो सकता। उन्होंने कहा कि "सत्य और अहिंसा ही वह अकेला धर्म है जिसका मैं दावा करना चाहता हूं मैं किसी भी पारामानवीय शक्ति का दवा नहीं करता, ऐसी कोई शक्ति मुझमें नहीं है।" गांधीजी के दृष्टिकोण का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी था कि वे विचार और कर्म में कोई अंतर नहीं रखते थे।[4] अहिंसा दर्शन जोशीले भाषणों और लेखों के लिए ना होकर रोजमर्रा के जीवन के लिए था। इसके अलावा साधारण जनता के संघर्ष की क्षमता पर गांधीजी को अटूट भरोसा था उदाहरण के लिए 1915 में जब मद्रास में उनका स्वागत किया गया तो दक्षिण अफ्रीका में अपने साथ संघर्ष करने वाले साधारण लोगों के बारे में उन्होंने कहा कि "आप कहते हैं की इन महान स्त्री पुरुषों को प्रेरणा मैंने दी, मगर मैं इस सम्मान को स्वीकार नहीं कर सकता क्योंकि मैंने कुछ नहीं किया ये सब आप सभी के सहयोग से ही हुआ है" बिना किसी भी इनाम की आशा किए हुए विश्वास के साथ कोई काम करने वाले इन सीधे साधे लोगों ने ही मुझे प्रेरणा दी मुझे अपनी जगह पर अडिग रखा तथा जिन्होंने अपने बलिदान और महान विश्वास के द्वारा मुझ से वह सब कराया, जो मैं कर सका।[5]

आजादी से ज्यादा महत्त्वपूर्ण स्वच्छता है। गांधी जी अपनी पूरी जिंदगी स्वच्छता को खास एहमियत दिये। उनका मानना था कि जो स्वच्छ है वही स्वस्थ हैं। अगर व्यक्ति राजनीतिक स्वतंत्र नहीं भी है तो भी वह जीवन यापन अच्छे से व्यतीत कर सकता है, लेकिन अगर वह स्वच्छ नहीं है तो उसके अंदर अच्छे विचारों का आना दुर्लभ सी बात हैं। महात्मा गांधी का दो बातों पर बहुत ज्यादा जोड़ रहा हैं 'एक प्रबंधन और दूसरा सफाई' स्वतंत्रता संग्राम के दौरान विद्यार्थियों ने गांधी जी से पत्र लिखकर पूछा कि उन्हें गर्मी की छुट्टियों में कहां जाना चाहिए? गांधीजी इन पत्र को जवाब देते हुए बड़ी सरलता से कहे की आप सब गांव में जाकर वहां काम करें और गांव में सफाई पर ग्रामीणों को जागरूक करें जिससे कि उन्हें मालूम हो स्वच्छता क्या है, हमारे

जीवन में साफ-सफाई क्यों जरूरी है, स्वच्छता से होने वाले उन तमाम लाभों को जनता से रूबरू कराना। गांधी जी की सफाई के प्रति सजगता का एक प्रसंग यह भी है कि कोलकाता कांग्रेस अधिवेशन में शामिल होने पहुंचे तो सबसे पहले वे रसोई घर में गये वहां की गंदगी देखकर वे नाराज हो उठे और रसोइयों को रसोईघर साफ सुथरा रखने और खुद को स्वच्छ होकर आने की हिदायत दी। बापू के बताए बातों से हम यह जान पड़ते हैं की वह साफ-सफाई के कितने बड़े पक्षधर थे। महत्त्वपूर्ण बात यह है की बापू केवल बाहरी स्वच्छता पर ज़ोर नहीं देते बल्कि वह आत्म शुद्धि की बात करते, बापू का मानना था की अगर हमारे मन में स्वच्छता का भाव नहीं है तो हमारे पास पड़ोस में शुद्ध व सच्चे एवं ईमानदार विचार आना असंभव है। अपने इस विचार को बापू ने कई समारोहों में पत्र पत्रिकाओं में कहा है की जो सचमुच में साफ-सफाई में विश्वास करता है, वह कभी भी अस्वच्छ बनकर नहीं रह सकता एक सुन्दर, पवित्र, समरस और बुराइयों से मुक्त समाज के निर्माण के लिए बापू के बताये गए साफ-सफाई के प्रति दर्शन से श्रेष्ठ अन्य कोई दर्शन नहीं हो सकता। सेवा का कोई सीमित दायरा नहीं होता है यह एक विस्तृत क्षेत्र है। बापू गांवो में गंदगी को देख कर बढ़ा व्यथित हुए और लोगो से आग्रह किए की साफ-सफाई न केवल हमारे घर, सड़क के लिए ही जरूरी होती है। यह तो सम्पूर्ण देश की महत्त्वपूर्ण जरूरतों में से एक है। इससे केवल अपने घर ही नहीं बल्कि आस पड़ोस भी स्वच्छ रहेगा जब हम जिस परिवेश में रहते हैं यहाँ अगर स्वच्छता की अलख जगाई जाए तो इसके माध्यम से पूरा देश भी स्वच्छ हो जायेगा।

मन की साफ-सफाई पहली वस्तु है, जिसे सर्वप्रथम पढ़ाया जाना चाहिए, अन्य पाठ स्वच्छता के पाठ के पश्चात भी पढ़ाया व सिखाया जा सकता है। शुद्ध हृदय का वास्तविक होने के लिए शारीरिक स्वच्छता उतनी ही जरूरी है जितना आस-पड़ोस शहर व देश के लिए स्वच्छ रहना।[6]

महात्मा गांधी ने स्वच्छता के लिए सिर्फ आम जन को ही प्रेरित नहीं किया बल्कि निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के संस्थानो में भी साफ-सफाई को लेकर जागरूकता बढ़ाने पर विशेष ज़ोर दिया गया। गांधी के अनुसार किसी भी समाज ओर संस्थान के सभी लोगो की यह ज़िम्मेदारी होंगी की वे अपने निवास एवं कार्य स्थलो के परिसर ओर पर्यावरण की स्वच्छता बनाए रखे वहाँ पर किसी भी प्रकार का प्रदूषण न फैलाय। सरकार ओर सरकारी निकाय अपनी सीमा के अंदर ही रह कर यह प्रयास कर सकते हैं परंतु प्रत्येक नागरिक इसे अपना दायित्व समझे तो सम्पूर्ण राष्ट्र को स्वच्छ बनाने के लक्ष्यों की प्राप्ति बहुत ही सरलता पूर्ण तरीके से संभव हो सकती है। गांधी ने स्वच्छता के अपने व्यापक विचारो को जन-जन तक पहुचाने का कार्य किए। पूरे समाज एवं देश को यह संदेश दिया की यदि प्रत्येक व्यक्ति यह जिम्मेदारी उठा ले तो हम एक सुंदर व स्वच्छ देश के निर्माण में अपनी भागीदारी को सुनिश्चित कर सकते हैं। दक्षिण अफ्रीका में स्वच्छता के लिए बापू किसी और पर निर्भर नहीं रहे बल्कि उन स्थानों की सफाई स्वं करते थे जहां वो निवास करते थे। अपने दक्षिण अफ्रीका प्रवास के दौरान उन्होंने स्वच्छता को लेकर बहुत से प्रेरक उदाहरण समाज के सामने पेश किया वे अपने निवास स्थान के आस-पास की सफाई खुद से करते थे ओर अन्य लोगो को इसके लिए प्रेरित भी करते थे। जब डरबन में फ्लेग जैसी महामारी ने अपनी व्यापकता दिखाई तब भी गांधी जी ने बिना किसी डर ओर

झिझक के पूरे शहर की सफाई में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया तथा अपने साथ बहुत से लोगो को आने के लिए प्रेरित किया।

बापू ने हमेंसा साफ-सफाई की बात कही और सम्पूर्ण स्वच्छता के लिए इसे जरूरी बताया। और हमें यह महसूस कराया कि हम अन्य लोगो के लिए तो गंदगी न फैलाएं और खुद से जो गंदगी फैलाएं, उसकी साफ-सफाई भी स्वयं करें, खुद की गंदगी इसमें किसी भी प्रकार का विभेद नहीं होना चाहिए।[7] स्वच्छता के विषय में महात्मा गांधीजी ने कहा था की हम अपने आस पास और अपने घरों से कचरे हटाने में यकीन रखते हैं परंतु समग्र समाज इस कि चिंता किए बिना इसे गली मोहल्लों में फेंकने में भी यकीन करते हैं। हमें खुद की साफ-सफाई में बड़ा छोटा को कोई भी विभेद नहीं करनी चाहिए। कुछ ऐसे ही कारणों से हम अपने घर के बाहर अधिक मात्रा में कूड़े कचरे पाते हैं। पास पड़ोस में गन्दगी फैलाने में किसी बाहरी व्यक्ति का योगदान नहीं होता है बल्कि इस के जिम्मेवार भी हम स्वयं ही हैं।

कूड़े कचरे को इधर उधर फैलाते हैं तो हम यह महसूस करते हैं कि हमारा घर अब साफ हो चुका है, यहीं सोच हमारे पड़ोसी का भी होता है वह भी अपने घर को साफ करके खुश हो जाता है। परन्तु वो इस बात से अनभिज्ञ है कि इससे हमारे आसपास के परिवेश पर क्या प्रभाव पड़ेगा। गांधीजी ने साफ-सफाई की शिक्षा सभी वर्गों को दिया। गांधी का मानना था कि प्रत्येक संस्थान में सभी लोगों का कर्तव्य बनता है कि वह आपने आस पड़ोस में स्वच्छता बनाए रखें।

सरकार और नगर परिषद का कार्य एक दायरे तक सीमित है। यदि सभी लोग थोड़ा बहुत ही इस पर ध्यान दें तो पूरे परिवेश को स्वच्छ बनाने में ज्यादा वक्त नहीं लगेगा। गांधीजी का मानना था कि एक स्वच्छ परिवेश एक दिन में तो हासिल नहीं किया जा सकता है पर सतत प्रयत्न से इसे जरूर संभव किया जा सकता है। गांधी जी ने साफ-सफाई से से जुड़ी शिक्षा सिर्फ नैतिकता के लिए नहीं दी बल्कि हम इसे जीवन में कैसे उतारे और इसके महत्त्व को पहचान कर इस पर अमल करें यह भी बताया। उन्होंने केवल भारत ही नहीं जहां-जहां भी गए सभी स्थानों पर उन्होंने स्वच्छता के कार्यों पर जोर दिए। बापू ने स्वच्छता का सबक सिर्फ आम व्यक्तियों को ही नहीं दिये बल्कि समाज के उन सभी वर्गो को दिये। अगर बात हम छोटे-छोटे समूहो की करे तो गांधी ने कई स्वंसेवको को देश के सभी हिस्सों में भेजा ओर उन्हे प्रेरित किया लोगो में जागरूकता फैलाने के लिए। गांधी जी मानते थे की कोई भी संगठन हो उसमें ऊपर से नीचे तक सभी सदस्यों की ज़िम्मेदारी होगी की वे साफ-सफाई के प्रति पूरी निष्ठा से कार्य करे।

महात्मा गांधी के माध्यम से स्वच्छता के लिए कई कारको की भूमिका का वर्णन किया गया। मोतिहारी में आगमन के पश्चात सर्वप्रथम गांधी ने स्वच्छता को ही जन उपयोगी व उस हेतु व्यक्ति परख भागीदारी करने को कहा। पास-पड़ोस की नदी तलाब व झिलो में आने वाली मल-मूत्र की अधिकता को देखकर चिंतित थे। नल-नालो द्वारा उनके चिंतन की उत्तेजना अधिक तीव्र तब हो गयी जब उसी तलाब में पशुओं को नहलाया जा रहा तथा कपड़ो की साफ-सफाई के साथ कुछ महिलाएँ उसी तलाब में पानी पीने हेतु

घड़ा ले जा रही हैं। जिसे वो अपने बच्चों व परिवार के अन्य सदस्यों को उपयोग करने हेतु देंगी। चूंकि वे इतनी शिक्षित व तार्किक नहीं है की वे अपने सेहत खराब का मूल कारण पानी पीने को ही मान सके। इस दशा को देख कर गांधी जी अपनी चिंता को नित्य होने वाले प्रार्थना सभावों में स्पष्ट करते थे। यह बताने का निरंतर प्रयास करते हैं की हमारी प्राचीन सभ्यता ओर संस्कृति में स्वच्छता के शार तत्व हमेंशा से समाहित रहे थे। परंतु समाज जिसमें मुख्य रूप से महिलाएं अशिक्षित है। इसी कारण यहाँ की नदियां जहरीली होती जा रही। यदि ऐसा ही निरंतर हुआ तो हमारी सभ्यता नष्ट हो जाएंगी। हमें पर्यावर्णीय आपदा के मुहाने पर खड़े होने से पहले ही बचाव करना है। क्योंकि यदि यहीं परंपरा आने वाली पीढ़ियों में समाहित होगी तो सबसे पवित्र गंगा भी आने वाले दशको में पूर्ण प्रदूषित हो जाएंगी।

चंपारण में गांधी जी

चंपारण बिहार और उड़ीसा के पश्चिमोत्तर कोने में है। इसके उत्तर में हिमालय नेपाल, पश्चिम में गोरखपुर जिला, पूरब में मुजफ्फरपुर और दक्षिण में सारण जिला है। हिमालय के कुछ दक्षिण के अंश का नाम सोमेंश्वर है इसका कुछ हिस्सा चंपारण में पड़ता है। चंपारण के लोगों की बड़ी इच्छा थी कि महात्मा गांधी चंपारण आए और यहां के लोगों की दशा को खुद देखें और इसका निपटारा करने का प्रयत्न करे। बहुत से समाजसेवियों ने अपने माध्यमों से पत्र लिखकर गांधीजी को चंपारण बुलाने का आग्रह किए। लखनऊ के कांग्रेश सम्मेलन से लौटने के बाद में राजकुमार शुक्ला को चंपारण के कृषको द्वारा आग्रह किया गया की वह गांधी जी को बुलाए। 'राजकुमार शुक्ला निलहो की जुल्मों से चंपारण के रैयतों को बचाइए चंपारण आकार रैयतो की दशा देखिये'।

'आप प्रति दिन किसी की कहानी तो जरूर सुनते होंगे आज मेंरी भी सुने'। हम अपना यह पीड़ा बताकर आपको दुखी करना नहीं चाहते। आपसे मात्र इतनी ही विनती है कि आप खुद आकर देख लीजिए। इस पत्र के उत्तर में गांधी जी ने लिखा की जहां तक शीघ्र हो सकेगा, मैं चंपारण आने की चेष्टा करूंगा। एक दूसरा पत्र बेतिया के एक उत्साही नवयुवक श्री युत्त पीर मोहम्मद मुनीश के द्वार भेजा गया जिसमें चंपारण के संबंध में बहुत से बातें और घटनाओं का उल्लेख किया गया। उत्तर में गांधी जी ने पूछा की वह मुजफ्फरपुर किस रास्ते से पहुंच सकते हैं और यह भी जानना चाहा कि यदि वह 3 दिनो तक चंपारण में ठहरे तो जो कुछ देखने की आवश्यकता थी वह सब वह देख सकेंगे या नहीं? साथ ही गांधी ने अप्रैल में चंपारण पहुंच जाने को लिखा। गांधी जी ने कहा कि मैं रैयतो और नीलवरो के संबंध में जो बातें मुझसे कही गई है उन्ही की सत्यता की जांच करने मैं आ रहा हूं मेंरा मतलब यहीं है कि प्रतिष्ठा के साथ सुलह हो जाए। गांधीजी रेल मार्ग के माध्यम से मोतिहारी पहुंचे और गोरख प्रसाद के मकान में जाकर ठहरे यह बातें चंपारण के लोगों में इस कदर फैली कि लोगों का बहुत भीड़ जुट गया। सब अपनी समस्याएं सुनाने लगे गांधी ने धैर्य पूर्वक उन सब की बातें सुनी और निष्कर्ष तक पहुंचने में लग गए। इसी क्रम में गांधी ने चंपारण में देखा की लोग बड़ी मात्रा में साफ-सफाई के प्रति जागरूक नहीं थे इस बात से गांधी बहुत दुखी हुए इस समस्या को गांधी ने बड़ी प्रमुखता से उठाई। बापू एवं उनके सहयोगीयो के सामने देश में गाँव के लोगो के बीच साफ-सफाई की समस्या तब प्रकट हुई, जब बापू

ने कार्य करना प्रारंभ किया। बापू के सामने सबसे बड़ी चुनौती स्वच्छता को लेकर था। बापू के ध्यान में यह बात आयी की अगर गाँव में लोगो को शिक्षित करने पर ज़ोर दिया जाए तो काफी हद तक सुधार लाया जा सकता है क्योंकि यहाँ पर साफ-सफाई एक मुश्किल काम था। छोटे छोटे कृषक कार्य से जुड़े लोग भी अपनी मैला को खुद से नहीं उठाते बल्कि उसे यत्र-तत्र कही भी छोर देते जिससे पर्यावरण के साथ-साथ आस पड़ोस पर भी इसका गहरा असर पड़ता था गांधी जी के साथ आए सहयोगीयों ने चंपारण में साफ-सफाई से संबन्धित कई महत्त्वपूर्ण कार्य किए। तथा लोगो को जागरूक करने में अपनी अहम भूमिका का निर्वहन किया। किसी भी योजना की जानकारी उपलब्ध कराने और उसके प्रति लगाव लाने के लिए शिक्षा तथा कौशल विकास की काफी जरूरत है। गांधी ओर उनके सहयोगियों ने अपनी दृढ़ता के कारण चंपारण तथा सत्याग्रह आश्रम स्कूलो में सफाई और स्वच्छता की शिक्षा देनी शुरू की। लोगों के अंदर शौच को लेकर ऐसी मानसिकता बना हुआ था की लोग शौच तो करते थे पर उसे खुद उठाने को तैयार नहीं थे। चंपारण आए स्वयंसेवक डा. देव ने नियमित रूप से यहाँ पर साफ-सफाई किए तथा यहाँ के लोगों के अंदर साफ-सफाई के महत्त्व को बताने का कार्य किए। गांधी एवं उनके सहयोगियों ने चंपारण में साफ-सफाई के लिए जनआंदोलन चलाने का काम किया। जिसमें चंपारण के लोगों ने भी उन सभी का सहयोग किया। गांधी का मत था कि लोगों में शिक्षा का प्रचार का महत्त्व उतना ही आवश्यक है जितना उनके कष्टों को दूर करना। गांधी को यह ज्ञात हो गया था कि चंपारण के लोगों को शिक्षित करने के लिए जन समुदायों में एक जागृति लानी होगी। इस कार्य को करने में गांधी ने स्वयंसेवकों का जिक्र किया था। स्वयंसेवक ऐसा होना चाहिए जिसमें किसी भी प्रकार का कोई लाज ना हो कुदाल लेकर गांव में नए रास्ते बनाए अथवा पुराने रास्तों की मरम्मत करें, गांव की मोरियों को साफ करें रैयत और जमींदार के आपस के व्यवहार में रैयत को सही राह बताए। इसी तरह के कार्य अगर छह माह तक चले तो इसमें कोई संदेह नहीं की इससे रैयतों की ही नहीं बल्कि स्वयंसेवकों और देश की भी भलाई होगी। मोतिहारी से लगभग 20 मील दूर पूर्व दिशा में एक गांव बड़हरवा लखनसेन है यहीं पर गांधी ने पहली पाठशाला की स्थापना की इसमें ग्रामीणों ने गांधी को बहुत सहयोग दिया। गांधी के छोटे पुत्र देवदास गांधी और गांधी के कई सहयोगियों ने यहां आकर अपनी सेवाएं देनी शुरू की। फिर गांधी ने भितहरवा गांव में एक पाठशाला खोली यह गांव बेतिया से करीब 40 किलोमीटर कि दूरी पर नेपाल के तराई क्षेत्र के पास स्थित है गांधी के अनुसार यहां शिक्षा का काफी अभाव था यहां के बच्चों को पढ़ाना एक चुनौती सी थी यहां के महिलाओं के विचारों को जानने के लिए गांधी ने अपनी पत्नी कस्तूरबा गांधी को लाया। भितहरवा में डॉ. देव ने लोगों के बीच मुफ्त स्वास्थ जांच कर दवाएं बाटी तथा साफ-सफाई के प्रति लोगों का ध्यान आकृष्ट कर उनकी बड़ी सहायता की। चंपारण के पिपरा, तुरकौलिया में भी पाठशालायें खोली गई। इन सभी का तात्पर्य एक ही था की चंपारण के लोगो को शिक्षित करना। एक दिन गांधी और उनके पुत्र तथा मिसेज गोखले बड़हरवा में एक मृत व्यक्ति को देखा यह दृश्य देखकर गांधी ने कहा इस जिले के लोग रोगियों के प्रति पूरा ध्यान नहीं देते। गांधी का यह विश्वास था कि यदि मामूली सफाई के प्रति ध्यान दिया जाए, तो बहुत से लोग मृत्यु से बच जाएं। गांधी चंपारण के रग-रग में बस गए थे। गांधी चंपारण के प्रत्येक लोगो के अंदर एक ऐसा

बीज बो गए जो युगो-युगो तक चंपारण में विधमान रहेगा। यदि कोई व्यक्ति स्वयं स्वच्छ न रहे अपने आसपास को स्वच्छ न रखे तो वह कभी भी स्वास्थ्य नहीं रह सकता। गांधीजी कहते थे मनुष्य को सबसे पहले अपने तन मन और अपने आस-पड़ोस को स्वच्छ रखना चाहिए ताकि वह खुद स्वस्थ रह सके। स्वच्छता में ही अच्छी स्वास्थ्य छुपी हुई है, इसलिए गांधीजी मानते थे कि स्वच्छता ही सर्वोपरि है। महात्मा गांधी के जीवन में चंपारण एक ऐसा अध्याय था जिसने मोहनदास करमचंद गांधी को महात्मा गांधी बना दिया।[8] वह गांधी का स्पर्श ही था, जिसने अंग्रेजों द्वारा कुचले गए चंपारण को धधकता हुआ शोला बना दिया। गांधी अपनी आत्मकथा सत्य के साथ मेरे प्रयोग में लिखते हैं राजकुमार शुक्ला चंपारण के लोगों पर से नील के दाग को धोने के लिए अड़िग थे। चंपारण और बारदोली सत्याग्रह गांधी जी द्वारा केवल लोगों के लिये भौतिक लाभ प्राप्त करने हेतु नहीं किये गए थे, बल्कि तत्कालीन ब्रिटिश शासन के अन्यायपूर्ण रवैये का विरोध करने हेतु किये गए थे। सविनय अवज्ञा आंदोलन, दांडी सत्याग्रह और भारत छोड़ो आंदोलन ऐसे प्रमुख उदाहरण थे जिनमें गांधी जी ने आत्मबल को सत्याग्रह के हथियार के रूप में प्रयोग किया। स्वच्छ भारत क्रांति नामक पुस्तक में "चलो चंपारण" तवलीन सिंह द्वारा लिखी अध्याय में बड़े ही सुंदर शब्दों में कहा गया है कि हम गंदगी के ढेर पर एक बाल डालते हैं फिर इसे एक गिलास पानी में डुबोते हैं और इसे लोगों को पीने के लिए कहते हैं जब वे मना करते हैं तो हम उन्हें यह सोचने के लिए कहते हैं कि जब मक्खियां जिनके 6 पैर होते हैं और मानव मल मूत्र पर बैठकर अगर हमारे भोजन पर बैठती है तो भोजन कितना गंदा होता होगा। एक और उदाहरण जो बहुत प्रभाव डालता था और खुले में शौच करने वालों को बता रहा था, वह यह की स्वच्छता की कमी के कारण हर दिन मरने वाले भारतीय बच्चों से दो विमान भर जाएंगे इस छोटी सी बस्ती में बड़ी मात्रा में स्वयंसेवक पूरे भारत से आए थे चंपारण की यात्रा करने के लिए वे सब काफी प्रेरित हुए उन्होंने सुना था कि बिहार स्वच्छ भारत मिशन में पिछड़ने वाले राज्यों में से एक था, वे बिहार के लोगों को स्वच्छता अभियान में भाग लेने के लिए प्रेरित करना चाहते थे।

आश्रमों में बापू और उनके सहयोगियों ने साफ-सफाई के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को बखूबी निभाया। और बापू ने यह कहा की जो भी व्यक्ति आश्रम में आना चाहता है वह आ सकता है लेकिन मेंरी एक परीक्षा को पास करनी होगी। जिस में आश्रमों के साफ-सफाई से लेकर मैला तक को खुद साफ करने में कोई झिझक ना हो। लोगो का यही मानना था की किसी भी तरह मैला को अंत में खेतों में ही जमा कर उर्वरक के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। गांधी के लिए साफ-सफाई राष्ट्र के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य हैं। भारतीय समाज से छुआ-छुत को समाप्त करने की कोशिस ने बापू को साफ-सफाई के प्रति और प्रेरित कर दिया। क्योंकि बापू को लगने लगा की स्वच्छता से समाज में एक जागृति लायी जा सकती है। बापू को यह लगता था की क्यो कुछ ही वर्ग तथा उनके वंशानुगत ही साफ-सफाई के कार्य करे। बल्कि साफ-सफाई हम सभी का कार्य है इसे हम सभी को ज़िम्मेदारी पूर्वक खुद करनी होगी न की किसी एक वर्ग पर निर्भर रहना पड़े। गांधी खुद भी अपने आस पड़ोस की साफ-सफाई और मैंला ढोने का काम करते थे और अपने सहयोगियों से भी कराते थे।

वर्धा में जमुनालाल बजाज के सहयोग से बने आश्रम के नियमो में जल का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान था कि कोई भी व्यक्ति अपने जरूरत से जादा पानी खर्च नहीं कर सकता।[9] पीने के लिए गर्म पानी का उपयोग

होता था। सूखा और गिले दोनों कचरों के डिब्बों से अलग-अलग होने चाहिए। जहां मक्खियां अधिक आएं उस स्थान को सुरक्षित रखना चाहिए। अच्छी तरह स्वच्छता से ही भारत के सभी गांवों को एक आदर्श गाँव बनाया जा सकता है महात्मा गांधी ने 'ग्राम स्वराज' पुस्तक और 'मेरे सपनों के भारत' पुस्तक में गांधी ने गांव के उन तमाम पहलुओं पर जोर दिया है जो वर्तमान और भविष्य में होने वाली परिवर्तन पर बल देती है गांधीजी का शुरू से मानना था की भारत एक ऐसा देश है जिसका इतिहास अपने आप में अनूठा है। यहां समय-समय पर कई महान सपूतों ने जन्म लिया और इस धरती का मान बढ़ाया। भारत की आत्मा गांवों में बसती है तथा भारत को गांवों का देश कहा जाता है। यहां की लगभग दो-तिहाई लोग गांव में निवास करते हैं। गांधी जी कहते हैं गांव का स्मरण करते ही मेरे सामने हरे भरे खेत खलिहान, लहराते हुए पेड़ पौधे, बहता हुआ पानी और साधारण जीवन जीने वाले उन व्यक्तियों का दृश्य मेरे सम्मुख आ जाता है। आज संपूर्ण देश का जीवन यापन गाँव में उगाए गए फसल से ही होता है, गांव में बेहतर साफ-सफाई के महत्त्व को गांधी जी ने देश और दुनिया से जोड़कर बताया क्योंकि अगर गांव स्वच्छ है तो देश पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। इसलिए गांव में साफ-सफाई के लिए हम सभी का दायित्व बनता है कि गांव में साफ-सफाई के प्रति जागरूकता लाये और आदर्श गांव बनाने में भूमिका निभाए। नदियों को साफ रखकर हम अपनी सभ्यता को जिंदा रख सकते हैं। भारत की सभ्यता संस्कृति का जुड़ाव में नदियों की सबसे अहम भूमिका रही है हम अपने चकाचौंध भरी दुनिया में इतने आगे निकल चुके हैं कि हमारे पास समय ही नहीं है कि हम खुद की और घर की सफाई को छोड़कर अपने गांव की कभी सफाई करें।

जनसभाओं एवं नागरिक समारोहों में

पश्चिम समाज द्वारा स्थापित नगरपालिका प्रशासन के स्वच्छ गुणो को गांधी जी द्वारा 1924 के बेलगाम में हुए जनसमारोहो में बताया गया की पश्चिम के समाज से हम एक चीज सीख सकते हैं वह है लोगों की साफ-सफाई। हमें गांवो में जीवन यापन की आदत है ओर यहाँ पे इसकी कमिया बड़ी मात्रा में व्याप्त हैं।[10] बापू ने साफ-सफाई की बात कांग्रेस के लगभग सभी आयोजनो में जहां भी गए वहाँ पर किये बापू मानते थे कि गंदगी बुराई हैं ओर इस बुराई से हम सभी को लड़ने की आवश्यकता है। स्वच्छता को लेकर जिस प्रकार हमारे पूर्वज इसे भगवान का रूप मानते थे और इसे पूजा पाठ से जोड़कर स्वच्छता के महत्त्व को बढ़ावा देते थे। आज के दौर में अपने घरों में देखते हैं की जब घर में कोई त्योहार आते हैं या कोई मेंहमान आने वाला हैं या कोई बड़े-छोटे कार्यक्रम होने वाले हो उस समय हमारी दादी मां, मां, बहन, दादाजी, पिताजी इत्यादि सभी के द्वारा हम सभी पर दबाव बनाया जाता है घर को साफ-सफाई करने के लिए हम डर से दबाव में आकर सफाई करने लगते हैं जैसे-जैसे समय बितता जाता है और हम फिर सर्वसाधारण की भांति अपने जीविकोपार्जन में व्यस्त हो जाते हैं, उन लोगों को हमें डर ना दिखा कर के बल्कि हमें स्वच्छता के उन तमाम पहलुओं के बारे में बताना चाहिए जिससे कि उन तमाम छोटे बच्चों को यह ज्ञात हो जाएगी स्वच्छता हमारे लिए क्यों जरूरी हैं इसका हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ेगा। डर से नहीं बल्कि खुद को स्वस्थ रखने के लिए स्वच्छ रहें और अपने आसपास को स्वच्छ रखें इन सभी पहलुओं को बताना चाहिए जिससे कि बच्चे अपने अंदर इनसभी पहलुओं

को उतारे इसे पीढ़ी दर पीढ़ी आ रही जिम्मेदारियां ना समझ करके सफाई करें और खुद स्वच्छ रहें और अपने आस-पड़ोस और अपने पर्यावरण को भी स्वच्छ रखें।[11]

शौचालय को अपने सोने वाले स्थान की तरह साफ सुथरा रखना जरूरी है-महात्मा गांधी। गांधी ने अपने कई जगह संबोधन में यह कहा है कि आप जिस परिवेश मैं हैं वहां की संपूर्ण स्वच्छता की जिम्मेदारी आपकी खुद की है और आप क्या कर रहे हैं अपने जीवन यापन को कैसे व्यतीत कर रहे हैं, आपके विचार कैसे हैं इन सभी पहलुओं को गांधीजी स्वच्छता के माध्यम से जोड़ने का प्रयास किए हैं। जिस प्रकार हम बिना शौच किए स्वस्थ रह नहीं सकते हैं और जिस शौचालय में हम प्रतिदिन जा रहे हैं शौच करने तो क्या हमारा दायित्व नहीं बनता है कि हम अपने शौचालय को साफ सुथरा रखें गांधी इन तमाम पहलुओं पर जोर दिए हैं।

'नवजीवन', 'यंग इंडिया' के पश्चात 'हरिजन पत्रिका' में सफाई के परंपरावादी स्वरूप में बदलाव लाने हेतु गांधी जी ने कई रूपो में प्रचार प्रसारित करवाया। जिस हेतु उन्होंने स्वच्छता की समग्रवादी दृष्टिकोण को मूल केंद्र के रूप में रखते हुए लेख व पत्रिकाए लिखे। बापू ने यह भी कहा की भारतीय अपने घर परिवार को गंदगी से बचा के रखते हैं लेकिन अपने घर छोड़ कर बाकी कही भी कुछ भी करके अस्वच्छ वतावरण बनाने में नहीं हिचकिचाते। इस समस्या को हम सभी अब तक नहीं समाप्त कर पाये हैं।

संदर्भ:-

1. गांधी, एम. के. (2020). *सत्य के साथ मेरे प्रयोग*. नई दिल्ली : फिंगरप्रिंट प्रकाशन. पृ. 93
2. गांधी, एम. के. (2020). *सत्य के साथ मेरे प्रयोग*. नई दिल्ली : फिंगरप्रिंट प्रकाशन. पृ. 117
3. गाँधी, एम. के. (2021). *ग्राम स्वराज*. नई दिल्ली : प्रभात पेपरबैक्स. पृ. 182
4. चंद्र, विपिन. (2019). *आधुनिक भारत का इतिहास*. हैदराबाद : ओरिएंटल ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड. पृ. 279
5. चंद्र, विपिन. (2019). *आधुनिक भारत का इतिहास*. हैदराबाद : ओरिएंटल ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड. पृ. 278
6. कुमारी, डॉ. वजिता. (2020). *स्वच्छता और महात्मा गांधी*. शिक्षण संशोधन पत्रिका, नई दिल्ली.
7. Shekh, H. (2021, June 1). गांधीजी और स्वच्छता पर निबंध, लेख - निबंध लेखन: Nibandh: Hindi paragraph. Retrieved December 1, 2021, from https://hindi-essay. com/gandhi-ji-aur-swachhta/.
8. अय्यर, परमेश्वर. (2020). *स्वच्छ भारत क्रांति*. नई दिल्ली. पृ. 204
9. Webdunia. (2014, January 28). *सेवाग्राम आश्रम: बापू के जीवन का दर्पण*. Retrieved November 12, 2021, from https://hindi. webdunia. com/article/mahatma-gandhi-special/सेवाग्राम-आश्रम-बापू-के-जीवन-का-दर्पण-114012800032_1. htm
10. स्वच्छता पर गांधी जी के विचार. (n. d.). Retrieved November 22, 2021, from https://m. dailyhunt. in/news/india/hindi/hindi indiawaterportal org-epaper-indwatr/svacchata par gandhi ji ke vichar-newsid-146851122
11. भारत सरकार अधिनियम, 1935. (2021, April 23). Retrieved November 23, 2021, from https://hi. wikipedia. org/wiki/भारत_सरकार_अधिनियम,_१९३५

घरेलू हिंसा और लैंगिक भेदभाव को खत्म करने के लिए समुदाय-आधारित हस्तक्षेप

डॉ. प्रशांत एन. शंभरकर*

shambharkarprashant358@gmail.com

सारांश

घरेलू हिंसा और लैंगिक भेदभाव समाज के लिए गंभीर समस्याएँ हैं जो न केवल महिलाओं के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं, बल्कि समाज के समग्र विकास में भी रुकावट डालती हैं। घरेलू हिंसा का मतलब किसी व्यक्ति, विशेष रूप से महिलाओं, के खिलाफ उनके घरों में शारीरिक, मानसिक, और यौन उत्पीड़न से होता है। लैंगिक भेदभाव महिलाओं और पुरुषों के बीच असमान अधिकारों और अवसरों के आधार पर होता है। इन समस्याओं के समाधान के लिए सामुदायिक हस्तक्षेप एक महत्वपूर्ण कदम हो सकता है। हाल के आंकड़ों से वैवाहिक हिंसा में वृद्धि का संकेत देखने को मिलते हैं, जो 2015-16 में 21.3% से बढ़कर 2019-20 में 25% से अधिक हो गई है। यह शोध लेख इन मुद्दों के वर्तमान सांख्यिकीय परिदृश्य की जांच करता है और उनके उन्मूलन के उद्देश्य से समुदाय-आधारित हस्तक्षेपों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करता है। विभिन्न कार्यक्रमों और पहलों का विश्लेषण करके, अध्ययन उन नवीन रणनीतियों पर प्रकाश डालता है जिन्होंने महाराष्ट्र में घरेलू हिंसा को कम करने और लैंगिक समानता को बढ़ावा देने में सहायक हो सकता है।

मुख्य शब्द - घरेलू हिंसा, लैंगिक भेदभाव, समुदाय आधारित हस्तक्षेप, महाराष्ट्र, महिला सशक्तिकरण, लैंगिक समानता।

परिचय -

घरेलू हिंसा के विभिन्न प्रकार होते हैं, जिनमें शारीरिक, मानसिक, यौन, और आर्थिक हिंसा शामिल हैं। यह हिंसा आमतौर पर शक्ति और नियंत्रण की असमान स्थितियों से उत्पन्न होती है। लैंगिक भेदभाव का कारण समाज में व्याप्त पारंपरिक सोच और धारणाएँ हैं, जो पुरुषों को अधिक अधिकार और अवसर देती हैं, जबकि महिलाओं को विभिन्न प्रकार की सीमाओं में बांध देती हैं। इन दोनों समस्याओं का समाधान केवल कानूनी या सरकारी उपायों से संभव नहीं है, बल्कि सामुदायिक जागरूकता और सहभागिता से भी इनका समाधान संभव है। भारत के सबसे प्रगतिशील राज्यों में से एक महाराष्ट्र घरेलू हिंसा और लैंगिक भेदभाव से जुड़ी महत्वपूर्ण चुनौतियों से जूझ रहा है। विधायी उपायों और नीतिगत पहलों के बावजूद, हाल के आँकड़े 18

* **Assistant Professor, Aniket College of Social Work, Wardha**

से 49 वर्ष की महिलाओं में वैवाहिक हिंसा में चिंताजनक वृद्धि दर्शाते हैं, जो 2015-16 में 21.3% से बढ़कर 2019-20 में 25% से अधिक हो गई है। यह ऊपर की ओर की प्रवृत्ति लैंगिक हिंसा और भेदभाव के मूल कारणों और अभिव्यक्तियों को संबोधित करने के लिए प्रभावी, समुदाय-संचालित हस्तक्षेप की आवश्यकता को रेखांकित करती है।

सांख्यिकीय अवलोकन :

महाराष्ट्र में घरेलू हिंसा की व्यापकता अलग-अलग अध्ययनों और क्षेत्रों में अलग-अलग है। उदाहरण के लिए, मुंबई की एक शहरी झुग्गी में किए गए एक अध्ययन में बताया गया कि 36.86% महिलाओं ने घरेलू हिंसा का अनुभव किया, जिसमें 33.21% ने मौखिक दुर्व्यवहार और 20.00% ने शारीरिक दुर्व्यवहार की रिपोर्ट की। इसके अतिरिक्त, राज्य का लिंग अनुपात चिंता का विषय रहा है, जो अंतर्निहित लैंगिक भेदभाव को दर्शाता है। 2001 में लिंग अनुपात प्रति 1000 पुरुषों पर 922 महिलाएं थी, जो लड़कों के प्रति प्राथमिकता और प्रणालीगत लिंग पूर्वाग्रहों को दर्शाता है।

समुदाय-आधारित हस्तक्षेप :

घरेलू हिंसा और लैंगिक भेदभाव को संबोधित करने के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है, जिसमें समुदाय-आधारित हस्तक्षेप एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये हस्तक्षेप स्थायी परिवर्तन लाने के लिए स्थानीय संसाधनों, सांस्कृतिक संदर्भों और सामुदायिक भागीदारी का लाभ उठाते हैं।

1. जागरूकता और शिक्षा कार्यक्रम:

लिंग संवेदीकरण कार्यशालाएँ : विभिन्न जिलों में आयोजित, इन कार्यशालाओं का उद्देश्य पारंपरिक लिंग मानदंडों को चुनौती देना और समानता को बढ़ावा देना है। प्रतिभागियों ने बढ़ती जागरूकता और लिंग भूमिकाओं के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव की रिपोर्ट की।

स्कूल-आधारित पाठ्यक्रम परिवर्तन : स्कूल के पाठ्यक्रम में लिंग अध्ययन को एकीकृत करना युवा मस्तिष्क को समतावादी विचारों के प्रति आकार देने में प्रभावी रहा है।

सामुदायिक जागरूकता अभियान : सामुदायिक स्तर पर जागरूकता बढ़ाना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके तहत, स्थानीय संगठनों, स्कूलों और धार्मिक संस्थाओं द्वारा कार्यक्रम आयोजित किए जा सकते हैं, जिसमें घरेलू हिंसा और लैंगिक भेदभाव के बारे में जानकारी दी जाए।

2. प्रभावित लोगों के लिए सहायता प्रणाली :

- **महिला स्वयं सहायता समूह :** महाराष्ट्र में, एसएचजी ने महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त बनाया है, घरेलू हिंसा जैसे मुद्दों पर चर्चा करने और उन्हें संबोधित करने के लिए एक मंच प्रदान किया है।

- **संकट हस्तक्षेप केंद्र :** कानूनी सहायता, परामर्श और आश्रय प्रदान करने वाले केंद्रों की स्थापना ने पीड़ितों को तत्काल सहायता प्रदान की है।
- **मदद और पुनर्वास कार्यक्रम :** घरेलू हिंसा से प्रभावित महिलाओं के लिए पुनर्वास कार्यक्रम और सहायता केन्द्र स्थापित किए जा सकते हैं। इन केन्द्रों में मानसिक और शारीरिक सहायता प्रदान की जाती है, साथ ही कानूनी सहायता भी दी जाती है।

3. पुरुषों और लड़कों को शामिल करना :

- **सामुदायिक संवाद :** मर्दानगी और अहिंसक व्यवहार के बारे में बातचीत में पुरुषों और लड़कों को शामिल करने वाले कार्यक्रमों ने धारणाओं को बदलने में सकारात्मक परिणाम दिखाए हैं।
- **समूह चर्चा और प्रशिक्षण :** पुरुषों और महिलाओं के लिए विशेष समूह चर्चाएँ आयोजित की जा सकती हैं, जहाँ उन्हें उनके अधिकारों, लैंगिक समानता और हिंसा के प्रभावों के बारे में बताया जा सके।
- **रोल मॉडल अभियान :** लैंगिक समानता की वकालत करने वाले पुरुष व्यक्तियों को उजागर करना दूसरों के लिए प्रेरणा का काम करता है।
- **प्रेरक नेतृत्व :** समुदाय के प्रभावशाली व्यक्तियों, जैसे कि स्थानीय नेताओं, शिक्षकों, और धार्मिक नेताओं को इस मामले में नेतृत्व की भूमिका निभाने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। उनका समर्थन और मार्गदर्शन समुदाय में बदलाव लाने में मदद कर सकता है।

4. नीति वकालत और कार्यान्वयन :

कानून प्रवर्तन को मजबूत करना : घरेलू हिंसा के मामलों को संवेदनशीलता से संभालने के लिए पुलिस और न्यायिक अधिकारियों को प्रशिक्षित करना कानूनों के बेहतर कार्यान्वयन को सुनिश्चित करता है।

सामुदायिक निगरानी समितियाँ : स्थानीय समितियाँ लैंगिक भेदभाव और हिंसा के मामलों की निगरानी करती हैं और रिपोर्ट करती हैं, जिससे जवाबदेही सुनिश्चित होती है।

मुंबई की शहरी झुग्गियों में, महिलाओं को उनके अधिकारों के बारे में शिक्षित करने और व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने पर केंद्रित एक समुदाय-आधारित पहल के कारण घरेलू हिंसा की घटनाओं में कमी आई। आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने वाली महिलाओं ने दुर्व्यवहार का विरोध करने और रिपोर्ट करने में अधिक सशक्त महसूस किया, जो इस तरह के हस्तक्षेपों की प्रभावशीलता को दर्शाता है।

सामुदायिक हस्तक्षेप के लाभ-

1. समुदाय का सहयोग : जब समुदाय एक साथ आता है, तो हिंसा और भेदभाव के खिलाफ मजबूत आवाज उठाने का अवसर मिलता है। यह महिलाओं के अधिकारों और समानता के प्रति सकारात्मक बदलाव ला सकता है।

2. सामाजिक पुनर्निर्माण : सामुदायिक हस्तक्षेप समाज के भीतर महिलाओं और पुरुषों के बीच समानता और सम्मान को बढ़ावा देता है। यह पारंपरिक सोच को चुनौती देता है और सामाजिक संरचनाओं में सुधार लाने में मदद करता है।

3. कानूनी सहायता का सुदृढ़ीकरण : सामुदायिक स्तर पर हस्तक्षेप से कानूनी अधिकारों के बारे में जागरूकता बढ़ती है, जिससे लोग अपनी समस्याओं का समाधान कानूनी तरीके से कर सकते हैं।

चुनौतियाँ और सिफारिशें :

जबकि समुदाय-आधारित हस्तक्षेपों ने वादा दिखाया है, गहरी सांस्कृतिक मानदंडों, संसाधनों की कमी और अपर्याप्त नीति कार्यान्वयन जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। इन हस्तक्षेपों की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए, निम्नलिखित सिफारिशें प्रस्तावित हैं:

- **संस्कृति और परंपरा :** बहुत सी परंपराएँ और सांस्कृतिक धारणाएँ महिलाओं के खिलाफ हिंसा और भेदभाव को बढ़ावा देती हैं। इन परंपराओं को बदलना कठिन हो सकता है।
- **संसाधनों की कमी** : समुदायों में जागरूकता फैलाने और हस्तक्षेप करने के लिए पर्याप्त संसाधनों की आवश्यकता होती है। कभी-कभी, सामुदायिक संगठन और सरकारी निकायों के पास पर्याप्त वित्तीय और मानव संसाधन नहीं होते हैं।
- **प्रेरणा की कमी :** कई बार समुदाय के लोग इस मुद्दे पर संजीदगी से नहीं सोचते और इसे हल करने के लिए प्रेरित नहीं होते हैं। इस कमी को दूर करना भी एक चुनौती है।
- **व्यापक डेटा संग्रह :** नीति और हस्तक्षेपों को सूचित करने के लिए घरेलू हिंसा और लिंग भेदभाव पर डेटा एकत्र करने और उसका विश्लेषण करने के लिए एक मजबूत प्रणाली की स्थापना।
- **सतत वित्तपोषण :** सामुदायिक कार्यक्रमों के लिए दीर्घकालिक वित्तपोषण सुनिश्चित करना ताकि उनकी निरंतरता और प्रभाव सुनिश्चित हो सके।
- **समग्र दृष्टिकोण :** घरेलू हिंसा और लिंग भेदभाव की बहुमुखी प्रकृति को संबोधित करने के लिए आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक सहायता तंत्र को एकीकृत करना।

निष्कर्ष :

सामाजिक और सांस्कृतिक मान्यताएँ नीति निर्धारण प्रक्रिया को उसी प्रकार प्रभावित करती हैं, जैसे नीतियाँ सामाजिक परंपराओं में बदलाव लाने या उन्हें जस का तस लागू करने की क्षमता रखती हैं। इसलिए यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि हम उन मौजूदा कमियों की पहचान करें जो भारत में लैंगिक असमानताओं को दूर करने, विशेष रूप से जेंडर आधारित हिंसा के संदर्भ में, बाधाएँ उत्पन्न करती हैं। पिछले चार दशकों में भारत ने महिलाओं के खिलाफ हिंसा के मुद्दे पर महत्त्वपूर्ण प्रगति की है, लेकिन जेंडर आधारित हिंसा से संबंधित नीतियों की समीक्षा करने पर यह स्पष्ट होता है कि, भले ही महिलाओं की सुरक्षा के लिए कानून मौजूद हैं, ये मुख्य रूप से दंडात्मक प्रकृति के हैं। नीति निर्धारण प्रक्रिया में जेंडर आधारित हिंसा से जुड़े कई महत्वपूर्ण पहलुओं की अनदेखी की जाती है, जैसे पितृसत्तात्मक संरचना, सांस्थानी ढांचे की अपर्याप्तता, लैंगिक रूप से पक्षपाती धारणाएँ जो क्रियान्वयन को प्रभावित करती हैं, सर्वाइवर महिलाओं के पुनर्वास के लिए सुविधाओं की कमी, और कानूनी प्रावधानों में मौजूद अंतराल।

नीति निर्माण का मुख्य उद्देश्य संघर्ष और अभाव को समाप्त करके, अवसरों तक पहुँच को बढ़ाना और विकास एवं सुरक्षा में संतुलन स्थापित करना है, ताकि सामाजिक अस्थिरता की स्थिति में सुधार किया जा सके। भारत आज भी जेंडर आधारित हिंसा के प्रति संवेदनशील देश है, और उसने अपनी आधी आबादी को प्रभावित करने वाली इस गंभीर समस्या का समाधान ढूंढ़ने में पर्याप्त सफलता नहीं पाई है। इस कारण से, सामाजिक कल्याण में बाधाएँ उत्पन्न होती हैं, संघर्ष की संभावनाएँ बढ़ती हैं और वैश्विक स्तर पर आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में रुकावट आती है। भारत में नीति निर्माण का दृष्टिकोण ऐसा होना चाहिए, जो इस समस्या के सामाजिक और कानूनी दोनों पहलुओं के संतुलन पर आधारित हो, ताकि अधिक स्पष्ट और प्रभावी समाधान खोजे जा सकें।

महाराष्ट्र में घरेलू हिंसा और लैंगिक भेदभाव को खत्म करने के लिए निरंतर, समुदाय-संचालित प्रयासों की आवश्यकता है जो इन मुद्दों को बनाए रखने वाले सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक कारकों को संबोधित करते हैं। अभिनव हस्तक्षेपों को लागू करने और सामुदायिक जुड़ाव को बढ़ावा देने से लैंगिक समानता प्राप्त करने और सभी व्यक्तियों की सुरक्षा और कल्याण सुनिश्चित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए जा सकते हैं।

संदर्भ-

भट्टाचार्या, रींकी. (2017). *भारत में घरेलू हिंसा*. दिल्ली : सेज पब्लिकेशन्स प्रा. लि.

देसाई, डॉ. राजुल. (2017). *घरेलू हिंसा : एक अपराध*. दिल्ली : विश्व हिंदी साहित्य परिषद.

Shrivastava, Prateek S. & Shrivastava, Saurabh R. (2013). A Study of Spousal Domestic Violence in an Urban Slum of Mumbai. *Int J Prev Med*. 2013 Jan;4(1):27–32. Retrieved from https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC3570908/

Natu, Nitasha.(2021 Nov 26). Spousal violence in Maharashtra rises, but still below national average. *The Times of India*. Retrieved from *https://timesofindia.indiatimes.com/city/mumbai/mumbai-spousal-violence-in-state-rises-but-still-below-national-average/articleshow/87919051.cms)*

Begum Shahina, Saritha Nair. & Prakasam, C. P. (2015 June). Socio-demographic factors associated with domestic violence in urban slums, Mumbai, Maharashtra, India. *The Indian Journal of Medical Research* 141(6):783-788 Retrieved from https://www.researchgate.net/publication/280066897_Socio-demographic_factors_associated_with_domestic_violence_in_urban_slums_Mumbai_Maharashtra_India

Pulla, Priyanka. (2018 March 3). What are the consequences of India's falling sex ratio? *The Hindu*. Retrieved from https://www.thehindu.com/sci-tech/health/what-are-the-consequences-of-indias-falling-sex-ratio/article22920346.ece

भारतीय ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता के बाधक कारकों का अध्ययन

प्रेरित बाथरी*

prerit.bathri09@gmail.com

सारांश

सामाजिक गतिशीलता का तात्पर्य सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति में सुधार से है। सामाजिक गतिशीलता के अंतर्गत जाति, व्यक्ति, महिला, समाज, गाँव इत्यादि हो सकते हैं जो सामाजिक स्तरीकरण का एक भाग है। सामाजिक गतिशीलता एक बेहतरीन समाज की स्थापना और राष्ट्र निर्माण की ओर लेकर जाता है। किसी भी समाज में महिलाओं की स्थिति के आंकलन से उस समाज की गतिशीलता को समझा जा सकता है। वर्तमान में भारतीय महिलाओं की स्थिति ऐसी है कि 21वीं सदी के दौर में भी ग्रामीण महिलाएँ समाज की मुख्यधारा में अपनी वांछित जगह नहीं बना पाई हैं। ग्रामीण महिलाओं के सामने ऐसी कई चुनौतियां हैं जिनसे आज भी वे नहीं उबर पाई हैं। ग्रामीण विकास को गतिशीलता देने के उद्देश्य से सरकार द्वारा कई योजनाओं को चलाया गया है, जिससे महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक तौर पर सशक्त बनाया जा सके। मगर आज भी ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति में अपेक्षित बदलाव नहीं हो पाया है। वर्तमान अध्यन के माध्यम से भारतीय ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता और इनके बाधक कारकों को समझने की कोशिश की गयी है। प्रस्तुत अध्यन द्वितीय स्रोतों से लिए गए आंकड़े पर आधारित अध्ययन है।

मुख्य शब्द

ग्रामीण भारत, ग्रामीण समाज, ग्रामीण महिलाएं, सामाजिक गतिशीलता, सामाजिक नीति

प्रस्तावना

किसी भी समाज में गतिशीलता और पिछड़ेपन के तत्व मौजूद होते हैं। गतिशीलता और पिछड़ेपन के मापन के पैमाने भी परिवर्तनशील होते हैं। समाज में व्यक्ति की पहचान उसकी सामाजिक स्थिति एवं समाज में उसकी भूमिका से निर्धारित होती है। समाज और व्यक्ति दोनों गतिशील होते हैं। कई बार एक सामान्य व्यक्ति अपनी क्षमता से निम्न से उच्च स्थिति को प्राप्त करता है जबकि एक उच्च स्थिति वाला व्यक्ति निम्नतर होकर

* **पीएच. डी. स्कॉलर, सामाज कार्य, मातृ सेवा संघ सामाज कार्य संस्थान, आर. टी. एम. एन. यू, नागपुर**

निम्न स्थिति में भी जा सकता है। इस प्रकार समाज में, व्यक्ति में निरंतर उच्चगामी अथवा निम्नगामी परिवर्तन होते रहते हैं, इसी क्रिया को सामाजिक गतिशीलता के रूप में समझ सकते है। अर्थात इस प्रकार के सामाजिक उतार-चढ़ाव का तात्पर्य "सामाजिक स्थिति में बदलाव आने से है।" सामाजिक गतिशीलता के अंतर्गत जाति, व्यक्ति, महिला, समाज, गाँव इत्यादि हो सकते हैं जो सामाजिक स्तरीकरण का एक भाग है। भारतीय समाज में दो तरह की सामाजिक गतिशीलता देखने को मिलती है- क्षैतिज गतिशीलता तथा ऊर्ध्वाधर गतिशीलता। ऊर्ध्वाधर गतिशीलता का संबंध व्यवसायिक स्थिति में बदलाव तथा निवास स्थान में बदलाव से होता है। ऊर्ध्वाधर गतिशीलता, सामाजिक स्थिति में बिना बदलाव किए उसकी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन करती है। इसी प्रकार क्षैतिज गतिशीलता का संबंध एक व्यक्ति या समूह का एक स्थिति से दूसरी स्थिति में परिवर्तन से होता है। इसी प्रकार अंतर पीढ़ीगत गतिशीलता तथा अन्तः पीढ़ीगत गतिशीलता भी देखी जा सकती है। यदि गतिशीलता एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में देखने को मिलती है तो उसे अंतर पीढ़ीगत कहते हैं और जब गतिशीलता सिर्फ एक व्यक्ति के जीवन तक ही देखी जाती है, तो उसे अन्तः पीढ़ीगत कहते हैं। एम.एन. श्रीनिवास (आधुनिक भारत में जाति,1962) के अनुसार सामाजिक गतिशीलता के विरोधी प्रतिमान जितने शक्तिशाली होंगे उतनी ही सामाजिक गतिशीलता का अनुसरण करने की इच्छा बढ़ेगी। गतिशीलता की दिन-प्रतिदिन बढ़ती इच्छा का सबसे बड़ा स्रोत जनगणना प्रक्रिया रही है। 19वीं तथा 20वीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों की भारतीय जनगणना रिपोर्ट इस गतिशीलता का स्पष्ट उदाहरण है।

अध्ययन का उद्देश्य एवं विधि

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता के बाधक तत्वों का अध्ययन करना है तथा ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता में वर्तमान बाधक तत्वों के कारणों की पड़ताल करना भी है । साथ ही ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता के बाधक तत्वों को दूर करने की संभावनाओं की तलाश करना एवं समाधान प्रस्तावित करना भी अध्ययन का उद्देश्य है। प्रस्तुत अध्ययन में प्रयुक्त होने वाली प्रविधि द्वितीयक स्त्रोत प्रविधि है, जिसके अंतर्गत सम्बंधित उपलब्ध आंकड़े, लिखित ग्रंथ, सर्वेक्षण रिपोर्ट, ऐतिहासिक प्रलेख, वार्षिक प्रतिवेदन एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाएं, पुस्तकों का उपयोग किया गया है। आकड़ों के विश्लेषण के लिए विमर्श विश्लेषण विधि का प्रयोग किया गया है।

महिला विकास की अवधारणा

महिला विकास का प्रश्न एक ऐसा सामाजिक मुद्दा है जिसने पिछले दो दशकों से विश्व बुद्धिजीवियों, समाज-सुधारकों, सामाज चिंतकों, महिलावादी विचारकों और विकास में रुचि रखने वाली संस्थाओं का ध्यान आकर्षित किया है। वर्ष 1975 को जब अंतरराष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया था तब से यह अनुभव किया जा रहा है कि किसी भी देश में महिलाओं के विकास कि कोई भी व्यूह रचना तब तक क्रियान्वित नहीं हो सकती जब तक कि वहाँ के सामाजिक-सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक आयामों का अध्ययन न कर लिया जाए

(निरूपमा, 2010)। इसके साथ ही साथ महिलाओं की सामाजिक भूमिका का भी अध्ययन करना अति आवश्यक हो जाता है। प्रख्यात समाजशास्त्री एवं विचारक मार्क्स का कहना है कि स्त्री का कोई वर्ग नहीं होता है, विश्व की आबादी वर्ग विहीन है, स्त्री के वर्ग का निर्धारण पुरुष के वर्ग से होता है। नारीवादी विचारक 'सिमोन द बुआ' ने भी अपनी पुस्तक **द सेकंड सेक्स** में बताया है की स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि बनाई जाती है। नारी को प्रकृति के रूप में और पुरुष को संस्कृति के रूप में चित्रित किया जाता रहा है (Butler, J. 1986)। नारी की इस हीन स्थिति के लिए पितृसत्तात्मक सत्ता उत्तरदायी है। ग्रामीण पितृसत्तात्मक समाज का एक बड़ा हिस्सा भी इन्हें इसी रूप में देखना पसंद करता है। भारतीय समाज उसी पितृसत्तात्मक व्यवस्था को लिए हुए है, जिसमें परिवार के निर्माण/निर्णय में महिला को शामिल करना जरूरी नहीं समझा जाता। फिर हम कैसे कह सकते हैं कि कोई योजना मात्र उन्हें राजनैतिक रूप से सशक्त बना सकती है। यह योजनाओं की भी असफलता है, जिसने वाह्य हस्तक्षेप पर विशेष ध्यान दिया है, पर आंतरिक परिवर्तन पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया है। आंतरिक परिवर्तन से तात्पर्य महिलाओं और पुरुषों की सहभागिता के लिए आर्थिक और राजनैतिक प्रयास के साथ- साथ परिवार और समाज में आंतरिक बदलाव के प्रयास भी किए जाने से है। इसके लिए यह जरूरी है कि परिवार के हर निर्णय में महिलाओं की सहभागिता का भी गंभीरतापूर्वक अध्ययन तथा इसमें सकारात्मक बदलाव हेतु हस्तक्षेप की सम्भावनाएं ढूंढ़ी जानी चाहिए। भारतीय समाज चरम असमानताओं और लैंगिक विषमताओं से भरा एक पितृसत्तात्मक समाज है।

भारतीय महिलाओं के सामाजिक पिछड़ेपन की ऐतिहासिक जड़ें एवं कारक

भारतीय समाज की पारंपरिक आधारशिला में भारतीय नारी की अवधारणा अति प्राचीन है, जिसने भारतीय समाज की नींव रखी है। मातृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था के दौर में परिवार और समाज में महिलाओं का स्थान सर्वोपरि था। उत्तर वैदिक काल में पुत्री की अपेक्षा पुत्र का आगमन अधिक मांगलिक माना जाता था, फिर भी पुत्री का स्थान सम्मानजनक था। मध्यकाल में स्त्रियों की जितनी अधोगति हुई उतनी इससे पूर्व कभी नहीं हुई थी। विद्वानों का मानना है कि प्राचीन भारत में महिलाओं को जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों के साथ बराबरी का दर्जा हासिल था। हालांकि कुछ अन्य विद्वानों का नज़रिया इसके विपरीत है। अध्ययनों के अनुसार प्रारंभिक वैदिक काल में महिलाओं को बराबरी का दर्जा और अधिकार मिलता था। जैन धर्म जैसे सुधारवादी आंदोलनों में महिलाओं को धार्मिक अनुष्ठानों में शामिल होने की अनुमति दी गयी है। इन सारी विशिष्टताओं की मौजूदगी के बावजूद भारत में लंबे समय से महिलाओं को कमोबेश दासता और बंदिशों का ही सामना करना पड़ा है। माना जाता है कि बाल विवाह की प्रथा छठी शताब्दी के आसपास शुरु हुई थी जिसने महिलाओं की स्थिति को और गर्त में डालने का काम किया। समाज में भारतीय महिलाओं की स्थिति में मध्य काल के दौरान और अधिक गिरावट आयी जब भारत के कुछ समुदायों में सती प्रथा, बाल विवाह और विधवा पुनर्विवाह सामाजिक जिंदगी का एक हिस्सा बन गए थे। भारतीय उपमहाद्वीप में मुस्लिम आक्रांताओं की जीत ने पर्दा प्रथा को भारतीय समाज में ला दिया। राजस्थान के राजपूतों में जौहर की प्रथा थी।

भारत के कुछ हिस्सों में देवदासियों या मंदिर की महिलाओं को यौन शोषण का शिकार होना पड़ता था। बहुविवाह की प्रथा हिन्दू क्षत्रिय शासकों में व्यापक रूप से प्रचलित थी। इन परिस्थितियों के बावजूद भी कुछ महिलाओं ने राजनीति, साहित्य, शिक्षा और धर्म के क्षेत्रों में सफलता हासिल की। भक्ति आंदोलन ने भी महिलाओं की बेहतर स्थिति को वापस हासिल करने की कोशिश की और प्रभुत्व के स्वरूपों पर सवाल उठाया। कुछ समुदायों में सती, जौहर और देवदासी जैसी परंपराओं पर प्रतिबंध लगा दिया गया था और आधुनिक भारत में यह समाप्त हो चुकी है। हालांकि इन प्रथाओं के कुछ मामले भारत के ग्रामीण इलाकों में कभी-कभार आज भी देखे जाते हैं। अंग्रेजी शासन के दौरान राम मोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, ज्योतिबा फुले आदि जैसे कई समाज सुधारकों ने महिलाओं के उत्थान के लिये लड़ाइयाँ लड़ीं जिसके परिणाम स्वरूप महिलाओं की मुक्ति का रास्ता खुला।

परिचर्चा

वर्तमान में भारतीय महिलाओं की स्थिति कुछ ऐसी है कि 21 वीं सदी के दौर में भी आज ग्रामीण महिला समाज की मुख्यधारा में अपनी वांछित जगह नहीं बना पाई है। ग्रामीण महिलाओं के सामने ऐसी कई चुनौतियां है जिनसे आज भी वे नहीं उबर पाई हैं। सरकार द्वारा कई योजनाओं को चलाया गया है, जिससे महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक तौर पर सशक्त बनाया जा सके। पर आज भी ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति में अपेक्षित बदलाव नहीं हो पाया है। सामाजिक रूप से महिलाएं आज भी पिछड़ी हुई हैं, पुरुषों पर उनकी निर्भरता हम आज भी देख सकते हैं, चाहे वह आर्थिक रूप से हो या राजनैतिक रूप से। सशक्तिकरण की लड़ाई हमेशा से सत्ता में बराबर की साझेदारी की लड़ाई रही है। यही बात महिला सशक्तिकरण को लेकर भी है। ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता के बाधक तत्वों को दूर करने के समाधानों के अंतर्गत सर्वप्रथम महिलाओं को नीति निर्धारण में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिले जिससे महिलाओं को अपने मूल और राजनीतिक अधिकारों के बारे में जानकारी प्राप्त हो सके। शिक्षा, संसाधनों/संपत्ति का स्वामित्व और रोज़मर्रा के काम में पक्षपाती दृष्टिकोण जैसे मामलों में होने वाली लैंगिक असमानताएँ खत्म की जाए। महिलाओं को उन अवांछित बाध्यताओं से बाहर आने की पहल स्वयं करनी होगी। महिलाओं को घर के भीतर रहकर काम करना चाहिये, पुरुषों की तुलना में महिलाओं को परिवार में अधिक समय देना चाहिए, घर तथा बच्चों की देखभाल का ज़िम्मा प्रायः महिलाओं को ही संभालना चाहिए। ऐसे कई सामाजिक भेदभावों को खत्म करने के लिए महिलाओं को स्वयं आगे आकर पितृसत्तात्मक समाज में व्याप्त इस सोच को तोड़ना होगा। राज्य, परिवार तथा समाज के लिये यह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है कि शिक्षा में लैंगिक अंतर को कम किया जाए, जिससे लैंगिक आधार पर किये जाने वाले कार्यों का पुनर्निधारण करना तथा श्रम में लैंगिक भेदभाव को समाप्त करने जैसी महिलाओं की विशिष्ट आवश्यकताओं का समुचित समाधान निकाला जाए।

निष्कर्ष

दरअसल जब भी बात ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता के बाधक तत्वों को दूर करने की होती है तो उसमें महिला और पुरुष के बीच शक्ति के समान बंटवारे की बात निहित होती है। चूंकि हम एक ऐसे लोकतांत्रिक समाज का हिस्सा हैं, जहां चुनी हुई सरकार के रूप में एक 'लोककल्याणकारी राज्य' की कल्पना की गई है, ऐसे में सरकार समय-समय पर योजनाओं और नवीन प्रणाली के ज़रिये सामाजिक परिवर्तन की पहल करती रहती है। भारत गांवों का देश है। महात्मा गांधी कहते थे कि भारत का विकास गांवों के विकास से ही संभव हो सकता है। इसलिए ही उन्होंने ग्राम स्वराज्य और पंचायती राज की वकालत की थी। ग्रामीण समाज में अपेक्षाकृत अधिक पितृसत्तात्मक असर होने के कारण महिलाओं की सामाजिक स्थिति भी काफी बेकार है। ऐसे में देश के सामाजिक-आर्थिक ढांचे को सुधारने और सत्ता में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से अप्रैल 1993 को संविधान के 73वें और 74वें संशोधन के अंतर्गत पंचायती राज एक्ट के तहत पंचायतों में 33 प्रतिशत सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित कर दी गईं। अपने घर में 'डिसीज़न मेकर' की जिस भूमिका से महिलाएं वंचित थी वह कमी यहां पूरी होगी और इस तरह पंचायत में प्रधान के रूप में महिला सशक्तिकरण का लक्ष्य भी पूरा किया जा सकेगा। 73 वां संविधान संशोधन ग्राम पंचायत में महिलाओं को आरक्षण तो दिला देता है और उन्हें सरपंच/प्रधान/मुखिया आदि के पद तक भी पहुंचा देता है पर ज़्यादातर महिला प्रतिनिधि व्यावहारिक तौर पर नाम मात्र की ही प्रतिनिधि होती हैं। इसलिए वर्तमान ग्रामीण समाज में महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता के बाधक तत्वों में कुछ खास सकरात्मक परिवर्तन नहीं दिखाई पड़ता है। महिलाओं को मिले अधिकारों एवं शक्ति का उपयोग महिलाएं आज भी पूर्ण रूप से नहीं कर सकती हैं क्योंकि वर्तमान पितृसत्तात्मक समाज इन अधिकारों का उपयोग अपने हाथों में लिए हुये है।

संदर्भ :-

Aadhunik Bharat Mein Jati. (2009). India: Rajkamal Prakashan Pvt. Limited.

Aggarwal, J.C. (2001). *Development and Planning of Modern Indian Education*. New Delhi: Vikas Publishing House.

Baruah, S. L. (1992). Status of women in Assam: with special reference to non-tribal societies. Omsons Publications.

Beteille, A. (1972). *Inequality and Social Change.* Delhi: Oxford University Press.

Burnett, P. (1973). Social change, the status of women and models of city form and development. Antipode, 5(3), 57-62.

Butler, J. (1986). Sex and gender in Simone de Beauvoir's Second Sex. *Yale French Studies,* (72), 35-49.

Culture and Society: 1780 – 1950. New York: Columbia University Press.

Danda, A. K. (1991). *Tribal economy in India*. Inter-India Publications.

Gangrade, K.D., "Adult suffrage and social change: chining status of a depressed castes: social change (March-June 1976) p. 3.

Heath, A. (1981). *Social Mobility.* London: Fontana Paperbacks.

Kumar, S. (1968). *Social Mobility in Industrializing Society.* Jaipur: Rawat Publications.

Lynch, O. M. (1968). The politics of Untouchability: A case from Agra, India, in structured change in Indian society. New York: Publishing Co.

Wing, A. K. (1994). Custom, Religion, and Rights: The Future Legal Status of Palestinian Women. Harv. Int'l. LJ, 35, 149.

कुमार, उमेश (2007) *आदिवासी महिलाओं का शैक्षणिक एवं सामाजिक आर्थिक अध्ययन.* दिल्ली: क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी

कुमार, राधा (2009). *स्त्री संघर्ष का इतिहास*. दिल्ली: वाणी प्रकाशन

खेतना, प्रभा (2003). *उपनिवेश में स्त्री*. दिल्ली: राजकमलप्रकाशन

जोशी, गोपा (2006). *भारत में स्त्री असमानता*. दिल्ली: हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय.

निरुपमा(2010). *नारी शिक्षा साधन और स्वास्थ्य*. नई दिल्ली: अनुपमप्रकाशन.

पाण्डेय, गया (2007). *भारतीय जनजातीय संस्कृति*. नई दिल्ली: कांसेप्ट प्रकाशन कंपनी.

प्रसाद, कमला (2004). *स्त्री: मुक्ति का सपना*. दिल्ली: वाणी प्रकाशन

यादव, राजेंद्र. (2006). *आदमी की निगाह में औरत.* दिल्ली: राजकमल प्रकाशन

रानी, आशु.(1197). *महिला विकास कार्यक्रम*. नई दिल्ली: विश्वभारती प्रकाशन.

सिंह, नमिता (2017). *स्त्री-प्रश्न*. दिल्ली: वाणी प्रकाशन

हसनैन, नदीम. (2004). *समकालीन भारतीय समाज*. लखनऊ: भारत बुक सेंटर

वैश्विक न्याय एवं नैतिक अभिप्रेरणा

अंजु*

anjmadhur101@gmail.com

यह लेख वैश्विक न्याय के भौतिक पक्ष अर्थात दूरस्थ समाजों के लिए संसाधनों की उपलब्धता या संसाधनों के वितरण की प्रक्रिया पर बहस करने के लिए नहीं लिखा गया है बल्कि वैश्विक न्याय को साकार करने हेतु व्यक्तियों में जिस मनोवैज्ञानिक अभिविन्यास (Psychological Orientation) व नैतिक अभिप्रेरणा (Moral Motivation) की आवश्यकता है उसे पर बहस करना इस लेख का उद्देश्य है। साथ ही साथ इस लेख में नैतिकता विभिन्न पहलुओं पर भी बहस की गई है।

ऐतिहासिक रूप से वैश्विक मानव समाज व इसके घटकों ने मसलन क्षेत्र, देश, प्रांत, जाति, समुदाय, समाज, परिवार व व्यक्ति इत्यादि ने विभिन्न काल खण्डों में जिन नैतिक मानकों का निर्माण किया व जिन प्रक्रियाओं से यह निर्मित हुए उन प्रक्रियाओं की जानकारी के बिना वैश्विक न्याय की अवधारणा के नैतिक संबल (Moral Support) की बात नहीं की जा सकती है। काल, पात्र व स्थान के साथ नैतिकता के पैमाने बदलते रहे हैं व बदल रहे हैं। वह मानक या प्रतिमान क्या थे, व उन्हें निर्मित करने वाली प्रक्रिया क्या थी, उस प्रक्रिया की भागीदार शक्तियां कौन सी थीं, इस बात को ठीक से समझे बिना और इसके प्रति संवेदना की अनुपस्थिति में वैश्विक न्याय के गैर भौतिक पक्षों पर चर्चा नहीं हो सकती क्योंकि वैश्विक न्याय की अवधारणा पर पिछले तीन दशक में जो चर्चा हुई है उससे हमें यह समझ में आया है कि वैश्विक न्याय के लिए कानूनी या सामाजिक बाध्यता के विकल्प के स्थान पर हम इसकी नैतिक न्यायसंगतता की ओर बढ़ चले हैं। वर्तमान में वैश्विक न्याय को लेकर जो सैद्धांतिक व दार्शनिक चर्चा हो रही है उसका उद्देश्य वैश्विक न्याय के लिए नैतिक संबल की रूपरेखा तैयार करना है।

वैश्विक न्याय की अवधारणा कांट के दर्शन से पैदा होती है। कांट ने 'Perpetual Peace' नामक पुस्तक लिखी, जिसमें कांट ने एक साँझे विश्व संगठन की बात की। कांट सामाजिक समझौता वादी थे। उन्होंने समझौते के आधार पर वैश्विक समझौता की बात की। कांट के अनुसार इस प्रकार की संस्था वैश्विक शांति के लिए काम कर सकती है। कांट को आधुनिक वैश्विक संस्थाओं के दार्शनिक पिता के रूप में देखा जा सकता है।

रॉल्स ने सामाजिक समझौता सिद्धांत को पुनर्जीवित किया। रॉल्स स्वयं कांटवादी हैं। रॉल्स ने कांट के ही दर्शन के एक पक्ष से प्रेरित होकर 'ए थ्योरी ऑफ जस्टिस' का प्रतिपादन किया। रॉल्स ने न्याय को दार्शनिक अन्वेषण के केंद्र में स्थापित किया।

* **शोधार्थी, राजनीति शास्त्र विभाग, दिल्ली यूनिवर्सिटी, दिल्ली**

थॉमस पोगे व चार्ल्स बिट्स ने जब वैश्विक न्याय की बात की तो उन पर कांट व रॉल्स दोनों का गहरा प्रभाव था। कांटवादी दर्शन के जो मूल तत्व हैं जैसे सार्वभौमिकता (Universalism), व्यक्तिवाद (Individualism), नैतिक नियम (Moral Laws), व्यक्ति का अपने आप में साध्य होना इत्यादि ही वैश्विक न्याय के भी मूल तत्व हैं। कांट के दर्शन में मानवीय तर्क का केंद्रीय स्थान है परंतु वैश्विक न्याय के विषय में हम ऐसा नहीं कह सकते हैं। वैश्विक न्याय के विषय में इसकी स्थापना नहीं की जा सकती है। क्या तर्क के माध्यम से लोगों को यह समझाया जा सकता है कि उन्हें दूरस्थ समाजों के लिए त्याग करना चाहिए? क्या तर्क के माध्यम से उन्हें वैश्विक न्याय की स्थापना हेतु दृढ़ व सक्रिय किया जा सकता है? और यदि ऐसा नहीं किया जा सकता है तो यह स्थिति अपने आप में आधुनिकता के दर्शन को चुनौती देती है और हमें इसका समाधान तलाशने की आधुनिकता के दर्शन से बाहर निकलना पड़ सकता है। लेकिन यदि हम उत्तर आधुनिकता में जाएं तो वहां सार्वभौमिकता (Universalism) के लिए कोई स्थान नहीं है, न ही महा आख्यान (Metanarrative) के लिए कोई स्थान है। वैश्विक न्याय की अवधारणा के साथ यह दार्शनिक चुनौतियां जुड़ी हुई हैं।

नैतिकता (Morality)

आधुनिक चिंतन के बाहर यह माना जाता था कि सत्य अथवा यथार्थ के ज्ञान का स्रोत सहज बोध है। आधुनिकता ने इसे गंभीर चुनौती दी। आधुनिकता ने इस मान्यता को स्थापित किया कि सत्य अथवा यथार्थ का ज्ञान व्यक्ति से स्वतंत्र है जो सहजबोधगम्य नहीं है बल्कि तर्कबोधगम्य है आधुनिकता जो की तार्किकता को केंद्र में लेकर चलती है उसने नैतिकता के लिए जमीन तैयार की। नैतिकता को विस्तार से व्याख्यान्वित करते हुए कांट ने बंधनकारी नैतिकता (Deontological Morality) की बात की। इसमें उन्होंने नैतिकता को स्वभाविक मूल्य के रूप में व्याख्यान्वित किया।

कांट का नैतिक दर्शन तीन चीजों पर आधारित है। पहला, सद्इच्छा अर्थात् 'Good will', दूसरा नैतिक कर्तव्य (Moral Duty) व तीसरा categorical imperative। कांट ने नैतिकता की जो अवधारणा दी उसे सामान्यतः उपयोगितावादियों के साथ तुलनात्मक रूप से देखा जाता है। उपयोगितावादियों के लिए नैतिकता उपयोगिता से जुड़ी है जिसमें परिणाम के आधार पर कुछ करने या ना करने का निर्णय लिया जाता है। कांट के अनुसार कोई कार्य करने या ना करने का निर्णय सद्इच्छा से अभिप्रेरित होना चाहिए और उसी के हिसाब से कार्य होना चाहिए। एक तरफ जहां उपयोगितावादी नैतिकता को साधन मानते हैं वहीं कांट नैतिकता को अपने आप में मूल्य मानते हैं। उपयोगितावादियों का मानना है कि समाज में एक शुभ की परिकल्पना होनी चाहिए। कांट उपयोगितावादियों से इसलिए भिन्न है क्योंकि वह कहते हैं कि कार्य को कर्तव्य से अभी प्रेरित होना चाहिए न की शुभ के विचार से। कांट सद् इच्छा की तुलना दूसरी कई चीजों से करते हैं जैसे खुशी आनंद साहस परिणाम इत्यादि और इन सब में वह कर्तव्य तथा सद् इच्छा को श्रेष्ठ मानते हैं।

Categorical Imperative और Hypothetical Imperative में अंतर

कांट के अनुसार categorical imperative हमेशा सार्वभौमिक (universal) होता है. कांट इसे शुद्ध तर्क कहते हैं। यह शुद्ध तर्क कर्तव्य का स्रोत होता है। Categorical imperative का अर्थ होता है कि अपनी इच्छा, भावना इत्यादि को अनदेखा कर अपनी सद् से इच्छा से अभिप्रेरित होते हुए कर्तव्य आधारित कार्य करना ही नैतिकता है। Category imperative के अंतर्गत कर्तव्य से अभिप्रेरित होकर किया जाने वाला कार्य सदैव तर्क पर आधारित माना गया है। यह बदलता नहीं है। इसलिए यह सार्वभौमिक है। कोई भी कार्य करने से पहले यह विचार करना चाहिए कि सभी मनुष्य द्वारा यही कार्य किए जाए तो प्राप्त होने वाली स्थिति उचित होगी या नहीं। यदि व्यक्ति को वह स्थिति उचित लगती है तो वह उस कार्य को कर सकता है क्योंकि वह नैतिक है परंतु यदि ऐसा नहीं है तो वह कार्य अनैतिक हो गया। एक ही नियम को प्रत्येक तार्किक व्यक्ति पर लागू करके कार्यों की नैतिकता व अनैतिकता का निर्धारण किया जाता है।

वही hypothetical imperative सदैव विशेष (particular) होता है। यह Instrument तार्किकता के हिसाब से कार्य करता है। यह बदलती हुई इच्छाओं, भावनाओं व झुकावों पर आधारित होता है। इसलिए यह कभी भी सार्वभौमिक (universal) नहीं हो सकता। कांट के अनुसार नैतिकता categorical imperative पर आधारित है। Hypothetical Imperative कभी नैतिक नहीं हो सकता। यह कभी किसी विशेष स्थिति में नैतिक हो सकता है परंतु यह नैतिकता की केंद्रीय भूमिका में नहीं आ सकता। कांट के अनुसार यदि कोई तर्क किसी एक स्थिति में नैतिक लग रहा है तो वह बाकी स्थितियों में भी नैतिक लगना चाहिए। नैतिकता में कोई अपवाद नहीं हो सकता। कांट की यहां पर स्थिति जानने आलोचना की जा सकती है। कांट यहां एक सीमा तक Absolutist नजर आते हैं।

कांट के अनुसार जो व्यक्ति स्वायत्त व तार्किक हो, केवल वही नैतिकता के दायरे में है। जो स्वायत्त व तार्किक नहीं है उनकी नैतिकता व अनैतिकता कांट के चिंतन का विषय नहीं है।

अभिप्रेरणा का प्रश्न

हम विभिन्न मुद्दों व अवधारणाओं जैसे वैश्विक न्याय वह इससे जुड़ी दार्शनिक समस्याएं अथवा चुनौतियों तथा नैतिकता इत्यादि पर विस्तार से चर्चा कर चुके हैं अब हमें उस मूल उद्देश्य की ओर बढ़ना होगा जिसके लिए यह लेख लिखा गया है। अब हम इस अध्ययन से मिले उन बिंदुओं को यहां चिन्हित कर प्रकाश में लाना चाहेंगे जिनके कारण हमें लगता है कि हम वैश्विक न्याय जैसी अवधारणा को साकार करने के लिए पर्याप्त रूप से नैतिक अभिप्रेरणा नहीं जुटा पा रहे हैं।

जब हम वैश्विक न्याय व नैतिक कार्यों के पीछे की अभिप्रेरणाएं जैसे आंतरिक इच्छा (Intrinsic Desire), विश्वास (Belief), भावनाएं (Emotions), अच्छा चरित्र (Good Character), गुण (Virtue), शुभ की इच्छा, सहानुभूति (Empathy or Sympathy) और कर्तव्य की अभिप्रेरणा (Motive of Duty)

इत्यादि को एक प्रकाश में देखते हैं तो हमें लगता है कि वैश्विक न्याय को साकार किए जाने के लिए किए जाने वाले कार्य या कार्य करने के बारे में सोचने के पीछे जो सबसे बड़ी व प्रबल नैतिक अभिप्रेरणा काम करती है वह कांटवादी दर्शन के द्वारा प्रदत्त 'कर्तव्य की अभिप्रेरणा' नहीं बल्कि सहानुभूति का भाव है जो कि अपने आप में वैश्विक न्याय के सरकार होने की राह में एक बड़ी बाधक है। हमें वैश्विक न्याय में योगदान 'दान' के सामान लगता है। फिर सहानुभूति अपने आप में स्थिर भाव है ही नहीं। हमने देखते हैं कि किस प्रकार टेलीविजन पर वंचितों को देखकर हमारी सहानुभूति जागती है। फिर टेलीविजन पर से उनके हटने पर एकाएक अथवा धीरे-धीरे वही सहानुभूति गायब भी हो जाती है क्योंकि सहानुभूति भावनाओं व इच्छाओं से स्वतंत्र नहीं होती है। इसलिए इस बात की पूरी संभावना हर समय बनी रहती है कि व्यक्ति के निजी जीवन से संबंधित भावनाएं व उन भावनाओं में आने वाला परिवर्तन विश्व के वंचितों के प्रति उनकी सहानुभूति पर हावी हो जाए। इसके अलावा सहानुभूति के संदर्भ में व्यक्ति की संस्कृति व विकासात्मक मनोविज्ञान भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके अतिरिक्त सहानुभूति का भाव ए तार्किकता तथा हिंसा भी पैदा करने में अपनी पूरी भूमिका निभा सकता है।

वैश्विक न्याय के लिए नैतिक अभिप्रेरणा से जुड़ी जो दूसरी समस्या नजर आती है वह यह है कि व्यक्ति अपने कार्य के लिए जिस परिणाम की अपेक्षा करता है उसमें वह देखता है कि क्या वह परिणाम पारितोषजन्य (Rewarding Consequences) वाला है? यह परितोष कई रूपों में हो सकता है। जैसे किसी व्यक्ति की आत्म अवधारणा या सकारात्मक भावना का निर्धारण। उदाहरण के लिए व्यक्ति कई बार ऐसी स्थिति में होता है जहां वह कार्य करें या बिना किसी प्रतिक्रिया के चला जाए। यदि किसी के जीवन में सहायता करना या सामान्य रूप से नैतिक कार्य करना एक महत्वपूर्ण नैतिक मूल्य है तो वह व्यक्ति छोड़कर जाने की जगह काम करेगा। इस कार्य का परिणाम सकारात्मक परिणाम होगा। इससे उस व्यक्ति की आत्म अवधारणा का निर्धारण व संतुष्टि हो रही है। दूसरी सकारात्मक भावना, कोई शक्तिशाली कार्य कर जैसे जरूरतमंद लोगों की सहायता कर स्वयं में ही मजबूत महसूस करने की होती है। (Sense of Power)

क्या हो यदि किसी पारितोष का कोई अवसर ही ना हो? कोई सकारात्मक आभास न हो? आत्म अवधारणा की संतुष्टि न हो? ऐसी स्थिति में लोग पारितोषीय अभाव (Incentive Deficit) में चले जाते हैं और इस स्थिति में वह वैश्विक न्याय के लिए नैतिक रूप से अभिप्रेरित नहीं हो सकते।

निष्कर्ष: वैश्विक न्याय हेतु सर्वश्रेष्ठ अभिप्रेरणा के रूप में नैतिक अभिप्रेरणा

इस लेख में हुई समस्त चर्चा के पश्चात वैश्विक न्याय को साकार करने के लिए विभिन्न नैतिक अभिप्रेरणाओं में से जो सबसे सटीक व कारगर नैतिक अभिप्रेरणा लगती है वह है कांट द्वारा प्रायोजित 'कर्तव्य की अभिप्रेरणा' (Motive of Duty)। क्योंकि हम लोग वैश्विक न्याय हेतु किसी कानूनी बंधन में नहीं बंधे हैं। इसलिए यदि लोग कर्तव्य के अभिप्रेरणा से प्रेरित होंगे तो हमें लगता है कि हम वैश्विक न्याय को साकार होता

देख पाएंगे। इसके अतिरिक्त व्यक्तियों के विश्वास (Belief), भावनाओं मूल्य व गुण (Values and Virtues), जानकारी में परिवर्तन व उचित दिशा में संवर्धन कर उनमें कर्तव्य बोध (Sense of Duty)को बढ़ावा दिया जाना चाहिए व उन्हें Socio-Moral Agency के रूप में सक्रिय किया जाना चाहिए। इन सब सांझे प्रयासों के माध्यम से वैश्विक न्याय स्थापित करने की दिशा में सकारात्मक कदम उठाए जा सकते हैं।

Bibliography:-

John M. Doris & the Moral Psychology Research Group. (2010). *The Moral Psychology Handbook*. New York: Oxford University Press.

Tiberius, Valerie. (2014). *Moral Psychology: A contemporary Introduction*. New York: Routledge.

Karin Heinrichs, Fritz Oser, Terence Lovat & Terry Lovat (Eds.). (2013*). Handbook of Moral Motivation: Theories, Models, Applications*. Volume 7 of Moral development and citizenship education. Sense Publishers.

Jonathan Jacobs. (2008). *Dimensions of Moral Theory: An Introduction to Metaethics and Moral Psychology*. Wiley-Blackwell Publishing.

Paul Bloom. (2017). *Against empathy: the case for rational compassion.* Bodley Head publisher.

Mary Gregor and Jens Timmermann. (Eds.). (2012). *Kant: Groundwork of the Metaphysics of Morals*. Cambridge University Press.

NOTES FOR AUTHORS

PADCHINHA: Multidisciplinary Peer Reviewed & Refereed Journal

1. Submissions

Authors should send all submissions and resubmissions to padchinhahindi@gmail.com or gandhikhadi@gmail.com some articles are dealt with by the editor immediately, but most are read by outside referees. For submissions that are sent to referees, we try to complete the evaluation process within one month. As a general rule, Padchinha operates a double-blind peer review process in which the reviewer's name is withheld from the author and the author's name is withheld from the reviewer. Reviewers may at their own discretion opt to reveal their name to the author in their review, but our standard policy is for both identities to remain concealed.

Absolute technical requirements in the first round are: ample line spacing throughout (1.5 or double), an abstract, adequate documentation using the author-date citation system and an alphabetical reference list and a word count on the front page (include all elements in the word count). Regular articles are restricted to an absolute maximum of 10,000 words, including all elements (title page, abstract, notes, references, tables, biographical statement, etc.).

2. Types of articles

In addition to Regular Articles, Padchinha publishes the Viewpoint column with research-based policy articles, Review Essays, Book Review and Special Data Features.

3. The manuscript

The final version of the manuscript should contain, in this order:

(a) title page with name(s) of the author(s), affiliation

(b) Abstract

(c) Main text

(d) List of references

(e) Biographical statement(s)

(f) Tables and figures in separate documents

(g) Notes (either footnotes or endnotes are acceptable)

Authors must check the final version of their manuscripts against these notes before sending it to us.

The text should be left justified, with an ample left margin. Avoid hyphenation. Throughout the manuscripts, set line spacing to 1.5 or double.

The final manuscript should be submitted in MS Word for Windows.

4. Language

Padchinha is a Bilingual Journal, i.e. English and हिंदी. The main objective of an academic journal is to communicate clearly with an international audience.

Elegance in style is a secondary aim: the basic criterion should be clarity of expression. We allow UK as well as US spelling, as long as there is consistency within the article. You are welcome to indicate on the front page whether you prefer UK or US spelling.

5. The abstract

The abstract should be in the range of 200-300 words. For very short articles, a shorter abstract may suffice. The abstract is an important part of the article. It should summarize the actual content of the article, rather than merely relate what subject the article deals with. It is more important to state an interesting finding than to detail the kind of data used: instead of 'the hypothesis was tested', the outcome of the test should be stated. Abstracts should be written in the present tense and in the third person (This article deals with...) or passive (... is discussed and rejected). Please consider carefully what terms to include in order increasing the visibility of the abstract in electronic searches.

6. Title and headings

The main title of the article should appear at the top of pg. 1, followed by the author's name an institutional affiliation. The title should be short, but informative. All sections of the article (including the introduction) should have principal subheads. The sections are not numbered. This makes it all the more important to distinguish between levels of subheads in the manuscripts – preferably by typographical means.

7. Notes

Notes should be used only where substantive information is conveyed to the reader. Mere literature references should normally not necessitate separate notes; see the section on references below. Notes are numbered with Arabic numerals. Authors should insert notes by using the footnote/endnote function in MS Word.

8. Tables

Each Table should be self-explanatory as far as possible. The heading should be fairly brief, but additional explanatory material may be added in notes which will appear immediately below the Table. Such notes should be clearly set off from the rest of the text. The table should be numbered with a Roman numeral, and printed on a separate page.

9. Figures

The same comments apply, except that Figures are numbered with Arabic numerals. Figure headings are also placed below the Figure. Example: Figure 1.

10. References

References should be in a separate alphabetical list; they should not be incorporated in the notes. Use the APA form of reference.

11. Biographical statement

The biosketch in Padchinha appears immediately after the references. It should be brief and include year of birth, highest academic degree, year achieved, where obtained, position and current institutional affiliation. In addition authors may indicate their present main research interest or recent (co-)authored or edited books as well as other institutional affiliations which have occupied a major portion of their professional lives. But we are not asking for a complete CV.

12. Proofs and reprints

Author's proofs will be e-mailed directly from the publishers, in pdf format. If the article is co-authored, the proofs will normally be sent to the author who submitted the manuscripts. (Corresponding author). If the e-mail address of the corresponding author is likely to change within the next 6–9 months, it is in the author's own interest (as well as ours) to inform us: editor's queries, proofs and pdf reprints will be sent to this e-mail address. All authors (corresponding authors and their co-authors) will receive one PDF copy of their article by email.

13. Copyright

The responsibility for not violating copyright in the quotations of a published article rests with the author(s). It is not necessary to obtain permission for a brief quote from an academic article or book. However, with a long quote or a Figure or a Table, written permission must be obtained. The author must consult the original source to find out whether the copyright is held by the author, the journal or the publisher, and contact the appropriate person or institution. In the event that reprinting requires a fee, we must have written confirmation that the author is prepared to cover the expense. With literary quotations, conditions are much stricter. Even a single verse from a poem may require permission.